

137
3(A-B)

ग्रंथनाम,

अथ

वृत्ता

(A) "सन्निपातकलिका" ।
Sannipat Kalika

937
3(A-B)
विषय
वैद्यशास्त्रम् ।

(B) "सुश्रुतसंहिता" । सुश्रुतमुनिः । वैद्यशास्त्रम् ।
Su Shrut Sankhita

संनि

६

१३७
३५५

इति सन्निपातकलिकासंपूर्णः॥
गुरुओपनामकभिषकूरामभट्टस्य पुस्तकं

[illegible]

137
347

मूल
ति
॥३॥

क्रोशः॥३॥ शृती वरुण चेत की च नडा गी भू निंब भाडी नि शा ती ता पुष्कर चित्रैः स च वि
का भुंगी कणा कदु लैः॥ धात्री दार नि शीत वैः सम र्वै यो धी चै बो मि श्रि ते॥ रे मिः
कृत ति कं ठ कु ड्वे म चिर को ~~अथ~~ क पा य तः॥३५॥ अन पन प ति कं ठ कु ड्वे कृ षा पा मा तै नी जे
न स्यः॥३६॥ अथ छे स निल स हि ताः त्रि कं ठ कु ड्वे नी नि न स्यः॥३७॥ इति कं ठ कु ड्वे॥ अथ क र्णिक
प्र ना क शु ति म्ना नि कं ठ ग हां गं य था श्या स कं प वा से क प्र षो वं॥ अं स्वा प क र्णो ति क र्णो वि शो
थं गु धाः क र्णिकं क षु सा धां व दं ति॥३८॥ अथ क र्णिकः क षु सा ध्यः॥ र तः श्रा वो ड लो का वि धू त
पा न प्र श श्य ते॥ क र्णिकं क र्णिकं श्रा वो मा यु वे र वि शार दे॥३९॥ रा स्ना वृ ह ति प ध्या घ न वा
का शो ष पु ष्प स नी॥ भृ गी या त्रि भा डी का थ कं ठि क र्णो ना त्वा॥४०॥ म रि च द री मु ल रा स्ना फ ल
प क णा म हो ष धै मि श्रः॥४१॥ निंब यु तः पी तः क र्णिकं क र्णो ना त्वा॥४२॥ इति वि शो लो क वि धू त नि शा
कुर दार क षु र वि दु ष्ये॥ इति क र्णो ना त्वा॥४३॥ इति मा हा क र्णिकं क र्णो ना त्वा॥४४॥ इति वि दु ष्ये पु ष्प र से ति
इति वि दु ष्ये पु ष्प र से ति॥४५॥ अथ नं य ति क र्णिकं क र्णो ना त्वा॥४६॥ इति वि दु ष्ये पु ष्प र से ति॥४७॥

ल
धा
॥३॥

दश रा त वि रे दु ष्या रु ष्का र त वृ स मे त द ह न तु दि न कुं पी कु ड्वे सी स य तं अप न य ति सु र व सि दिं चा
आ रं ध्र प्र पो गा त ल ना म रि च क ला चूर्ण यु र्त्त ना न स्य म मि धी वि चं सं को रि॥ इति क र्णो को अ सा
ध्ये॥४८॥ अथ नं य ति क र्णिकं क र्णो ना त्वा॥४९॥ अथ नं य ति क र्णिकं क र्णो ना त्वा॥५०॥ अथ नं य ति क र्णिकं क र्णो ना त्वा॥५१॥
ष वा नु सृ ज ति जि वी त मा शु स भ म दु क॥५२॥ दायं बु दो स्ती क र्णो ना त्वा॥५३॥ इति वि शो लो क वि धू त नि शा
वि द ध्या ते ज्व र सं नि पा ते नि श्च्ये ते ने पु री वि बो ध ना र्थं॥ अथ नं य ति क र्णिकं क र्णो ना त्वा॥५४॥ इति वि शो लो क वि धू त नि शा
अप न य ति चि त्त मो ह ज्व र मु ग्रं सं नि पा तो लं॥५५॥ इति वि शो लो क वि धू त नि शा
र सो न सु रा जि का मि॥ ने चो ज नं च ल व ना म पि य ती श्या न स्यं व या म रि च हिं गु म धु के रा रैः॥५६॥ म रि च तु र्ग
गं धा मा ग पी शिं पु ला वं ल भु न म धु क वि श्रा शि गु मु ल द्रु को षा म्ना न स लि ल पि रः त स मं डा र वि दिः स मु दि
त इ ति न स्यो भ र म ने न प्र मा धी॥५७॥ इति नं य ति क र्णिकं क र्णो ना त्वा॥५८॥ अथ र नं वी॥ र त वि धी ज्व र वि मी र षा मो ह शूल
रि सार हि का ध्या न भ म ज द व थु श्रा स सं हा प्र णा री॥ इति मा जि का चि क र त नु मं ड लो षा न रु षा
र क र्णो वी नि ग दी त इ ति प्र णं तं प्र सि द्ध॥५९॥ इति नं य ति क र्णिकं क र्णो ना त्वा॥६०॥ इति वि शो लो क वि धू त नि शा
स हि ता पि क णा लो हि त म द्वा मा शु ह क ति॥६१॥ ने सो दा म्ना उ म पु ष्पा ल र स डु वी र से स थो॥ अथ मा लि

पल्लोः श्रीधर उपायः
 च वलं डो वीना सा प्रसूत रत्न डि ॥ ५५ ॥ जटाय पद कपट के मने पो दुव जा वि वारि म ध के ॥
 मपल्लोः मधुनि बल रुण च दे न के च धि ते सुर क ह रं स लिल ॥ ५५ ॥ क जे शि मे ख ना सा से र ते श्राव
 वी ३ क रा ति य ॥ रत्न की ब चि सा ध्या स नि पा तो के व ज्य रे ॥ ५५ ॥ इति रत्न की वी ॥ ३ ॥ अथ प्रपन ॥ क प का
 ता ४ प्रलाप परिपविन दु पि डा र्ग क प्र ता प प व मा न परि त चि त्त ॥ प्र हा प्र ना री वि क ल प्र उ रा प वा र
 ति ५ शि प्रं प्र या पि त पा ता प व रि द प्र ला पि ॥ ५५ ॥ त म र तु सा उ ति व ने ब ला का रं कु ला व ने य द य ॥
 वा मि ति व दे नो नि य स या ज्यो वि ष गु त मे ॥ ५७ ॥ न ग र तु रा ग रां धा प वे ट रं ख पु ये नि द रा वि र प चि
 ज भा र ती भू त के री ॥ ज ल धा र कृ त मा ल श्वे त नि गी स नी भ्या म प ह रि क षा यः पी त मा न प्र ला पि ॥ ५८ ॥
 ज ल ध र द र मू लि वारि भुं गे सं मे तं म ल य ज घ न सा र वा स र्क प वे ट च ॥ स म व र ण घृ ता खं का थ शं क ष ॥ ५९ ॥
 यो य प न य ति नि रं डी पी त मा न प्र ला पि ॥ ५९ ॥ इति प्र ला पि कः ॥ अथ जि हा कः ॥ अथ स न की स प रि ता प वि ह लः
 न ठि ग के र क वृ तो च जि हि का ॥ ब धि र मु क्य ब ल ह नि ल दौ गे भू ति क र त र सा ध्य जि ह्व कः ॥ ६० ॥ जि ह्व कः असा
 ध्यः ॥ ॥ सिं हि ता रा पु न्ने क रे स क रू के रा स्ना ग डू चि यु ते भो डी के व र भुं गी ना री ठि स मे दु स री वा स
 प ने ॥

॥ ४ ॥

क्रि पा क मे जि ॥ भृं गी च न वा वा स पु क्क र ज हा भा र्ती रा ठि सिं हि का क्का थं पा न वि धा न व र क फ
 ह रो भि न्ना स वि धं स कः ॥ ६१ ॥ अथ जि हा मूल पु क्क र ज हा भा र्ती रा ठि सिं हि का क्का थं पा न वि धा न व र क फ
 वि स न वा ता रि भे व रा शि भा र्ती या स मृ ता व रु ष क र क री गो मु त्र से यो जी तः ॥ ६२ ॥ भृं गी वा
 पु न ने वा वि र जि रा द्यु तः क षा यो ह रि सा नि न्ना स ग द क प ज्य र य तं नि स री वं पा न तः ॥
 ॥ ६३ ॥ अं जि षु सिं हि बि ल्ब व रु ल र ठि भुं गे कं ज जि तं ज यं ति धि ह ति दू यो ष ण क षा क्का थं रं
 गु सिं दू पि वे नू यः प्रा तः प्र नि धा य ल री त ग दं ज्यो त मं सं नि धे त स्या भु प्र दं मं प्र या ति
 स ह सा स र्गो ग ले या ध यः ॥ ६४ ॥ ए उ र नि स लिल यु क्तं सिं हि का श्री क ल प्र व र ल न ग पा ठा नि चं
 ब पा षा ण ने दे ॥ प व न रि पु ज रा वि स यु तः क र व प्र ति धि न म प ले ति नि न्ना स मू ले ॥ ६५ ॥ थ
 भा र्ती भृं गी नि ब नि ब र्ध न क रू क व या यो ष वा सा वि रा ला रा स्ना नं ता प र ति सूर त र र ज
 नि मा र लो रू ट का निः ॥ अं हि दा विं गी दु जी त वृ दे ति वि षो पु क्क र ज य मा णे यो धि पा ठा
 क ल मे जि फ ले र ठि यु ते क ल्प त सु ल्प वा ने ॥ ६६ ॥ कौ थो दू जि हा ना मा य धि क र री मि

॥ ५ ॥

४३

३८

पीतं किं कृत्वा रिक्तावति कां प्रियं चामि श्री तं प्रोक्तं वैश्वामनसि दुमु निविशन्नि निविशंश्च तं ॥ ५५ ॥
 सुरतरुकरनिबेस्तपाजपटो लिङ्गनि युगुल विश्वासि हि का पुष्पा गङ्गे ॥ सलिले च तनु उच्यते ॥
 नैसा दुर्मेव प्ररुमयति कषायो डिह्म कं वरसा ॥ ५६ ॥ तिष्ठते द्रव्यैः सलवणे मत्तुलिं ग रसो निते ॥
 डिह्म यो मुखकृत्वा पाकह तिते न ह न्ये तं ॥ इति डिह्म वे ॥ अथा विन्यासाः ॥ दोषत्रयं सिध्य
 मुखं च निद्रा वै कल्पे निश्चये तनूति ववाचः ॥ बल प्रणा शः श्वसनं निराधो विन्यास उक्त सच
 मृदु कल्पः ॥ ५७ ॥ राम ठ नागर सहितं वरं गर सले दि बु दिमान् प्रातः ॥ अथ कृत्वा तिते स
 हितं न वति सुखो दो धनं तस्यः ॥ ५८ ॥ लवणम रिच कृत्वा भूत के रिम धू के म सैण मति
 मृदिल कोम निरुज न स्पः ॥ प्रकटय तिवि तिर्जि दु नि जा रं च तु किं कल करण बो ध बि
 दुभि दि प मा नेः ॥ ५९ ॥ लभ्यते म रिच कृत्वा मा रि मे धो ग रं धा भु क व स क ल बि ड सा ड म
 मुत्र वि ॥ कफ पवन विकारे सले सज्ञा प्र बो धे ग दित म ग द वि किं ने ज यो रं ज नं स्यात् ॥
 ॥ ६० ॥ स ज्ञाप स्प न जा य त् च रण यो दु दु समा द ह्य ते भालो हे रं लो क या हित कृ ते तव

द्या

तान् स निपा निह मां खल श्वा सादि हि क्वा ज स न ग द र जा ध्या न वि धं स का रि उ रू तं १ ग न्वा
 वा तान् ग ल उ ग द र ज स र्वे संधि म् य ति मा तं गै धं नि ह मा न मृ ग प ति स द्वा रं ग जाले स द्वा रं ॥ ७१ ॥
 दि यो रं हि ज्ये जा ज्यो न त मि नि रि स्य दि र स र्जो मो जो त्वा लो वे रं ह ति धु मु ला स न मि ति स र
 सं रि ज्ये स द्यः सु ता रु ॥ ७५ ॥ इति सं नि पा नो क लि क्ता स म्पु ॥ वे ला ल वं त म हि के न के
 जा ति व जे जा ती फ ल स म ल वं वि धि ना वि द्यु ण्ये ॥ गो दु ग ध पा चित मि दं म रि च प्र मा णा का यो ज हि
 भ व ति शु क्रे वि बं ध का रि ॥ १ ॥ अ मा ति सार म थ प क्म पि ह ना ना र्क्ता ति सार म प हं ति शि वं
 दि ॥ ७७ ॥ ई श्व रा ने नि त शु क स्तं भ न गु टि का अ मा ति सार म मु क्त र क्ता ति सार वि धं स म्पे द र
 गु टि का मि दि ॥ ७८ ॥
 यलादि

प्रवीणा रि। मो क हं तु। धातु नि श्रये स्व स ५४

सुधुता रा हिता

137 (B)

माचयु न

था रुद्रेण यत्तस्य शिरः छिन्नमिति ततो देवा अश्विना वनिगम्योचुः ॥ न गवं तौ नः श्रेष्ठतमौ युवानविष्यथो यत्तस्य न व
शिरः संधातव्यमिति तावच्चतुरेवमस्त्विति। अथ तयोरर्थे देवा इन्द्रं यस्तनागेन प्रासादयन्तात्यां यत्तस्य शिरः संधि
तमिति अष्टास्वपि चायुर्वेदतंत्रे देवाधिकमाशु क्रिया करणात् ॥ यंत्रशस्त्रक्षारानि प्रणिधानात् ॥ सर्वतंत्रसामान्या
च ॥ तदिदं शीघ्रं तं पुण्यतमं स्वर्ग्यं यशस्यं आनुष्णं वृत्तिकरं चेति। ब्रह्मो प्रोवाच। तस्मात्प्रजापतिरधिजगेत्तस्मादश्विना
वश्विन्यामिन्द्रः इन्द्रादहं मया त्विह प्रदेयमर्थिन्यः प्रजाहितहेतोः ॥ नेवतिचात्र ॥ अहं हि धन्वंतरिरादिदेवो जरा रुजा
मृत्युहरो नराणां ॥ शक्यं मे ह त्वास्त्रवरं गृहीत्वा प्राप्नोस्मि गन्धर्वयद्रहोपदेष्टुं ॥ १ ॥ अस्मिन्नुशास्त्रे पंचमहाभूतशरीरि
समवायः पुरुष इत्युच्यते ॥ तस्मिन् क्रियासोधिष्ठानं ॥ कस्माच्चोक्तस्यैव विधात् लोको हि द्विविधः ॥ स्थावरो जंगमश्च ॥ द्वि
विधात्मक एवात्रैवः सौम्यश्च तद्रूपस्त्वात् ॥ पंचात्मको वा तत्र चतुर्विधो भूतनामः ॥ स्वदेजं जरा युजोऽजोऽग्निजं संसृ ॥ त
त्रैव पुरुषः प्रधानं ॥ तस्योपकरणं मन्यतस्मात्पुरुषो धिष्ठानं ॥ तदुःखसंयोगात् व्याधय रक्तच्यं ते ॥ ते चतुर्विधा आगंत
वः शारीरा मानसा स्वानाविकाश्चेति ॥ तेषां गंतवोऽनिघातविषयनिमित्ताः ॥ शारीरास्त्वन्यत्तप्लवाधवा तर्कपित्तशो

संस्तु
संस्तुति

तस्मात्

प्रसिद्ध

पृथिव्या

आत्म

वीची साधु २ क्रियास्थानं

कमिदेशाद्याः पार्ति मर्त्या दपोठजा ठडि जस्तस्य
प्रात्रजो हलकुडादिप्रहारः गलचे भूकचमिपुटकैतजरायु जातत्रचुसो
स्थावरादयः जपधानं जरा पुजोपुरुष प्रधानं व्याधय रक्तच्यं

...न चैव ...
...दिक्कित्तादिना ...
...दनादि ...

एतदिसंस्थितानामुपशमनार्थं। कायचिकित्सासर्वो गसंस्थितानां चररक्तपित्तशोषोभादापस्मारउष्टमेहातीसा
रादीनामुपशमनार्थं च। नूतविद्यानाम। देवासुरगंधर्वयक्षरक्षः पितृपिशाचनागग्रहादिभ्यः सृष्टचेतसां शौतिकर्म
वलिहरणादिग्रहोपशमनार्थं च॥ कौमारतृत्यं नामः॥ कुमारचरणंधात्रीक्षीरदोषसंशोधनार्थं दुष्टस्तन्यग्रहस
मुष्णानां च व्याधिनामुपशमनार्थं च। अगदतंत्रं नाम। सर्पकीटभूतादिविषमूषकस्यावरविषयजनार्थं विषसंयो
गोपशमनार्थं च रसायनतंत्रं। वयस्थापनमायुर्मेधावलकरंजरोगोपहरणं समर्थं च। वांजीकरणतंत्रं अल्पदुष्टक्षी
णविशुद्धैरेतसां शुक्राप्पायनप्रसादोपचयजनननिमित्तं ग्रहर्षजननार्थं च॥ एवमयमायुर्वेदोऽष्टांगः समुपदिश्य
ते। अत्रकस्मैकिमुच्यतामिति। तजुचुः। अस्माकं सर्वेषामेकं वशोऽप्यज्ञानमलं कृत्योपदिशतु नगवान्॥ सहवाचैवमस्ति
ति॥ तजुचुः। अस्माकं सर्वेषामेकं मतीनां मतमनिसमीक्ष्य सुश्रुतो नगवंतं प्रत्यस्मै चोपदिश्यमाने वयमप्यवधार
यिष्यामः॥ सवाचैवमस्ति। तं नगवानुवाच। अथैवमुश्रुत्वा युर्वेदप्रयोजनं व्याधुपसृष्टानां व्याधिपरि
मोक्षः॥ स्वस्वस्पर्शेण च। आयुरस्मिन्विद्यते अनेन वा युर्वेदतीति आयुर्वेदः॥ तस्यांगं वरमाद्यं प्रत्यक्षागमोनुमानो
पमानैरविरुद्धमुच्यमानमवधारय। तदेतद्व्यांगं प्रथमं प्रागनिधोतं ब्रह्मसंरोहान्॥ यज्ञशिरःसंधानाच्च॥ श्रयतेहिय

13/10

वत्स

श्रुता म उती देवान्
सद्यो वारि जायते श्रमि धातः

आदिमुक्तानां 3

[illegible]

शरीरजिव धादिनी
शरीरचि वि साति

नेष्ययोगकारिणावित्यर्थः

नृजो
नो ॥ २

दयै ॥ स्वभावतएव एते दोषा एव च यप्रकोपप्रशमप्रतीकारहेतवः ॥ प्रयोजनवतश्च नवन्ति चात्र ॥ शारीराणो विक्र
राणो मेषवर्गश्चतुर्विधः ॥ चयेकोपेशमेचैव हेतुरुक्तं चिकित्सकैः ॥ १ ॥ आगतवश्च ये रोगा ते द्विधानि पतन्ति हि । म
नस्पत्येशरीरेत्येतेषां तु द्विविधाः क्रियाः ॥ २ ॥ शरीरपतितानां तु शरीरवदुपक्रमः । मानसानां तु शब्दादिरिष्टो वर्गः
सुखावहः ॥ ३ ॥ एवमेतत्पुरुषो व्याधिरौषधं क्रियाकाल इति चतुष्टयं समासेन व्याख्यातं । तत्र पुरुषग्रहणात् तत्सं
नवद्वयसमूहोक्ततादिरुक्तः ॥ तदेगप्रत्येगविकल्पाश्च त्वश्वाससिरास्मायुसंस्थास्त्रिप्रवृत्तये ॥ व्याधिग्रहणात्
वातपित्तकफशोणितसंनिपातवैषम्ये निनिजाः सर्वे एव व्याधयो व्याख्याताः । औषधिग्रहणात् द्रव्यसंयुक्तं लवीर्यं
विपाकानामादेशः ॥ क्रियाग्रहणात् स्नेहादीनि छेद्यादीनि च कर्माणि व्याख्यातानि ॥ क्रियाग्रहणात् सर्वक्रियाकाया
नामादेशः । नवन्ति चात्रावीजं चिकित्सितं स्येत्तत्समासेन प्रकीर्तितं । सविंशमध्यायशतं तस्य व्याख्या न विष्पति ॥
तच्च सविंशमध्यायशतं पंचसुस्थानेषु । तत्र सूत्रस्थाननिदानशारीरचिकित्सितकल्पेष्टव्यं वशात् सविंशज्योत्तर
तंत्रे शेषानर्थान् चक्षामः ॥ नवन्ति चात्र । स्वयंनुवाचोक्तं मिदं सनातनं पठेद्विद्यः काशिपतिप्रकाशितं ॥ सपुण्यकर्मात्तु

॥ ३ ॥

मूलकारि ३ रुचिं विकल्पोनेदः ६ वृत्तानां प्रोक्ते १

इह लोकोत्तरलेखे

शास्त्रस्ये १

पाठनीयं २

शास्त्रादौ नैव कृतं प्रोक्तं
पञ्चपात्रं नैव कृतं प्रोक्तं

विष्णुजितो नृपैरसुखये शक्रसलोकतां व्रजेत् ॥ इति सौश्रुते आयुर्वेदशास्त्रे सूत्रस्थाने वेदोत्पत्तिनाम
प्रथमोऽध्यायः ॥ ॥ अथातः शिष्योपनीयमध्यापयन् व्याख्यास्यामः ॥ ॥ ब्राह्मणस्य त्रियवैश्यानामन्यतम
मन्वयवयः शीघ्रसौर्यशौचाचारविनयशक्तिव्रतमेधाधृतिस्मृतिमतिप्रतिपत्तिमुक्तं ॥ तदुत्तीक्ष्णदंताग्रमृ
जुवक्रासीनासंप्रसन्नचित्तवाक्पेष्टकेशसहचरिष्यमुपनयेत् ॥ अतो विपरीतगुणोपनयेत् ॥ त्रि
उपनीयं तु ब्राह्मणप्रशस्ते धृतिथिकरणमुहूर्तनक्षत्रेषु प्रशस्तायां दिशि शुचौ समे देशे चतुर्हस्तं चतुरस्र
गोमयेन स्तुडिलमुपलिप्य दर्भसंस्तरसहितं कृत्वा रत्नपुष्पलाजवस्त्रैर्न स्यैश्च पूजयित्वा देवताविप्रान् निषज
श्च तत्रोक्षिष्यात्सुखदक्षिणतो ब्रह्माण्डोपयित्वा अग्निमुपसमाधाय खदिरपलाशदेवदारुविल्वानां सुमि
द्विश्चतुर्णां च क्षीरवृक्षाणां दधि मधु घृताक्रान्तिः दूर्वाहोमिकेन विधिना सप्रणवानिर्माह व्याहृतिनिःश्रुत्या
ज्याकुतिर्जुहुयात् ॥ अतिदेवतमृषीश्च स्वाहाकारं कुर्यात् शिष्यं च कारयेत् ॥ ब्राह्मणस्त्रियाणां वर्णानां मुपनयनं
कुर्यात् वैश्यावैश्यस्येति ॥ अहमपि कुलगुणसंपन्नं मंत्रवर्जमुपनीयाध्यापयेदित्येके ॥ ततोऽग्नित्रिः प्रदक्षणीक

त्रि
दि

शुभं

ब्रह्मा प्रजापतिश्च नैव एते देवास्तथो धन्यं तस्मिन् राक्षसाज्ये याद्विनाशाय कुं ॥ अस्याहं ति ३
राजस्यो ह्यस्योपनयनं कुरुमिति ॥ शिष्याहं सो नकारयेत् ॥ अस्याहं ति ३
शरत्पु

निषजायोगिनामपि। द्वित्रलीयोव्रणः सद्यो न नागं वात रोगिकं॥ महावातिकं मूर्शोन्नि साश्मरिश्च न गंदरः। कुश
 नां महतां वापि मेहिकं पेंडिकं तथा। मधुमेह चिकित्सा च तथा चोद रिणामपि। मूढगर्भं चिकित्सा च विद्रधिना वि
 सर्पिलं। ग्रंथिदृष्ट्युपदेशानां तथा च क्षुद्र रोगिकं॥ शुकदोष चिकित्सा च तथा च मूख रोगिकं॥ शोफस्यानागता
 नां च निषेधो मिश्रकं तथा। वाजीकरं च यक्षीणे सर्व बाधाशमेपि च॥ मेधा युकरणं चापि स्वभाव व्याधि वारणं। नि
 र्दृति सतापकरं कीर्तितं च रसायनं॥ स्नेहोपयोगिकं स्वेदो वमने च विरेचने॥ तयोर्ध्यापत्र चिकित्सा वनेत्र वस्ति वि
 नागिकः॥ नेत्र वस्ति विपत्र सिद्धिस्तथा चोत्तर वस्तिकः॥ निरूहक्रम संस्तश्च तथैवातुर संस्तकः॥ धूमनस्य विधिश्चा
 ग्र्यश्चत्वारिंशदिति स्मृताः॥ प्रायश्चित्तं प्रशमने चिकित्सा शौतिकर्म च॥ पर्यायास्तस्य निर्दिष्टा विचिकित्सा स्थानमु
 च्यते॥ अन्नस्य रक्षा विज्ञानं स्थावरस्येतरस्य च। सर्पदष्ट विषज्ञाने तस्यो वच चिकित्सितं॥ दुर्दुर्लभं सूषिकानोचकी
 रानां कल्प एव च। अष्टौ कल्याणसमाख्याता विषनेषज कल्याणात्॥ अध्यायानां शतं विशमैर्ते दुर्दीरितं॥ अतः परं
 स्वनाम्नैव तं नमुत्तरमुच्यते॥ अधिकतपकृतैयस्मात् तं नमेत दुषद्वान्॥ औपद्रविक इत्येषः तस्यायत्वान्निरुच्य ॥५॥

वमे २

ते। संधौ वर्त्मनि शुक्ले च क्लृप्ते सर्वत्र दृष्टिषु॥ संविज्ञानार्थमध्यायागदानां तु प्रतिपत्तिः॥ चिकित्साप्रविनागी
योवातानिष्पंदवारणः॥ पित्तस्य श्लेष्मणस्यापि रौधिरस्य तथैव च। लेख्यनेद्यनिषेधौ च छेद्यानां वर्मदृष्टिषु॥
क्रियाकालविनागश्च कर्णोत्थानां चिकित्सितं॥ घ्राणोत्थानां च विज्ञानं तद्रूपं प्रतिषेधनं॥ प्रतिश्यायनिषेधश्च
शिरो गदविषेचनं॥ चिकित्सा तद्रूपानां च शाखा कर्म तत्र मुच्यते। नवग्रहाकृतिज्ञानं स्कंदस्य च निषेधनं। अपस्मार
शकुन्योश्च रेवत्याश्च पुनः पृथक्॥ सूतनायास्तथांधायाः शीतस्रुतनिमण्डिके। नैगमेष चिकित्सा च यद्येत्यतिसयो
निजा॥ कुमारतंत्रमित्येतच्छरीरेषु च कीर्तितं॥ चरानीसारशोषाणां गुल्महृद्रोगिनामपि। पांडूनां रक्तपित्तस्य मृच्छा
याः पानजाश्च ये॥ तस्माद्यच्छिदिहिकानां निषेधश्चासका सयोः॥ स्वरनेदं चिकित्सा च क्लृप्तावर्तिनोः पृथक्॥
विश्वचिकारोचकयोर्मूत्राघातविह्वल्योः॥ इतिकायचिकित्साया शेषमत्र प्रकीर्तितं॥ अमानुषपेधश्च तथापस्मा
रिकोपरः॥ उन्मादप्रतिषेधश्च तत्र विधानिरूच्यते। रसनेदास्त्वष्टृत्तं युक्तयस्त्रिकाश्च याः॥ दोषनेदा इति ज्ञे
या अध्यायास्तत्र नृपणाश्चेष्टत्वादुत्तरह्येतत्र मातृमहर्षयः॥ वक्ष्ये संग्रहाष्टमुत्तरं वापि पश्चिमं। शास्त्रकृतं

चि

कौमारं चिकित्साकायिकी च या ॥ नूतविद्येति चत्वारितंत्रे तत्तरसंज्ञिते । वाजीकरं चिकित्सासुरसायनविधिसंस्था ।
विषतंत्रं पुनः कल्याः शल्यज्ञानं समेततः ॥ इत्यष्टांगमिदं तत्रमादिदेवप्रकाशितं । विधिनाधीत्ययुजाना नवतिप्राण
दानुवि । एतद्व्यवस्थाप्य मध्येयमधीत्य च कर्माप्यवस्थाप्य मुपासितम्यमुनयसोहिनिषयाज्ञाहो नवति । नवति चान्यस्तु
केवलशास्त्रज्ञः कर्मस्वपरिनिष्ठितः ॥ समुह्यत्मा उरप्राप्य प्राप्य नीरुरिवाहवं ॥ यस्तु कर्मसु निष्ठं तातो वा स्वीकृ
त्प्रहविष्कृतः ॥ स स सुप्रज्ञो नाप्रोतिवधं वाहंति राजतः ॥ उजावेतावनिपुणा वसमर्थो स्वकर्मणि । अर्द्धवेदं पठ
वेतावेकपक्षाविवद्विजौ ॥ ओषधो मृतकल्यास्तु रास्त्राशनिविषोपमाः ॥ नवंत्यसैरुपहितास्तस्मादेतौ विवर्ज
येत् ॥ स्नेहादिघननिशायै छेद्यादिषु च कर्मसु । ते निध्नंति जनैर्लोनात् कुर्वैद्यान्तपदोषतः ॥ यस्तु नयसोमतिमा
न स समर्थो र्थसाधने । आहवे कर्मनिर्वो कुर्विचक्रस्येद नो यथा । अथ वसंतदेतदभ्यये यथा तथोपधारय स्व
प्रोच्यमानमथ सुचयेत्ततो तसंगाया व्याकुलायोपस्थितायाभ्ययनकालेशिष्या यथाशक्ति गुरुपदिशेत् ।
पदपादोऽश्लोकार्धश्लोकं वा ते च पदपादश्लोकार्धश्लोका नूयः क्रमेणानुसंधेयाः । एवमेकैकशोधयेत् । आत्म ॥ ६ ॥

नाचानुपठेत्॥ अद्वैतमविवृतमशंकितमननुनासिकं यत्कासरमपीडितवर्णमस्ति नवौष्टहसैरनतिनी
तेसु संस्कृतं नात्युच्चैर्नातिनीचैश्च पठेत् न चांतरेण कश्चित् ब्रजेत् न योरधीयमानयोः॥ नवतश्चात् शुचिर्गुरुप
रोदसस्तद्रा निद्राविवर्जितः॥ पठने तेन विधिना शिष्यः शास्त्रांतमाप्नुयात्॥ वाक्यसौष्टव्यार्थविज्ञाने प्रागभ्येकमेव
पुण्ये॥ तदस्यासे च सिद्धौ च एते ताध्ययनांतगः॥ इति सौष्टवे सूत्रे स्थाने संप्रदानीयो ध्यायः तृतीय समाप्तः॥
अथातः प्रजापतीयमध्यायं व्याख्यास्यामः॥ ॥ अधिगतमप्यध्ययनमप्रजापितमर्थतः खरस्य चंदनानारद
वकेवलं परिश्रमकरं नवति॥ नवतिचात्र॥ यथा खरश्चंदनारवाही नारस्य वेत्ताननुचंदनस्या॥ एवं हि शास्त्राणि
बहून्धीत्यर्थेषु मूढाः खरवद्धं नि॥ तस्मात्संविशमध्यायशतं मनुपदपादश्लोकार्धश्लोकमवस्य मनुधीर्गोयि
तव्यं॥ सहोत्तरेण॥ तस्माद्दिद्व्यरसगुणवीर्यविपाकप्रजावादोषधातुमलाशयमर्मशिरास्नायुसंध्यस्थिगर्भ
संनवद्वयसमूहविनागाश्चेतप्रनष्टशाल्योद्धरणब्रणविनिश्चयननविकल्पासाध्यप्राप्त्याख्येयताचविका
राणामेवमादयश्चान्ये विशेषाः सहस्रशो॥ येन चिसमानाविमलबुद्धेरपि बुद्धीमाळलीकुर्युः किंपुनरप्यबुद्धेः स्त

धर्मशास्त्रिकादिनि शत्रादि निमृतायाः पञ्चपत्रादिनि कृतिरिति चिन्ताः ॥ अथ शास्त्राणां प्रमाणानि ॥ तयोः शलाकावा श्रुंतीनां ॥ १ ॥
जलोत्पत्तिः प्रसिद्धी प्रसिद्धी कलवन्तु ॥ २ ॥ अथ शास्त्राणां प्रमाणानि ॥ तयोः शलाकावा श्रुंतीनां ॥ १ ॥
पञ्चपत्रादिनि कृतिरिति चिन्ताः ॥ अथ शास्त्राणां प्रमाणानि ॥ तयोः शलाकावा श्रुंतीनां ॥ १ ॥
अथ शास्त्राणां प्रमाणानि ॥ तयोः शलाकावा श्रुंतीनां ॥ १ ॥

नान्यथा नान्यथा नान्यथा

अथ शास्त्राणां प्रमाणानि

उपपत्तिः ॥
पञ्चपत्रादिनि कृतिरिति चिन्ताः ॥
अथ शास्त्राणां प्रमाणानि ॥
तयोः शलाकावा श्रुंतीनां ॥ १ ॥

स्मरवश्यं पदपादश्लोकार्थश्लोकमनुवर्णयितव्यं ॥ अन्यशास्त्रोपपन्नानां चार्थानामिहोपनीतानामर्थवशात्तेषां
तद्विद्वद्भ्य एव व्याख्यानमनुश्रोतव्यं ॥ न ह्येकस्मिन् शास्त्रे शक्यः सर्वशास्त्राणामवरोधः कर्तुं ॥ नवतिचात्रा येक
शास्त्रमधीयानो न विद्याछात्रनिश्चयः ॥ तस्माद्बहुशतः शास्त्रे विजानीयाच्चिकित्सुकः ॥ शास्त्रंगुरुमुखोद्गीर्णमा
दायोपास्यवासकृत् ॥ यः कर्मकुरुते वैद्यः सर्वद्योने तु स तस्कराः ॥ औपधेनवमौरसौष्टतपौष्कलावतं ॥ शेषाणो र
प्यतंत्राणां मूलान्येतानि निर्दिशेत् ॥ ॥ इति सौष्टते सूत्रस्थाने प्रभावणीयो नाम चतुर्थोऽध्यायः ॥ अथोपा
गोपहरेणीयमुध्यायं वाख्यास्यामः ॥ ॥ त्रिविधं कर्म पूर्वकर्म प्रधानं कर्म पश्चात्कर्म इति तत्र व्याधीनं प्रति उपदे
क्ष्यामः ॥ ॥ अस्मिन् शास्त्रे शस्त्रकर्म प्राधान्यात् शस्त्रकर्मैव तावत्पूर्वमुपदेक्ष्यामः ॥ तस्यैव शास्त्रात् शस्त्रकर्मोपदे
नद्यथा ॥ छेद्यं नेद्यं लेख्यं वेध्यं मेष्पमाहायं विश्रायं सीयमिति ॥ अतो न्यतमं कर्म चिकीर्षता वैद्येन पूर्वमेवोपकल्प
यितव्यानि नृवंति ॥ तद्यथा ॥ यत्र शास्त्रसारा निशलाकाष्टंगजलोकोऽर्जुनां द्योष्टपिचुस्ते तस्मिन् पत्रपट्टमधुघृत
वसापयस्तेनैतर्पणकषायालेपनकल्कवजनशीतोष्मोदककटाहादीनि परिकर्मिणश्च स्निग्धास्थिरावलवंतः ॥

अथ शास्त्राणां प्रमाणानि ॥
तयोः शलाकावा श्रुंतीनां ॥ १ ॥
अथ शास्त्राणां प्रमाणानि ॥
तयोः शलाकावा श्रुंतीनां ॥ १ ॥

अथ शास्त्राणां प्रमाणानि ॥ तयोः शलाकावा श्रुंतीनां ॥ १ ॥
अथ शास्त्राणां प्रमाणानि ॥ तयोः शलाकावा श्रुंतीनां ॥ १ ॥
अथ शास्त्राणां प्रमाणानि ॥ तयोः शलाकावा श्रुंतीनां ॥ १ ॥
अथ शास्त्राणां प्रमाणानि ॥ तयोः शलाकावा श्रुंतीनां ॥ १ ॥

ध्यात्। ततः कल्केनावच्छादनाति। स्निग्धं नातिरूक्षं घनांकवलिकोदत्वावस्त्रपटेन बद्धीयात्। वेदनारक्षो
 धैर्धूपैर्धूपयेत्। रक्षोघ्नैश्च मन्त्रैः रक्षोञ्जयात्। ततो गुग्गुलुअगुरुसर्जरे सवचागौरशर्षपवृणैर्लेवणनिबप
 त्रव्यामिश्रैराज्यसंयुक्तैर्धूपयेत्॥ आज्यशेषेण चोत्प्राणान् समालनेत् तउदककुं नाचायोगृहीत्वा प्रोक्षप
 न् रक्षाकर्म कुर्यात्॥ तद्वक्ष्यामः॥ कृत्यानां परिरक्षार्थं तथारक्षो नयस्य च। रक्षाकर्म करिष्यामि ब्रह्मा तदनु
 मन्यते॥ नागाः पिशाचा गंधर्वाः पितरो यक्षराक्षसाः। अग्निद्रवंतिये त्वो ब्रह्मा धातुता सदा॥ पृथिव्या मे ते रि
 से च ये चरंति निशाचराः। दिक्षु वासु निवासाश्च पांतु त्वो ते नमस्कृताः॥ पांतु त्वो मुनयो ब्रह्मा दिव्याराजर्षयस्त
 था॥ पर्वताश्चैव नद्यश्च सर्वाः सर्वे च सागराः। अग्नीरक्षतु ते जिह्वा प्राणान्वायुस्तथैव च। सोमो व्यानमपानं ते
 यर्जन्यः परिरक्षतु॥ उदानं विद्युतः पांतु समानं स्तन इत्येव च। बलमिंद्रो बलपतिर्मनुर्मन्यो मतिं तथा॥ कामास्ते
 पांतु गंधर्वाः सत्वं मित्रो निरक्षतु॥ प्रक्षोते वरुणो राजा समुद्रो नानि मंडलं। चक्षुः सूर्यो दिशः श्रोत्रे चंद्रमाः पा
 तु ते नमः॥ नक्षत्राणि सदा रूपं छायां पातु निशास्तव। रेतस्त्वाप्याययं त्वापो रोमा एषधयस्तथा। आकाशं स्वा

नितेपातुदेहे तव वसुंधरा। वैश्वानरो शिरःपातु विष्णुस्तव पराक्रमं। पौरुषं पुरुषोऽष्टौ ब्रह्मात्मानं ध्रुवो नृ
वो॥ एतादेहे विशेषेण तव नित्याहि देवताः। एतास्त्वा सततं पातु दीर्घमायुरवाप्नुहि। स्तुति ते नृगवान् ब्रह्मा
स्वस्ति नारद पर्वतो॥ स्वस्त्यग्निश्चैव वायुश्च स्वस्ति देवाः सहेन्द्राः॥ पितामहं कृतारक्षस्वस्त्यार्थं वृद्धं तां नवार्द्धं
तयस्ते प्रशाम्यंतु सदानवगतव्यथः॥ इति स्वाहा॥ एतैर्वेदात्मकैर्मन्त्रैर्कृत्या व्याधिविनाशने॥ मयैवं कृतं रक्षस्व
दीर्घमायुरवाप्नुहि। ततः कृतं रक्षामातुरमगारं प्रवेश्या चारिकमादिशेत्॥ ततस्तृतीये हनी विमुख्यैव मेव व
क्षीयात्॥ वस्त्रपट्टेन। न चैनं त्वरमाणोऽपरे धुर्मोक्षयेत्॥ द्वितीय दिवसपरिमोक्षणाद्विप्रैर्यतो ब्रह्मणश्चिरादु
पसंरोहति। तावद्रुजा च न वति॥ अत उर्ध्वं दोषकाववलादीन् वेक्ष्य कषाया लेपनबंधाहारचारान् विदधा
त्। न चैनं त्वरमाणं सातर्दोषं रोपयेत्॥ सत्येनापचारेण स्यंतरमुत्संगं कृत्वा नृयोगतिं विकरोति। न वति च
न तस्मादेतर्बहिश्चैवं संशुद्धं रोपयेत् ब्रह्मणं॥ रूढे यजीर्णव्यामव्यवायादिनृपरित्यजेत्॥ १॥ हर्षक्रोधं नयंचापि
यावदास्थैर्यसंनवान्। माषान् षट्सप्तचतुर्णां विधिरेषप्रशस्यते। हेमं तेशिशिरे चैव वसंते चापि मोक्षयेत्॥ २॥

सर्वोत्पत्तिनिमित्तं शरीरं सर्वो धारणं च वातः पित्तं मूत्रं कफं च त्रिधा विभज्यते ॥ १ ॥
अथ सत्त्वात्मक इति भाष्यं ॥
स्वपित्तं सति अप्यात्मनो साधकं ॥
नित्यं चो जगति ॥

अथ सत्त्वात्मक इति भाष्यं ॥
स्वपित्तं सति अप्यात्मनो साधकं ॥
नित्यं चो जगति ॥

अथ सत्त्वात्मक
इति भाष्यं

अहाद्यहा छरद्दीप्ता वर्षा स्वपि च बुद्धिमान् ॥ अतिपातिषु रोगेषु नेच्छेद्विधिमिमं निष्कृ ॥ ३ ॥ प्रदीक्षा गार
वच्छीघ्रं तत्र कुर्यात्प्रतिक्रियां ॥ यावेदना शस्त्रनिपातजाता तीव्रा शरीरं दुनोति जेतोः ॥ दृतेन सा शान्तिमुपैति
सिक्ता कोष्ठेन यष्टी मधुकान्चितेन ॥ ॥ इति सौष्टनस्तत्र स्थाने पंचमोऽध्यायः ॥ ॥ अथातः कथमुच्यते व्याय
यारम्भास्पामः ॥ ॥ कौलोहिनाम नैगवान् स्वयं नैरनादिमध्यनिधनो अत्र रसव्यापकं पत्रसपेत्नीजिवितमरणे
च मुनुष्याणामायत्ने सस्तस्मात्पिकलां न क्षीयते इति संकेतयति अत्रैवाहृतानीति काष्ठं सत्संवेसरात्म
नो नगवानादित्योगतिविशेषेण अहिनिमेषकाष्टाकला मुहूर्त्तं होरात्रयं पक्षमासवर्षं यनसंवत्सरयुगप्रवि
भागं करोति ॥ तत्रैवं घटसरोच्चारणमात्रेण निमेषः ॥ पंचदशानि नैषाः काष्ठास्त्रिंशकाष्टाकला त्रिविंशक
लो मुहूर्त्तः कलादशनागश्च त्रिंशमुहूर्त्तं महोरात्रं पंचदशाहोरात्राणि पक्षः सद्विधः शुक्लः कृष्णश्च तौ मा
साः ॥ ते च माघादयो द्वादशमासाः ॥ द्विमासिकमृतुं कृत्वा न षड्विंशतवो नवंति ॥ तेशि शिरवसंतं ग्रीष्मवंशी शरत्तमे मंताः ॥ ॥ ॥
तेषां न पक्षपक्षौ शिशिरः ॥ मधुमाधवौ वसंतः ॥ शुक्लशुक्ली ग्रीष्मः ॥ न नोनस्यो वर्षा ॥ इषो जौ शरत् ॥ सहः सहस्यो
नक्षत्रा निमेषा काष्ठा इति ॥ अत्रैवाहृतानीति काष्ठं सत्संवेसरात्म

अथ सत्त्वात्मक
इति भाष्यं

अथ धीनो निस्सरत्वे न हि सतोत्पन्नानां तेषां तु परिणामात्तराज्जावत् अतः स्तः ॥ १ ॥ धीनोत्पत्तौ ता एव प्राज्ञा आपां तु लघुत्वे स्वर्यणि सवद्या हरे स्थापयन् धीनिता
वक्ष्यमाणं हेतुनापि निस्सरत्वे न हि सद्यः प्राधान्यात् तेषां तु प्राप्तागोनां तु श्रूयते तत्र तु कालस्यो वासो प्रवृत्ते पृथग्विभक्त्यादिहेतुना यो जायते प्रवृत्तिवत्
मायितनमन्तरे ४

4

卷之五

121

प्रा. २. प्र. ३. प्र. ४.

कासश्चासवमप्युप्रतिश्यायशिरोरुग्ज्वरैरुपतप्यते। ग्रहनक्षत्रचरैर्वाग्रहदारशायनासनेयनेवाहनमणि
 रत्नोपकरणगर्हितलक्षणनिमित्तैर्वाप्रादुर्भावैर्वातत्रस्थोनपरित्यागशान्तिप्रायश्चित्तमेगलेजाप्यहोमोपहा
 रेज्याजलिनमस्कारतपोनियमदयादानदीक्षान्यपगमः। देवताब्राह्मणगुरुपरैर्नवितव्यं। एवंसाधुऊशलेन
 वति॥ १॥ रुतुनामत ऊर्मव्यापन्नानां। लक्षणान्यपदेक्षामः। वायुर्वायुत्तरः शीतोरजोध्रमाऊलादिशः॥ छिन्नसूषा
 रैः सविताहिमन्तद्वाजशायया॥ दप्यिताध्वांसषडावैकमहिषोरुत्तरेऊजराः। रोध्रप्रियंगुपुन्नागाः पुष्पिताहिम
 साङ्कये॥ २॥ त्रिशिरेशीतमधिकंवातवृष्ट्याऊलादिशः। शेषेहेमन्तवत्सर्वविज्ञेयेलक्षणबुधैः॥ सिद्धविद्याधरव
 धूचरणालक्तकांचिते॥ मलयचंदनलतापरिघंगाधिवासिते॥ ४॥ वारिकामिजनानंदजननो नंगदीपवैः। देपत्यो
 ममिनिदुरोवसन्तेदक्षिणानिलः॥ ५॥ दिशोवसन्तेविमलाः काननैरुपशोभिताः। किंशुकोनोजवकुलाः सुताशोकादि
 पुष्पितैः॥ ६॥ कोकिलाषट्पदैर्गलैरुपगीता मनोहराः। दक्षिणानिलसंवीताः सुमुखः पल्लवोचलाः॥ ७॥ ग्रीष्मे
 तिहोरादित्योमारुतो नैरुतोसुखः। अवेर्मदावहोत्यर्थकैवलंसा। रासनेष्टयोः॥ ८॥ तस्मात्संस्तुतस्तस्मादि

शः प्रज्वलिता इव। अंतर्चक्राद् युगलापयः पानाजलामृगाः ॥८॥ ध्वस्तवीरस्त एव ताविपैर्णीकितपादपाः ॥ प्राविष्यं
 वरमानध्वं पश्चिमामिकैर्लेखितैः ॥९॥ ऊर्वद्विश्वातकान् दृष्टान् हं सान्मानसगामिनः ॥ नीमसंतमसेसायंमथिदुर्ग
 मकईमे ॥१०॥ जघनोद्धनकांताः प्रमृष्टासारमंडनाः ॥ तडित्प्रनाहतालोले निमिलन्नयनोत्पलाः ॥ गजितध्व
 निनात्रस्तहृदयाश्चानिसारिकाः मेचकप्रोतसंकाशौ मेघैरुच्चान्द्रूपणैः ॥११॥ जितहंसावलीकांतिवलाकापंक्ति
 सारितैः ॥ केकागर्जननोद्गीतनृत्यतवर्हिनिरीक्षितैः ॥ अंबुधैर्विद्यद्योतप्रस्तुतैस्तुमलस्वनैः ॥ कोमलश्यामशष्पाद्या
 राकगोयोज्वलामही ॥ कदंबनिंबुकुटजसर्जकेतकिंचिद्विजाः ॥ ततोवर्षास्तुनद्यौलिः पूरोद्धमतटुमाः ॥ बापः प्रो
 तफुल्लकुमुदनीलोत्पलविराजिताः ॥ परव्यक्तस्यलवैर्हृत्संस्पर्शोपशोभिताः ॥ नातिगर्जत्स्ववर्त्मनि
 रुद्धैर्ग्रहंननः ॥ कर्बुरूर्ध्वशरधर्कश्चेतान्नविमलैर्ननः ॥ तथासशस्मवूरुहेजातिहीसासद्यटितैः ॥ पिकरु
 क्षांरताकीर्णनिम्नोन्नतसंश्लेषुः ॥ वातासम्प्राक्वर्षकेकासाशनविराजिताः ॥ स्यगुणैरतिदुक्तेषु वि
 परीतेषु बाधुनः ॥ विषमेष्वपि चादौषाः कुप्यन्तुषु देहिनीहरेर्दूषितैश्चेष्वापीपितेशरदिनिर्हरेर
 वर्षादौशमयेद्वायुः प्राग्निकारस्तुष्टुपात् ॥ इतिषष्टोऽध्यायः ॥ अथयैत्रविद्यमध्यायः

यत्तु

अथानि... नदमुखा निता निखरमुखानि केकुमुखा नि स्व... नि हि सुमुखानि...

नलि... ५

श... न... नी... यो... मन...

चलुविशति ५

१२।

आख्यास्यामः॥ यंत्रशतमेकोत्तरं । अत्रहस्तयंत्रमेवया... दतेयत्रा... तटानी... श... दंश... विंशति...

स्वस्ति...

एणं व्यालानां मृग पक्षिणं मुखैर्मुखानियंत्राणं प्रायसः सदृशा तु ॥ तस्मात् तत्सारूप्यादागमादुपदेशपादन्ययंत्र
 दर्शनात् युक्ति तश्चकारयेत् ॥ समाहितानियंत्राणि स्वरश्चक्षणा मुखानि च । सुदृढानि सुरूपाणि सुग्रहाणी नकारये
 त् । तत्र स्वस्तिकं युंत्राणि अष्टोदशांगुल प्रमाणानि । सिंह व्याघ्र वृक त रक्षु रक्षु दीपि माज्जी रश्मि गा मृगे वां स का क
 कं कुर रचा ष नो स श शं घा तु ल कं ची रि क्षिं स्पे न ग ध्र को चं तं ग रा जां ज ली क क णो व नं ज न नं द । मुखं मुखानि म
 स्तरां कृति निः कै र व व धा नि मू लं ऊ र व द ह त्त व रां ग ए प स्ति वि न ष्ट रा ल्यो द्द र णार्थं मु प दि श्यं ते । सै नि त्र हो नि य ह श्च
 सें द शौ षो ड्शं गु लौ न व तः त्व क मां स शि रा स्ता यु ग त रा ल्यो द्द र णार्थं मु प दि श्यं ते ॥ ता लु यं त्रे द्वा द शं गु लै । म स्य ता
 लु क व दे क ता लु दि ता लु के । क र्ण ना शा ना डी रा ल्या ना मा ह र णार्थं । ना डी यंत्रा ए प ने क प्र का रा ए प ने क प्र यो ज्ना ए प
 क तो मुखानि उ न य तो मुखानि च तानि श्रो तो ग त रा ल्यो द्द र णार्थं शो ग द र्श ना र्थं मा ह्र ष णार्थं क्रि या सौ ज मा र्था र्थं चे ति
 तानि श्रो तो द्वा र प री णा हा नि य यो ग प रि णा ह प्र दी र्घा णि च न गं द रा र्शो बृ द व्र ण व स्तु त र व स्ति वृ ध् क द को द
 र ध्रु म नि रु द्ध प्र का रा सं नि रु द्ध गु द यंत्राणि । अ ला ह्म शृ ग यंत्राणि चो प रि ष्ठा त व द्द्या मः । रा धा का यंत्रा ए प पि ना ना
 एतेषां सारानि ह्यु र्वी का कृत्तु र्वी श्वा दि ना म त्रु स्व स्ति क र्त्तु मा धा र ता ली म त्रु की टा लु र्वा का र शी क लु द्द य सै द्धा ना र्थं यो ग्यं ॥ मुख व र दं त व र
 एतेषां सारानि ह्यु र्वी का कृत्तु र्वी श्वा दि ना म त्रु स्व स्ति क र्त्तु मा धा र ता ली म त्रु की टा लु र्वा का र शी क लु द्द य सै द्धा ना र्थं यो ग्यं ॥ मुख व र दं त व र
 एतेषां सारानि ह्यु र्वी का कृत्तु र्वी श्वा दि ना म त्रु स्व स्ति क र्त्तु मा धा र ता ली म त्रु की टा लु र्वा का र शी क लु द्द य सै द्धा ना र्थं यो ग्यं ॥ मुख व र दं त व र
 एतेषां सारानि ह्यु र्वी का कृत्तु र्वी श्वा दि ना म त्रु स्व स्ति क र्त्तु मा धा र ता ली म त्रु की टा लु र्वा का र शी क लु द्द य सै द्धा ना र्थं यो ग्यं ॥ मुख व र दं त व र

99

93

प्रकाराणि नाना प्रयोजनानि यथा योगपरिणामप्रदीर्घाणि च। तेषां गंडुपदशरपुंखसर्पफणावडिगुमुखेदे
देएषणव्यह्नवर्तेन च। खनाहरणार्थमुपदिश्यते। मस्तरदेवमात्रमुखेदे किंचिदानताये श्रोतोगतशब्दोदर
णार्थमुपदिश्यते। षट्कोर्पासक्तोष्मीषाणि प्रमार्जनक्रियासुत्रीणि द्वयात्तीनि खल्वेमुखा निक्षारौषधप्र
लिधानार्थः। जांबवां ऊशवदनानि अग्निकर्मणि त्रीणि त्रीणि षडग्निकर्मस्वनिप्रेतानि। नासावुदहरणार्थः।
एकं कौलास्ति देवमात्रमुखं खल्वेतीत्याद्यं जेनार्थमेकं कलायपरिमंडलमुनय तोमूजलायं मूत्रमार्गविशो
धनार्थं एकं मीलतीपुष्पदंताग्रप्रमाणपरिमंडलमिति॥ उपयंत्राण्यपिरजुवेलिकावर्ममूर्तिवल्कलतावस्त्रा
ष्टीजास्ममुद्रपाणिपादतलांगुलिजिह्वादेतनखमुखबाधकैर्दंकाशखाष्टीवनं प्राह हर्षायस्कांतमयानि
शस्त्रक्षारानि नेषजानि चेति। एतानि देहे सर्वस्मिन् देहस्यावयवे तथासंधौकोष्टेधमन्यांचेयथा योगप्रयोजये
त्। चालनवर्तेन विवर्तेन विवरणपीडने मार्गविशोधने विकर्षणाहरणोच्छने। मनविनमनविनजनोमथना
र्क्षणे षण्णदारणारिक्तकरणप्रक्षालनप्रधमार्जनानि चतुर्विंशतिः। स्वबुद्ध्याचापिविनजेत्यत्र कर्माणि बुद्धि

प्रवर्तनं तत्तत्प्रवृत्तौ फलं अहर्नि विवर्तने सर्वकृपास्य ज्ञायेन शतउषस्य २ किंच लिंकं डी उपलभ्यते।
जालं न उद्धृष्टं वरति न तावच्छ्रुते कृपावक्रोधाजने ३ मस्तरदेवमात्रमुखेदे शरोवाणः पिच्छे पतिष्यानिवेशने॥ ५॥ ५॥ ५॥
जलुफलवन्मुखे ४ कर्पास रजितवेष्टनाः ५ तत विडि सभ्य ६ प्रमार्जने नोवारं ७ पूयादि निष्कृ ८ नोवत्र सर्पफणावल्मुखि न पाठावडी मस्तरदेव
प्रकाराणि नाना प्रयोजनानि यथा योगपरिणामप्रदीर्घाणि च। तेषां गंडुपदशरपुंखसर्पफणावडिगुमुखेदे
देएषणव्यह्नवर्तेन च। खनाहरणार्थमुपदिश्यते। मस्तरदेवमात्रमुखेदे किंचिदानताये श्रोतोगतशब्दोदर
णार्थमुपदिश्यते। षट्कोर्पासक्तोष्मीषाणि प्रमार्जनक्रियासुत्रीणि द्वयात्तीनि खल्वेमुखा निक्षारौषधप्र
लिधानार्थः। जांबवां ऊशवदनानि अग्निकर्मणि त्रीणि त्रीणि षडग्निकर्मस्वनिप्रेतानि। नासावुदहरणार्थः।
एकं कौलास्ति देवमात्रमुखं खल्वेतीत्याद्यं जेनार्थमेकं कलायपरिमंडलमुनय तोमूजलायं मूत्रमार्गविशो
धनार्थं एकं मीलतीपुष्पदंताग्रप्रमाणपरिमंडलमिति॥ उपयंत्राण्यपिरजुवेलिकावर्ममूर्तिवल्कलतावस्त्रा
ष्टीजास्ममुद्रपाणिपादतलांगुलिजिह्वादेतनखमुखबाधकैर्दंकाशखाष्टीवनं प्राह हर्षायस्कांतमयानि
शस्त्रक्षारानि नेषजानि चेति। एतानि देहे सर्वस्मिन् देहस्यावयवे तथासंधौकोष्टेधमन्यांचेयथा योगप्रयोजये
त्। चालनवर्तेन विवर्तेन विवरणपीडने मार्गविशोधने विकर्षणाहरणोच्छने। मनविनमनविनजनोमथना
र्क्षणे षण्णदारणारिक्तकरणप्रक्षालनप्रधमार्जनानि चतुर्विंशतिः। स्वबुद्ध्याचापिविनजेत्यत्र कर्माणि बुद्धि
रुद्धे ७२२॥ ८॥ ९॥ १०॥ ११॥ १२॥ १३॥ १४॥ १५॥ १६॥ १७॥ १८॥ १९॥ २०॥ २१॥ २२॥ २३॥ २४॥ २५॥ २६॥ २७॥ २८॥ २९॥ ३०॥ ३१॥ ३२॥ ३३॥ ३४॥ ३५॥ ३६॥ ३७॥ ३८॥ ३९॥ ४०॥ ४१॥ ४२॥ ४३॥ ४४॥ ४५॥ ४६॥ ४७॥ ४८॥ ४९॥ ५०॥ ५१॥ ५२॥ ५३॥ ५४॥ ५५॥ ५६॥ ५७॥ ५८॥ ५९॥ ६०॥ ६१॥ ६२॥ ६३॥ ६४॥ ६५॥ ६६॥ ६७॥ ६८॥ ६९॥ ७०॥ ७१॥ ७२॥ ७३॥ ७४॥ ७५॥ ७६॥ ७७॥ ७८॥ ७९॥ ८०॥ ८१॥ ८२॥ ८३॥ ८४॥ ८५॥ ८६॥ ८७॥ ८८॥ ८९॥ ९०॥ ९१॥ ९२॥ ९३॥ ९४॥ ९५॥ ९६॥ ९७॥ ९८॥ ९९॥ १००॥

मन्त्रमुद्रादि... शरीर... विष्णु... तत्रातिस्फुल्लमसारमतिदीर्घमतिदुस्वमग्राहि ॥ विषमग्राहि ॥ वक्त्रे शिथिलमल्पनतमृदुकीलमृदुपासमृदुमुखमिति द्वादशायं त्रयोषाः ॥ एतैर्द्वैविनिमुक्तं यंत्रं मध्यादशौगुले प्रशस्तं निषजाज्ञेयं तद्विकर्मसुयोजयेत् ॥ १ ॥ दृश्यं सिंहमुखाद्यैस्तु गूढं कंकमुखादिति ॥ निर्हरेत् शानेः शल्पं शास्त्रमुक्तिषु पेक्षया विवर्तते साधवगा ॥ हे ते च शल्पं निरुह्योद्विरते च यस्मात् यत्रैष तः कंकमुखं प्रधानस्थाने सुसर्वेषु विकारितं च ॥ इति सौष्टे तत्रायुर्वेदशास्त्रेयं त्रिविधमध्यायः समाप्तः ॥ आथातः शास्त्रावचारणीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥ विंशतिशास्त्राणितद्यथा मंडलाग्रकरपत्रेन खरास्त्रमुद्रिकोत्पलपत्रकाधर्द्धधारस्तुची ऊरापत्राटीमुखशरारीमुखांतर्मुखत्रिकूर्चराकु कुठारिकात्री हि मुखारावेत स पत्रवडि रादेतशं केषण्यइति तत्र मंडलाग्रकरपत्रे स्यातां छेदनेनेदनेच स्तुची ऊरापत्राटीमुखशरारीमुखांतर्मुखत्रिकूर्चकाणि विभावणे कुठारिकात्री हि मुखारावेत स पत्रकाणि व्यधने स्तुची च बिडरोदेतशं ऊंश्चाहरणे एषण्ये षणे मन्त्रलोम्ये च स्तुची सिवने इत्यष्टविधे कर्मणि उपयोगः ॥ शास्त्राणां व्याख्यातः ॥ तेषामथग्रह एव समासोपायः

शास्त्रादि... विविध...

१४

श्रीशिवो...

१४

मन्त्र...

यथा मन्त्रोक्तं... विष्णु... तत्रातिस्फुल्लमसारमतिदीर्घमतिदुस्वमग्राहि ॥ विषमग्राहि ॥ वक्त्रे शिथिलमल्पनतमृदुकीलमृदुपासमृदुमुखमिति द्वादशायं त्रयोषाः ॥ एतैर्द्वैविनिमुक्तं यंत्रं मध्यादशौगुले प्रशस्तं निषजाज्ञेयं तद्विकर्मसुयोजयेत् ॥ १ ॥ दृश्यं सिंहमुखाद्यैस्तु गूढं कंकमुखादिति ॥ निर्हरेत् शानेः शल्पं शास्त्रमुक्तिषु पेक्षया विवर्तते साधवगा ॥ हे ते च शल्पं निरुह्योद्विरते च यस्मात् यत्रैष तः कंकमुखं प्रधानस्थाने सुसर्वेषु विकारितं च ॥ इति सौष्टे तत्रायुर्वेदशास्त्रेयं त्रिविधमध्यायः समाप्तः ॥ आथातः शास्त्रावचारणीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥ विंशतिशास्त्राणितद्यथा मंडलाग्रकरपत्रेन खरास्त्रमुद्रिकोत्पलपत्रकाधर्द्धधारस्तुची ऊरापत्राटीमुखशरारीमुखांतर्मुखत्रिकूर्चराकु कुठारिकात्री हि मुखारावेत स पत्रवडि रादेतशं केषण्यइति तत्र मंडलाग्रकरपत्रे स्यातां छेदनेनेदनेच स्तुची ऊरापत्राटीमुखशरारीमुखांतर्मुखत्रिकूर्चकाणि विभावणे कुठारिकात्री हि मुखारावेत स पत्रकाणि व्यधने स्तुची च बिडरोदेतशं ऊंश्चाहरणे एषण्ये षणे मन्त्रलोम्ये च स्तुची सिवने इत्यष्टविधे कर्मणि उपयोगः ॥ शास्त्राणां व्याख्यातः ॥ तेषामथग्रह एव समासोपायः

धांसोरोदकनैलेषु तत्र क्षारपायिनां॥ शिरश्व्यास्तिष्ठेदनेषु उदकपायिनां मासछेदननेदनपाटनेषु तैलपायिने
शिरावधस्नायुचर्मछेदनेषु। तेषां निशानार्थं क्षणशिलाकामाषसूषणनाधारासेस्थापनशास्त्रं कीलकमिति
नवतिचात्र॥ यदा सुनिशितं शस्त्रं रोमछेदिसु संस्थितं सुगृहीतं प्रमाणेन तदा कर्मण्योजयेत्॥ १॥ अनुशास्त्राणि
नुत्वं कसारस्फुटिककाचकुरुबिंदुजलौकानि क्षारनखगोजीरोफालिकाशकपत्रकरीरवालांगुलय इति। शिशूनां
शस्त्रं नीरुणो शस्त्रानावेव योजयेत्॥ विधिः प्रवक्ष्यते पश्चात् अग्निक्षालैरजलौकसो॥ २॥ ये स्युर्मुखगतारोगाः नेत्र
वर्त्यगताश्च ये। गोजीरोफालिकाशकपत्रैर्विश्रावयेन्नुतान्॥ ३॥ एष्यैष्वैष एष्वानेषु बालांगुल्यं ऊराहिताः॥ शस्त्रा
ण्येतानि मतिमान् शुद्धसैकपायसानितु॥ ४॥ कारयेत्करणैः प्राक्षं कर्म्मरं कर्मकोविदं॥ प्रमाणज्ञस्य वैधस्य सिद्धि
र्नवतिनित्यशः॥ ५॥ तस्मात्परिचयः कार्यः। शस्त्राणामादितः सदाः॥ ॥ इति सौश्रुते आयुर्वेदशास्त्रे स्तत्रस्था
ने शस्त्रावचारणीयो नाम अष्टमोऽध्यायः॥ ॥ ८॥ अथातो योग्यास्तत्रीयमध्यायं व्याख्यास्यामः॥ ॥ अधिगत
सर्वशास्त्रार्थमपि शिष्ये योग्याकारयेत्। छेदादिक्रियामार्गस्नेहादिषु च कर्मपथमुपदिशेत्॥ इति वैस्तिप्रसे

(Faint handwritten text from another manuscript fragment)



۱۰۰

पुनः

वेचकाय चरन्तौ

तदपि न लोकाद
नेत्राणां स्थितिः

तेन सा सा मि दत्त
मुपासितेति ३

आकिर

रूपि कै दृष्यादिविशेषः

कंठदन्तमांसा ना

लेपनी

रु॥

जलादीनीपीतव्यम्

आष्टकः ५

बाला

श्वेतकुण्ड

अत्र सादृश्यं निश्चितम्

रु॥

पुष्पजिह्व

वित॥ सद्दिविधः। प्रतिसारणीयः। पानीयश्च। तत्र प्रतिसारणीया। ऊष्ट किं तिनददुक्लिासमंडुलनगंदरावेदा
 रौदुव्रणनाडीचर्मकीतिलकालकन्यैथमुख्यंगविद्रधिवाद्युमिविषादिषुप्रयुज्यते॥ समसुचमुखरोगेषु
 पुजिह्वविजिह्वोपकुशदेतावेदनेषुनिःस्पृतेषुचरोहिणीषुएतेषुचैवानुशास्त्रप्रालिधानमुक्ते॥ पानीयसुगुहो
 दराग्निसंगक्षधादिजीर्णानाहशर्कराशमर्यान्तरविद्रधिलमिविषाशसुचोपयुज्यते॥ संप्रसुचमुखरोगेषुअहि
 तस्त्रुरक्तपित्तज्वरितपित्तप्रलतिवृद्धबालदुर्बलंनममदसृष्टतिमिरपरीतेन्योऽन्यन्यैवविधेऽन्यः। तंचेतुर
 क्षारवदुग्धपरिश्रावयेत्। तस्यविस्तरोन्यत्र। अथप्रतिसारणीयोमृदुर्मध्यस्त्रीक्ष्णश्चतंचिकीर्षः॥ शरदिगिरिसा
 नुजंशुचिरूपोषितः निवसंतिहिहृतानियान्यस्मिन्कानिचिन्मृ॥ अपक्रामंत्वतश्चायंमायायंपाद्यतेदुमःप्रशस्तेऽह
 निप्रशस्तदेशजातमनुपहतमध्यमवयसंमहांतमसितमुष्केकमधिवास्यमंत्रेणानेनानिमंत्राग्निवीर्यमहावीर्य
 मनिवीर्यमणस्पतु। इहैवतिष्ठकल्याणममकार्यकरिष्यसि। ममकार्यंलतेपश्चात्देवलोकेगमिष्यति। येतपुष्प
 रक्तपुष्पसहस्रंनुकुयात्॥ अपरेधर्विळतमद्रुतेयदिनपश्येततदापातयित्वास्वंडराः प्रकल्पविपाद्यनिवातेदोषेनि

तेषां
 चिकीर्षः
 पादेन
 पेययि
 नाह
 यद्यपि
 स्पायेय
 रजीषो
 लवकं
 चिकीर्षः
 भुजिह्वः

पराविनागा

रूपमूर्तिषुपक
 बालनोनाली
 बालाभांकेपाधीयेष्ट ३

गारिशि
 श्रीशुक्ला
 मयतिन
 यदिरा

शाहः परिमृष्टाश्च साहाय्येषु चिकित्सकैः
तस्मात्परिहासतः निषणासिद्धि मिथ्या ताद्युत्तये व्याधयः सर्वेषु मातो दर्शनादिभिः

निमुपाक्रोशमसंग्रहः॥ प्राप्नुयान्नियतं वैद्योऽयोऽसाध्यं समुपाचरेत्॥१॥ मिथ्यादृष्टाविकाराहिदुराख्यातास्तथैव
च॥ तत्र साध्या अपि व्याधयः प्रायेणैषां दुश्चिकित्स्यतमाः॥ तत्र यथाश्रोत्रियनृपतिस्त्रीबाजावृद्धनीरुगजसेवककिन्नवः
तथा दुःपरिमृष्टाश्च मोहयेयुश्चिकित्सकं॥२॥ विद्यमाना परिसेवसरोक्षितोश्च विकाराश्च प्रायसो वर्जयेत्॥३॥ कित
वदुर्वैद्यवैद्यविदग्धव्याधिगोपकद्वरिद्रूपणकौघिनामात्मवतामनायानोचएव निरूप्यचिकित्सां कुर्वन्धर्मार्थ
कामयशोसि प्राप्नोति॥ न वेति चात्र॥ स्त्रीनिः सहास्यं संवादे परिहासं परिवर्जयेत्॥ तदंजनिरनादेयमनादन्य
द्विषक् वरे॥१॥ इति सौष्टते आयुर्वेदशास्त्रे सूत्रस्थाने विशेषानुप्रवेशनीयोऽध्यायोदशमः समाप्तः॥

अथानुशस्त्रेऽस्यः सारः प्रधानतमो न वेति॥ छेद्यनेद्यनेत्यकरण
त्रिदोषघ्नत्वात् विशेषक्रियावधारणं चात्र सारणात् रूपेणादासारः॥ नानौषधिसमवायात् त्रिदोषघ्नशुद्ध
त्वात् सोम्यः॥ तस्य सोम्यस्यापि सतोदहनपचनदारणादिशक्तिरविरुद्धा॥ सखचाग्नेयोषधगुणस्यैष्टत्वात्॥ कदु
कउष्णः तीक्ष्णपाचनो विषयिणः शोधनो रोपणः शोषणः लम्पामकफऊषविषमेदसामुपहंता पुंस्त्यस्य वातिसे

मिथ्यादृष्टाविकाराहिदुराख्यातास्तथैव
च॥ तत्र साध्या अपि व्याधयः प्रायेणैषां दुश्चिकित्स्यतमाः॥ तत्र यथाश्रोत्रियनृपतिस्त्रीबाजावृद्धनीरुगजसेवककिन्नवः
तथा दुःपरिमृष्टाश्च मोहयेयुश्चिकित्सकं॥२॥ विद्यमाना परिसेवसरोक्षितोश्च विकाराश्च प्रायसो वर्जयेत्॥३॥ कित

त्रिदोषघ्नत्वात् शुद्धत्वादावपि ति हेत्वे तस्मात् शब्दोऽसाहाय्येषु चिकित्सकैः
तस्मात्परिहासतः निषणासिद्धि मिथ्या ताद्युत्तये व्याधयः सर्वेषु मातो दर्शनादिभिः

काकशा

चोति ३

चित्तं लब्ध्वा सुधारार्थं राः प्रक्षिप्यति लनाले रा दीपयेत् । अथोपशान्तेनौतद्रस्मय कृत्वा ह्रीयात् ॥ कूटशर्करा नस्म
शर्कराश्च । अथानेनैव विधानेन ऊटजं पलाशश्च कर्णपारिजतं च क्विचीति कारयधति च कोर्कसुदं दुपामार्गपाटला
नक्तं माखट्टकदलीचित्रकं सतीकं द्रव्यं शास्त्रेण सप्त छदानि मंथयुं जाश्चित्तं स्वश्च कोशात् क्वीसमूलपत्रशाखादहेत् ।
ततः क्षारशोणमुदकद्रोणैः षड्विंशलोघमूत्रैर्वा यथोक्तैरेकविंशति छत्वः । परिश्राव्य महति कटादेशानैः शनैर्द्व्यं व
घटयेत् विपचेत् । स यदा नवत्यंशे रक्तस्तीक्ष्णः पिष्टुं लैश्च । तदा तमादाय महति वस्त्रे परिश्राव्य तुरे विसृज्य पुनरग्न्या
वधि श्रायेत् । तत एव च क्षारोदकां तं कुडं वमय्यर्द्धं चोपनयेत् । ततः कूटशर्करा नस्म शर्करा क्षारिपकं शंखना नीरग्नि
वर्णाः लब्ध्वा यसे पात्रे तस्मिन् नैव क्षारोदके निक्षिप्य पिष्ट्वा तेनैव द्विद्रोणे अष्टपल संमितं शंखना न्यादीनां कर्णप्रतीवा
प्य सततं मप्रमत्तं चेतमवधट्टया च पिचे स यथानाति सोद्रोनाति इव च नवति । तथा प्रयतेत । अथैनमागतपाकम
वतार्या न गुप्तमाया सऊने संहरत मुखे निदध्या देषमध्य एष एवाप्रतीवापः पक्कं संव्यर्ह मोमृदुः । प्रतीवापे यथाधाने
देती इवेती चित्रकलांगलीकी । सतीकं प्रवालनालपत्री खिड सुवर्चिका कनकक्षीरी हिं गुवचाति विषाः समाः क्षिप्य

ବ୍ରହ୍ମଜନନାଦିନି

नरंजपत्र सुनारीकृत

चौक

शेषनाशो रक्त
२५ पत्र

अमर
पत्र

३

वृणाः शुक्तिप्रमाणां प्रतीवापः। स च सर्ववत्। पक्वस्तीक्ष्णास्तेषां यथायाधिबलमुपयोगः। क्षीणबाहो तु क्षारोदकमा
वपेत्। तीक्ष्णक्षारैकांशान्तरेण॥ क्षीणजले च। बलकरणार्थं नवतिचात्र नैवाति तीक्ष्णो नमृदुः शुक्लश्च क्षोथपिष्ठ
व॥ अन्निष्यंदीशिवः शीघ्रक्षारो चाष्टगुणाः स्मृतः॥ १॥ अतिमार्दवशो त्योष्मते स्तापैष्ठि स्युः सर्पिता। सांद्रता पक्वता ही
नद्रव्यतो दोष उच्यते॥ २॥ तत्राक्षारसाध्य व्याधिव्याधितमुपवेश्य संवेश्य वा निवाता तपेदशो असेवाधे अगोपहरणीयो
क्तेन निधानेनोपसंहृतं संहारं ततो स्यतामवकारां निरीक्ष्य अववृष्यावलिष्य प्रपाठयित्वा शिलाकया क्षारैः प्रतिसा
रणीदत्वा वा कशतमात्रा मुपेक्षेत्। धर्मार्थं कीर्त्तिमत्यर्थं सतां ग्रहणं मुनम्॥ प्राप्नुयात् स्वर्गवासं च आतुरे हितमाचरे
त्। तस्मिन्निपतिते व्याधौ ह्यस्मत्तादग्न्यलक्षणं। तत्राग्न्यवर्गः रामेनः सप्विर्मधुकुं संयुतः॥ ३॥ अथ चेत्स्थिरमूलत्वात्
क्षारदग्धेन शीर्यते। इदमालेपने तत्र समग्रमवचारयेत्॥ ४॥ आग्न्यकांजिकबीजानि तिलान्मधुकामवच। प्रपिष्ट्य
समनागेन तेनैव मनुलेपयेत्॥ ५॥ तिलकल्कः समधुकोष्ठताको ब्रणरोपणः। रसेनाग्नौ न तीक्ष्णो न वीर्योऽस्मिन् च
योजितः॥ ६॥ आग्नेयेनाग्निना तुल्यं कथं क्षारः प्रशाम्यति। एवं चेन्मन्यसेव सप्रोच्यमानं निबोध मे॥ ७॥ अग्न्यवर्जो

उलोमनु

अथ पतितो तंदुलकंडनप्रदिग्धगात्रीतैलवर्षणाभक्तमुखीवामहस्तांगुष्ठांगुलीन्यांरहीतपुष्पोदक्षिणहस्तो
गुष्ठांगुलीन्यांशानैः शनैः अमार्जयंस्तामासुखात्त्वामयेत्। तावत्तयावत्सम्पक्वोतखिगानीतिसम्पक्वोतोस
खिलसरकेत्यस्तानोक्तुकामासतिचरेत्॥ यासीदतिनचेष्टेसादुर्वोतापुनःसम्पक्वामयेत्॥ दुर्वोतायाव्याधि
रसाध्यद्रेद्रियमदोनामनवति॥ अथसुखांताताप्रर्ववसंनिदध्यात्। शोलितस्यचायोगयोगातियोगानवेक्ष्यजलो
कोत्रणान्मधुनावघदयेत्। तत्रातियोगेशतधौतघृतामंगःशतधौतघृताकपिधुधारणवासितान्निरक्षिपपरि
सेचयेत्॥ बध्नीतवामिथ्यायोगकषायमधुरस्निग्धशीतैश्चप्रदेहः॥ प्रदिग्धादिति नवंतिचात्र॥ सत्राणिग्रहणंजा
तिपोषणेसावचारणं। जलौकसांयोजानीयात्तसाध्यात्सजयेत्गदात्॥ ॥ इति श्रीसूत्रस्थानेजलौकावच
रणीयोध्यायः॥ ॥ अथातःशोलितवर्णनीयमध्यायं व्याख्यास्यामः॥ ॥ तत्रपांचनौतिकस्यचतुर्विधस्यंष
डुसोपेतस्यद्विविधवीर्यस्याष्टविधवीर्यस्यवानेकप्रकारस्योपयुक्तस्याहारस्यसम्पक्परिणतस्ययस्तेजोत्ततःस
रःपरमसूक्ष्मसरसरत्पुच्यते। तस्यचहृदयंस्तुनंसहृदयाचतुर्विंशतिधमनीरनुप्रविश्योईगादशदशाबाधोमंगमि
ज्जगत्तानिनाजातादिराद्यैस्तथै
वर्तमानातिष्ठापादयश्चनवीर्य
लाग्निसोमात्मजैर्वचमतावष्टेननप्रवर्षीयेत्येतिपरमतावष्टेन
शीतोष्णस्निग्धरुक्षतिशरविघ्नमृदतीक्ष्णजेदेनतत्पुष्टिद्विसादिषुअ
लोहिजेगीरहृदयस्यप्रासादयेविधमनस्यआत्मकाशयोमध्यमग्निस्थानितत्रयानामपानात्

पाननौति
केतपंच
तिनस्पृ
दिमुत्त
पपत्तेतिनेदृष्टज
तेधिप्रपुष्टादिनो
इष्टादिनस्यलुकादि
प्रपुष्टसाधा

[illegible]

एवमिति...
 स्त्रिया...
 यथा...
 प्रोक्त...
 स्वोक्त...

धुतिष्ठते॥ एवमुक्तासेनरसशुक्रं नवति॥ स्त्रीणां चार्त्तव नवति॥ नवतिचात्र॥ अष्टादशसहस्राणि॥ अस्मिन्सख्या
 समुच्चये॥ कलानां नवतिश्लोकास्वतंत्रपरतंत्रयोः ससाक्षार्चिर्जलसंतानवदण्डनाविशेषेणानुषधावत्येवंश
 रीरंकेवलं॥ बाजीकरणस्त्वौषधयः॥ स्वबलगुणोत्कर्षाद्विरेचनवदुपयुक्ताः शुक्रं विरेचयंतिथाहि॥ पुष्पमुकुटा
 स्थागंधोनराक्षमिहास्तीतिवक्तुं नैवनास्तीति॥ अथवाऽस्मिन्सतां जावानां अनियुक्तिरिति त्वत्केवलं सौदाम्नां नानि
 वेज्यते॥ स एव गंधो विवृत्त पत्रकेसरेषु पुष्पेषु कालांतरेणानियुक्तिगच्छति॥ एवं बालानामपि वयः परिपाकात् शु
 क्रश्रादुर्गावानियुक्ती नवति॥ रोमराज्यार्त्तवादयश्च विशेषाच्चारीणां॥ रजसि चोपचीयमानेशानैः रसनगर्भाशये
 योनिवृद्धिर्नवति॥ स एवान्नपानरसोष्टृक्षानां परिपक्वशरीरत्वादप्रणिनौ नवति॥ त एतेशरीरधारुणात्तथातव ए
 व उच्यते॥ तेषां स यद्विद्विशोणितनिमित्ते तस्मात्तद्विस्तृतवत्स्यामः॥ तत्र फेनिलमृकणं॥ कृष्णपुरुषंतनुं शीघ्रम
 स्कंदीचवातेन दुष्टं॥ क्षीनं पीतं हरितं श्यावं विश्रमनिष्टं पिपीलिका मल्लिकाणां वास्त्वंदिवपित्तैर्न दुष्टं॥ गैरिकोद
 कप्रकाशस्मिन् शीतलंबकुलं पिठुलं चिरश्राविमांसपेसीप्रनेचक्षेष्मदुष्टं सर्वलक्षणयुक्तं काजिकानं विशेषतो

आसादीनी...
 न आदि...
 प्रह्लादापि...
 कृतमर्कशं

द्वे २

पुष्प...
 स्त्री...
 न...
 त...
 त...
 त...
 त...
 त...
 त...
 त...

सूर्यस्य च अस्मिन् गोप्यं राश्यां सितं निरुद्धं लघुशस्त्रं ॥ संसृष्टमिति रोक्ता ज्ञानाहुरिहो जगति
 सप्ततुल्यं रश्मिगणनं गणितं चित्तिं शिखरं तत्तत्तानं शक्तिं ॥ अश्वे ५
 यथा रश्मिगणनं राश्यां पातं मुक्तं दिव्यं च ॥ एवेति तात्पर्यं विदुषां रश्मिगणनं राश्यां पातं मुक्तं दिव्यं च ॥
 यममादीनां तिस्र्यो यो नो नास्ति दत्तं चित्तं यथा तत्र अयोगो एवेति तात्पर्यं विदुषां रश्मिगणनं राश्यां पातं मुक्तं दिव्यं च ॥

सूर्यस्य च अस्मिन् गोप्यं राश्यां सितं निरुद्धं लघुशस्त्रं ॥ संसृष्टमिति रोक्ता ज्ञानाहुरिहो जगति

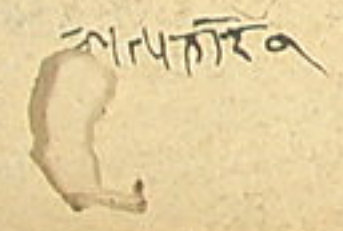
दुर्गं चिदसन्निपातदुष्टं पितृवद्वक्त्रेनातिहृष्टं द्विदोषलिंगं संसृष्टं जीवसोलितमप्यत्र वक्ष्यामः ॥ सर्वो गशो फली ए
 स्य चास्य नो जननिमित्तः ॥ x इन्द्रगोपप्रतिकाशं असंहतं अविवर्णं च प्रकृतिसंज्ञानीयात् ॥ विश्वायुः सत्रवक्ष्यामः ॥
 अथा विश्वायुः ॥ x पांडुरोगो र्शस उदरिशोषिगर्जिणीनां च स्वयथवः ॥ तत्र विश्वावर्णं द्विविधं ॥ प्रथमं शिराव्यध
 नं च ॥ अत्र प्रथमं मधिरुत्पाह ॥ तत्र रुज्ज्वसंकीर्णं सूक्ष्मं समं अनवगाढं अनुज्ञानमाशुचशस्त्रे पातयेत् ॥ मर्मशि
 रास्नायुसंधीना चानुपधाति चेतत्र दुर्दिने दुर्विद्वेशीतवातयोराश्विने भुक्ते मात्रे स्कन्वात् शोलितं न श्रवत्यस्य वाश
 वति ॥ नवतिचात्र ॥ मदमूर्छा अमर्त्यानां वातविण्मूत्रसंगिणो ॥ निद्रानिद्रतनीमानां नृणो नासकप्रवर्तते ॥ तत्र दुष्ट
 शोलितमनिद्रियमाणं शोफदाहरागपाकवेदनाजनयेत् ॥ अतिप्रवृद्धं व्यापादस्पृश्यं येत् ॥ अत्यस्मातिश्चिना
 तिविद्वेष्यं शैविश्ववितमतिप्रवर्तते ॥ तदतिप्रवृत्तं शिरोनितापं माध्यमधीमं थंति मिरप्रादुर्नो वंधाउक्षयमाक्षेपकं
 तस्मादाहं पक्षाघातं एकांगविकारहिष्कांश्चासंकासं पांडुरोगं मरणं चापादयति ॥ तस्मान्नशीतेनात्यस्मेनास्वि
 नेनातिपातिते ॥ यवाश्रुप्रतिपीतस्य शोलितं मोक्षयेत् निषक् ॥ सम्यक् सृज्यामदारकं स्वयमेवावतिष्ठते ॥ शुद्धं

निरुद्धं

गीष्मं

अथ उक्तं

२४॥

॥ राश्यां ॥


नागेद्विधा नूताळतिर एमुखी गोवंदं ते चेति । तानि र्दृष्टे पुरुषेदं शोस्व यथुरतिमात्रं वेदना कंदू मूर्च्छा ज्वरो दाह छ
 र्दिमदः सदनमिति लिङ्गानि न वंति । तत्र महागदः । पाना लेपनपंच सुजातिषु विषये एषा चिकित्सा क्रियते । मस्तक
 रणादिषु उपयो ज्यः । दंष्ट्रा युधादष्टमसाध्यमित्युक्ताः सविषाः सचिकित्सा ता व्याख्याताः । अथ निर्विषाः कपिलापिं
 गलाशंकुमुखी मूषिका पुंडरीकमुखी सांबरिका चेति । तत्र मनः शिखारंजिता न्यामिव पार्श्वान्यां पृष्टे स्थिता मुद्गवर्णा
 कपिला ॥ किंचिद्रक्ता वृत्तकायापि गाशु गाचपिं गला यल्लङ्घनी शीघ्रपायिनी दीर्घतीक्ष्णमुखी शंकुमुखी मूषिका ल
 ति वर्णानिष्टगंधा च मूषिका । मुद्गवर्णा पुंडरीक उल्लवक्रा पुंडरीकमुखी । स्निग्धा पद्मपत्रवर्णा अष्टादशो गुलप्रमा
 णा सांबरिका ॥ सा च पश्चर्ये इत्यविषा व्याख्याताः । तासां यवनपौष्ठादश संह्यपौतनादी निक्षेत्राणि तेषु महाशरीरा
 बलवन्त्यः शीघ्रपायिन्यो महाशानानिर्विषाश्च विशेषेण न वंति ॥ तत्र सविषमसकीर्णदुर्दूरमूत्रपुरीषकोथजाताः
 कलुषेष्टेनः सुचसविषाः पद्मोत्पलनलिन ऊमुदसौगंधिक कुवलय पुंडरीकरौ वलकोथजाता विमलेष्टेन स्सुच
 निर्विषाः । न वंति चात्र । क्षेत्रेषु विचरं त्येतः सखिलाद्य सुगंधिषु ॥ न च संकीर्णचारिण्यो न च पंकेराया सुखाः ॥ १॥

प्रेक्षुपाति

वाग्भट्टकृतदेशकृष्णातीक्ष्णरतः ४
 सखी नर्मदा पारपर्वतविशेषः ४
 पौतलो मधुरादेशः ४

तासां ग्रहणमात्रचर्मणा। अन्यैर्वाप्युद्योगैर्गृहीयात्॥ अथैनानवे महति घटे सरस्वतागोदकपंकमावाप्यनिदध्या
त्॥ नकार्थे चासामुपहरेत्। शैवलैर्वैष्णवरमोदकोश्च कंदाशूणि लुप्यनिदध्यात्। शय्यार्थे तणमोदकानि पत्राणि
ग्रहात् ग्रहात् चान्योजलनक्तंदद्यात्। सप्त रात्राश्च घटमन्ये संक्रामयेत्॥ नवति चान्न। स्थूलमध्याः परिक्रिष्टाः पृ
ष्ठमंदविचेष्टिताः। अग्रहाण्याव्यपायिन्यः सविषाश्च न सजिताः॥१॥ अथ जलौको वसे च कसाध्यं व्याधितमुपवेश्य वा
पिरूक्षतमवकाशं मृतगोये मेघैर्लेयं धरुजं स्यात्॥ अथ जलौका सोमद्रुकं कसंयुतेन जलेन बहिः प्रख्याप्य गृहीत्वा
चताः सप्त परजनीकल्लोदकप्रदिग्धगात्रीः सखिलसरकमध्ये मुहूर्तं स्थिता विगतक्लमाश्च विगतमलाश्च ज्ञात्वा ता
नि रोगं ग्राहयेत्। सूक्ष्मशुक्लद्रुपिचुसोतावच्छिन्नो वा ललाटमुखमपावृणुयात्। अगृह्योत्सीरे शोणितं विंदुवाद
द्यात्। रास्त्रपदानि वा ऊर्वीताय देवमपि न गृहीयात् तदान्योग्राहयेत् यदानि विराते अश्वसुरवदानं कृत्वोन्नम्य च
दीर्घं स्तब्धं तदा जानीयात्। गृह्णातीति। गृह्णातीति चार्द्रवस्त्रावच्छिन्नो धारयेत्॥ अथ दंशो तोदकं दूषादूनी वै जीनीयात्।
शुद्धमियमादत्त इति॥ शुद्धमाददानामपनयेत्॥ अथ शोणितगंधेन नमुंचेत्॥ मुखमस्यास्ततः सैंधवैर्लेना वकिरेत्॥

अथर्वश्रुतिः ५३

निस्तारति ५

रुधिरनिस्तारयोग्यः ९

नारीसुकुमारानामनुग्रहार्थं परं सुकुमारो यं शोणितवसे च नोपायो निहितो यः कुलौकसः ॥ तत्र वात्र पितृकफं
दुष्टं शोणितं यथासंख्यं शृंगजलौकोलांबुनिष्ठं हृत्वा ॥ स्निग्धशीतरुक्षत्वात् सर्वाणि सर्वैर्विशेषतस्तु विश्वायं
शृंगालाञ्च स्यात् हृत्वा ॥ नवति चान्ते ॥ उष्णसमेधुरं स्निग्धं गवां शृंगं प्रकीर्तितं ॥ तस्माद्वातोपसृष्टे तु हितं तदवसे च
ने ॥ १ ॥ शीताधिवासामधुराजलौकावारिसंज्ञवा ॥ तस्मात्पित्तोपसृष्टे तु हितासात्ववसे चने ॥ २ ॥ अलांबुकेदुकं रुक्षं ती
क्ष्णं च परिकीर्तितं ॥ तस्मात्क्षेत्रोपसृष्टे तु हितं तदवसे चने ॥ ३ ॥ अलांबुष्टांगुलं हन्यात् शृंगं च द्वादशांगुलं ॥ जलौका
चहरेत्तु येषु शिराः सर्वगतं हरेत् ॥ ४ ॥ तत्र प्रस्थिते तनुवस्ति पर्वलावनद्धेन शृंगेण शोतितं मवसे चयेत् ॥ आस्रपणा
त् ॥ सांते दीपयालां जलायुकावस्थंते ॥ जलमासामोयुरिति जलायुका जलमासामोके इति जलौकसः ॥ ताद्वादश
तासां सविषाः षट्तावन्त्येव निर्विषाः ॥ तत्र सविषाः ॥ लस्माकं कर्बुरात्रैगद्दीन्द्रायुधाः सामुद्रिका वगेचंदना चेति ॥ तासु
जनद्वर्णवर्णाः पृथुशिराः रुक्मा ॥ वर्मिमस्य वदायताः ॥ छिन्नोन्नतैकुक्षिः कर्बुरा रोमसामहापार्श्वः लस्ममुखी लगद्दी
न्द्रायुधवदूर्ध्वराजैति श्रितितेन्द्रायुधाः इषदसितपीतिका विचित्रपुष्पा लुति विचित्रा सामुद्रिका ॥ गोष्ठपणवदधो

सप्तके सुलला ५३

जलामानाः २

जलज्याल ३
नावरित्तिसारी ३

५३६

अमेतद्विनिः २

चिकित्सा

अनिक १

शोषेणावचारयेत्। अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि धूमोपहृतलक्षणं। स्वसितिक्षौति चात्यर्थमाप्याधमतिक्रमते ॥१॥ च
क्षुषः परिदाहश्चैरागश्चैवोपजायते सधूमकं निश्चसति घ्रेयमन्यनवेत्ति च ॥२॥ तथैव च रसान्शुसर्वान्शुतिश्चा
स्योपहन्यते। तस्मादाहज्वरयुतः सीदन्यथचमूछति ॥३॥ धूमोपहृतइत्येष शृणुतस्य चिकित्सितं। सर्पिरिक्षुर
संज्ञाक्षोपयो वाराक्षीरांबुवा ॥४॥ मधुरास्त्रोरसौ वापिव मनाय प्रदापयेत्। वमतः कोष्ठशुद्धिः स्यात्तद्धमगेधश्च निस्पति
॥५॥ विविधानां नैव सौम्येति सदनं सवयुज्वराः। दाहमूर्छा तडाध्मानश्च श्वासकासश्च दारुणाः ॥६॥ मधुरैर्लवणास्त्रैश्च
कटुकैः कवलप्रहैः। सम्पकृष्टह्लातीन्द्रियार्थान् मनश्चास्य प्रसीदति ॥७॥ शिरोविरेचनं चास्मै दद्याद्यसौ न शास्त्रवित् ॥
दृष्टिर्विशुध्यते चास्य शिरो ग्रीवा च देहिनः ॥८॥ अविदाहिलघुस्निग्ध आहारं चास्य कल्पयेत् ॥ उष्णवातातपैर्दग्धशीतः
कायो विधिः सदा ॥९॥ शीतवर्षानलैर्दग्धस्निग्ध उष्णस्य रास्यतो तथा तितेजसा दग्धे सिद्धिर्नोस्ति कथंचन ॥१०॥ इन्द्रव
ज्रास्त्रिदग्धेऽपि जीवति प्रतिकारयेत् ॥ स्नेहाभ्यंगपरीक्षोक्तैः प्रदेहैश्च तथा निषक् ॥११॥ ॥ इति सूत्रस्थाने द्वाद
शोऽध्यायः ॥ ॥१२॥ अथातो जौलोको वतरणीयमध्यायव्याख्यास्यामः ॥ ॥ नृपाद्यवाप्यस्तु विरजीरुदुर्वल

शा

२०

प्रसाधकं नवति ॥ नवतिचात्रा ॥ अग्निनाकोपं रक्तं नृशं जंतोः प्रकुप्यति ॥ ततस्तेनैव वेगेन पित्तमस्या लुदीर्यते ॥ १ ॥ तुल्य
वीर्ये उजे ह्येते रसतो वीर्यते सथा ॥ तेनास्य वेदना तीव्रा प्रसृत्या च विदह्यते ॥ २ ॥ स्फोटाः शीघ्रं प्रजायन्ते ज्वरतस्माच्च
ईते ॥ दग्दस्योपशमार्थाय चिकित्सा संप्रचक्ष्यते ॥ सुदृष्टस्याग्निप्रतपनं कार्यं मुख्यं तथोषधं ॥ शरीरे स्विन्नं नृपिष्टं सि
न्नं नवति शोणितं ॥ ४ ॥ प्रसृत्या ह्युदकं शीते स्कंदयत्यतिशोणितं ॥ तस्मात्सुखयति ह्यस्मिन्नुशीतं कथंचन ॥ ५ ॥
शीतामुष्मां च दुर्दग्धे क्रियां ऊर्यान्निषकपुनः ॥ घृतालेपनं सेकांस्तु शीतानैवास्य कोरयेत् ॥ ६ ॥ सम्यग्दग्धे तु
माक्षीरेः क्षसचंदनगैरिकैः ॥ सामृतैः सर्पिषा युक्तैः स्निग्धैरा लेपं कारयेत् निषक ॥ ७ ॥ ग्राम्यान् रूपोदकैश्चैव नैपिष्टा
मांसैः प्रलेपयेत् ॥ पित्तविद्रधि वच्चैव संततोष्माणामाचरेत् ॥ ८ ॥ अतिगदग्धे विशीर्णानि मांसान्युधृत्य शीतलां ॥ क्रि
यां तु र्यान्निषकपश्चात्शालितंदुलकंडनैः ॥ ९ ॥ तिदुकीत्वक्कषायैर्वा घृतमिश्रैः प्रलेपयेत् ॥ व्रणेषु दूचिपत्रैवा
छादयेदथ बोदकैः ॥ १० ॥ क्रियां ऊर्यान्निखिलां निषकपित्तविषं सप्यवत् ॥ मधुछिष्टं मधुकं रोध्रं सर्जरसं तथा ॥ ११ ॥
मंजिष्ठाचंदनं मूर्वापिष्टासर्पिर्विपाचयेत् ॥ सर्वेषामग्निदग्धानां एतद्रूपेण मुत्तमं ॥ १२ ॥ स्नेहदग्धे क्रियां रूक्षां वि

चोश्नेहः १

रूपा ३ लेपनं

शाल २

अग्निप्रतपनं रक्तं ५
सुदृष्टस्याग्निप्रतपनं ५
शीतं निषकपुनः ५

नवति

पित्तोत्ता ॥
पत्रकैः ५

१२

वंजना रोक्ताय हा हविष्वाकारो विवा कार वी दुहा विनिधा लेषा प्रतिभारणि फामा शी न्ना धर्षणी कुत्र चिरेवे लिख
 ममापि त्यक्ता वलायुते मला दा ह स्वल्प दा हो धी अपि नर न्ना निषेधा धी व्याधि ३
 सुतु वशि मप्रती कारार्थ ३ पित्त वधि मि त्यादि नो न्ना १४ ५ त्सा हि कृ पी ह ३
 मा ध्या दि रो गि ला ५ निव र निषे ध र म् चि रेण ले ४

लेपः

रा छेदनादिषु नाडीषु शोणितानि प्रवृत्तिषु चान्निभ कर्म ऊर्यात् ॥ तत्र रोगो ह्येति मावक्ष्ये हासिक कर्म चतुर्ध निधये ॥
 तद्यथा ॥ बन्धो योर्ध्व चंद्र बिंदु लेख्या प्रतिसार एानी निदहन विशोषा ॥ नवंति चात्र रोगस्य संस्थानमतो विदित्वानर
 स्य मर्माणि बलावलेच ॥ आधि तथां तु च समीक्ष्य सम्प कृततो व्यवस्ये द्विषग्निकर्म ॥ तत्र सम्प कद ग्धे मधुसम्पि न्या
 मयं गः ॥ अथेमान्निना परिहरेत् ॥ पित्त प्रवृत्ति मंतः शोणितं निन्न कोष्ठ मनुद्ध तेश ल्ये दुर्व लं बालं वृद्धां नीरु मने
 कप्रण पीडित मस्वेधांश्चेति ॥ इत उर्ध्व मितर थो दग्ध लक्षणं वक्ष्यामः ॥ तत्रे स्ति धं रू सं चा सृत्य द्रव्य मग्नि र्दहति ॥ अ
 निसंत सो हि स्नेह श्च शिरा मा ग्रां तु सारि त्वा त्त्व गा दी न्नु प्र विर पा शु दहति ॥ तस्मात् स्नेह दग्धे धिका रुजो नवंति
 तत्र सुष्टं दुर्दग्धं सम्प कद ग्धं चेति ॥ चतुर्विध मग्नि दग्धं ॥ तत्र यद्वि व र्णं सप्यते ॥ तिमात्रं तद्गुष्टं ॥ यत्रो त्रिष्टं तित्वोषदाह
 चोपौत वेदनाश्चिराश्चोपसाम्पंति ॥ तद्दुर्दग्धं सम्प कद ग्धं मनव गाढं ता लु फ ल व र्णं सु सं स्थि तर क्तं सर्व लक्षणं सं यु
 क्तं च ॥ अति दग्धे त्वग्मां सावलनं गात्र विक्षेपः ॥ शिरा स्नायु संध्य स्थि व्या पादन मति मात्र ज्वर दाह पिपासा मूर्छाश्चोप
 द्रवा ॥ नवंति ॥ अं ऐश्या स्य चिरेण रोहति ॥ रूढश्च विवर्णो नवति ॥ तदेतत् चतुर्विध मग्नि दग्ध लक्षणं मात्म कर्म पूर्वोक्तं

सर्व शरी
 चनेकोप
 रवः शोफ
 ती सारा द
 चिरा श्चोप
 स्थाना नि
 गत ३

चकारा
 धी रर का २

रा गो शा प्रमादिना रग्ध च पिना मि सा हा हा फ क किंति रू प द्वा रा ५ रू पी धि त धि रू र्ध द्वि वि र्ध रू स्ति धि स प्पि तै ला दि
 पूर्व रू स ग्रां वा प री त व र्णं लु प्य ते ही भ च ग ल स मी छो ष र्ध षः को प्ता वा र्ण ३ रु र्धे ला छ लो छ पा षा ण लो हा दि न ७
 य ज्ञो ति ति सा ला इ ति पु षे स्तो रो दु जो ना मि चि रा चो प श म इ ति
 च ५ चि रे द ५ र्ध ३

प्राणाशलोकालोहादिनिमित्तं ॥ १ ॥ अग्नीनां साध्यं कथ्यते ॥
 पीतसोमं अग्निर्मेतद ॥ २ ॥ आसन्नं तत्राग्नेः ॥ ३ ॥
 आग्नेहिके आलाप्य ये यदि नृजं हेत्यर्थः ॥ ४ ॥

शिताविधिः ॥ ५ ॥ अग्निना नृजं हेत्यर्थः ॥ ६ ॥
 पुनस्तुताते ॥ ७ ॥
 जोसकतूर ॥ ८ ॥

र्ममध्यायं व्याख्यास्यामः ॥ ॥ क्षारादग्निर्गरीयान् क्रिया सुव्याख्यातः ॥ तदग्धनां ॥ रोगाणामपुनर्नीवात् ॥
 स्वेदेनेषजशस्त्रक्षारैरसाध्यानां तसाध्यता च ॥ अथमानिदह नोपकरणानितर्था ॥ तत्रपिप्यजोसं दोदेंतं शर
 रालोकाजोबोष्टेतरलोहानिमोसगतानोक्षौद्रगुडस्नेहाश्च शिरास्नायुसंध्यस्थिगतानो ॥ तत्रानिकर्मसर्वं पुत्र
 र्यादन्यत्रशरद्रुक्मास्यो ॥ तत्राप्यात्यंतिके अग्निकर्मसाध्येवाधोतत्पनीकं शीतिविधित्वा सर्वं पुत्रतुषुचपिछलम
 नंतुक्तवतः कर्मज्यात् ॥ मूढगनीरमरीनगंदराशोमुखरोगेषु नुक्तवतः कर्मजवीत ॥ तत्रदिविधमग्निकर्माङ्कुरेके
 त्वकदग्धमांसदग्धं च इह तु शिरास्नायुसंध्यस्थिष्वपि न प्रतिषिद्धमि ॥ तत्रशब्दप्रादुर्भावोदुर्गंधतात्वकसंकोचश्च त
 दग्धैकपोतवर्णताव्यस्ययथुवेदनताशुष्कसंञ्चितव्रणताचमांसदग्धैकस्मोन्नतव्रणताश्रावसंनिरोधश्च शिरा
 स्नायुदग्धैरूक्षारुणताकर्कशस्थिरव्रणताचसंध्यस्थिदग्धं तत्रशिरारोगाधिमंथयोः ॥ त्रूललाटशंखप्रदेशेषु दहे
 त् ॥ वर्त्मरोगेष्वार्द्रनक्तं प्रतिष्ठानादृष्टिं कृत्वा वर्त्मरोगमुक्त्वा नृदहेत् ॥ त्वग्मांस शिरास्नायुसंध्यस्थिस्थिते ॥ अथ
 यसरुजेवायाबुद्धितकठिनसुप्तमांसैव्रणैर्यथ्यशोर्बुद नगंदरापेचीक्षीपदचर्मकीलतिलकात्रहृदिसंधिशि

आग्नेहिके विजोतमस्त

चरचराशब्दः चलात्तान्त्रेवगतात् ॥
 आग्नेहिके नेत्ररोगाः ॥ ७ ॥
 अतोमरुतास्तु ॥ ८ ॥

धूसरव
 ती ४



५

रसान्क्षारे सर्वानेवं विभावयेत्। लवणस्तत्र चूयिष्टः कटुको नुरसस्तथा ॥ ७ ॥ आम्बेन सह संयुक्तः सतीक्ष्ण
 वणोरसः। माधुर्यं न जतेत्यर्थे तीक्ष्णत्वं विमुच्यते ॥ माधुर्यात् शममाप्नोति वद्विरद्वि रिवाद्युतः। न तत्र विविधं स
 म्यक् दग्धं। अतिदग्धं हि न दग्धं तत्र सम्पकटदग्धेर्विकारोपशमो व्याधवमनाश्रवश्च। हीनदग्धे तोद दाहकं दूजाया
 निव्याधिद्विष्टा। अतिदग्धे दाहपाकरागश्चावांगमर्दकमपि पासामूर्छासुर्मरणावा ॥ सारदग्धं त्रैलोक्येया दोषं
 यथा व्याधिचोपक्रमेत् ॥ अथ नै तै सारत्वात् सद्यथा ॥ दुर्बलबाह्यस्थविरः नीरुसर्वांगस्तनोदरीरक्तपित्तीगर्भि
 णी तु मती प्रवृद्धज्वर ॥ प्रमेहरुक्षस्तक्षीणं हृस्मा मूर्छा पशुतक्ता वोपहतो हृत्तफलयोनयस्तथा मर्मशीरास्ता
 युसंधितरुणास्ति सेवनी गलनानि नखानि रशोकः श्रोतः स्तब्धमांसेषु च देशेषु स्मोक्षणान दद्याद न्यत्र वर्त्मरोगा
 न् ॥ तत्र सारसाध्येषु व्याधिषु स्तनगात्रमस्ति श्लिन्नमनद्वेषिण हृदयसंधिपीडोपदुते च सारो न साध्यति।
 न वंति चात्र। विषाग्निशस्त्राशानि मृत्फकल्पः सारो न वत्पल्पमतिः प्रयुक्तः ॥ सत्त्वप्रमत्तेन सदा प्रयुक्तो रोगान्नि
 हन्यादचिरेण घोरान् ॥ ॥ इति सुश्रुतसंहितायां सूत्रस्थाने एकादशोऽध्यायः ॥ ॥ अथातो अग्निक

तत्र सारसाध्येषु व्याधिषु स्तनगात्रमस्ति श्लिन्नमनद्वेषिण हृदयसंधिपीडोपदुते च सारो न साध्यति।

चतुर्थोऽध्यायः स्याद्विषयः। संस्कारादस्य मूलकं
 मोहं स्मिन् न सत्यानीकं रतिश्चोक्तिरज्ज
 पञ्चतासिपादकं ॥ नीकाशादीनां

यदेतद्विरुद्धिरस्य निवारणं। संधाने स्कंदेन चैव पाचनं दहनं तथा ॥३॥ ब्रह्मकषायः संधत्ते रक्तं स्कंदयते हिमं ॥ तथा
 संपाचयेत् न स्मराहः संकोचयेत् शिरा ॥४॥ अस्कंदमाने रुद्धिरे संधानानि प्रयोजयेत्। संधाने न स्पमाने तु पाचनैः स
 मुपाचरेत् ॥५॥ कस्यैरे निस्त्रिनिर्वेद्यः प्रयते तयथा विधिं ॥ असिधिमस्तु चैतेषु दाहः परमदृश्यते ॥६॥ शोषदोषय
 तो रक्तेन व्याधिरतिवर्तते ॥ सावशेषे ततस्तेयं न तु ऊर्यादति क्रमं ॥७॥ देहस्य रुद्धिरे मूलं रुद्धिरेणैव धार्यते। तस्मात्
 यत्नेन संस्पर्शं रक्तं जीवति स्थिते ॥८॥ श्रुतरक्तस्य शोकाद्यैः शीतैः प्रकुपितेऽनिले। शोफे सतो दंको ह्येन सर्पिषा
 परिवेचयेत् ॥९॥ इति सौश्रुतेऽप्युर्वेदशास्त्रे शोणितवर्णनीयो ध्यायेत् ॥१०॥ ॥ अथातो दोषधातुमलस्य
 रुद्धिर्विज्ञानीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥ ॥ दोषधातुमलमूलं शरीरं। तस्मादेतेषां लक्षणमुच्यमानमवधार
 यतत्र प्रस्यदा नो दहनं क्षरणविवेकधारणलक्षणवायुः पंचधा प्रविनक्तः शरीरं धारयति। रागपंक्तपो जस्ते जो
 मेधोष्मत्पित्तं पंचधा विनक्तं मयिकर्मणामनुग्रहं करोति ॥ संधिश्चेष न स्तेहनरोप ए क्षरणवले स्तेर्युत्त
 श्लेष्मा पंचधा प्रविनक्त उदककर्मणामनुग्रहं करोति ॥ रसस्त्रुष्टिं श्री ए न रक्तपुष्टिकरोति। रक्तं वर्णं प्रसादं मांस

संस्कृत ३ सैधन ७
तिशिवसैधन ३

शाल ५ विष्णुदीर्घ
स्वर्गदीर्घायाचो ५

प्राणादीर्घ ५
शुद्धिस्तोत्राष्टक ५

तद्विजानीयात्सम्यग्विश्वावितेचतत् ॥२॥ लाघवं वेदनाशान्तिव्याधिर्वेगपरिहयः ॥ सम्यक्विश्वोविते लिंगप्रसा
दो मनसस्तदा ॥३॥ त्वग्दोषा यथयः शोकाभ्यै शोणितजाश्वये । रक्तमोक्ष एसीलानोन नवंतिकदाचन ॥४॥ अथस्व
चप्रवर्तमाने रक्ते एवाशीतै शिव ऊष्टत गरपाठान्द्रदार्ढ्यविडंगचित्रकत्रिकटुकागारमहुरिद्राकां कुरनक्तमाक्षफले
यथा लानं त्रिनिश्चतुर्निः समस्तैर्वा ह्यणी रूतैर्लवणतैलप्रगाढैर्ब्रह्मवर्धुर्ध्वयै देवसम्यक् । प्रवर्तते ॥ अथातिप्रह
तैरोध्रमधुकप्रियंगुपतंगै सगैरिकसर्जै रसांजनशाल्मलीपुष्पै र्वंदूमांस्वशुक्रियगोक्षमहर्लेः शनैः शनैर्बर्णसु
खहर्णगुल्यग्रेणावपीडयेत् ॥ साक्षसंज्ञीर्जुनारिमेदेमेषष्टंगीधवधचनत्वमिर्वाह्यणी हृतानिः सौमेणवाध्यामि
तेन समुद्रफेनलाक्षाद्यैर्वा यथोक्तैर्ब्रह्मबंधनद्रव्यैः गाढं बध्नीयात् ॥ शीताच्छादनं नोजेनागारैः शीतैः प्रदेहपरिवेकै
श्चोपचरेत् । क्षारेणानिनावा दहेत् । यथोक्तव्यधनादनंतरं वातामेवातिप्रवृत्तां शिरां विधेत् । काकोल्यादिकोथं वा । श
र्करामधुमधुरं पाययेत् । एण हरिणोरन्त्रशशमाहिषवराहाणां वारुधिरं वाक्षीरसूषरासेः सुस्निग्धैः वैश्वाश्रीयादुप
द्रवैश्च यथाश्चमुपाचरेत् । नवंति चान् ॥ धातुः क्षयात् शुते रक्ते मंदः संजायते नलः ॥ पवनश्च परं कोपं याति तस्मात्प्रय
त्नतः ॥१॥ तन्नातिशीतैर्लघुनिः स्निग्धैः शोणितवर्द्धनैः । इषदस्यैः रमनस्यैर्वा नोजनैः समुपाचरेत् ॥२॥ चतुर्विधं

नक्तचि
साजेजो
पीते
गज-
जो-
र-
र-

दो प्रकु
ले प्रकु
शीन न
जाति
प्रीणा
प्रीणा

प्रीते उष्ण
उत्तोशीत

विद्वद्दीर्घ ५
यत्र वेद्यं तस्यैव
प्राणीसु परोक्षे
प्राणीसु परोक्षे
प्राणीसु परोक्षे
प्राणीसु परोक्षे

च प्राणायतनमुत्तमं ॥ देहस्यावयवस्तेन व्याप्तो नवतिदेहिनः ॥ अनिधाता तस्य या त्र कोपा त्र ध्याना त्र शोका त्र श्रमा त्र क्रोधः ॥
 भुंजः संसीयते ह्ये न्योधा तु ग्रह ए विनिःसृतं ॥ तेजः समीरितं तस्मात् विश्रंसं यतिदेहिनः ॥ तत्र विश्रंसो व्यापत् ॥ स ये इति
 लिङ्गानि नवेति ॥ व्यापनस्य संक्षिप्तं शेषो गत्राणां सदने दोषव्यवहः ॥ क्रियासंनिरोधश्च विश्रंसं स्तब्धं गुरुगात्रतावाताशो
 फोर्वर्णने दोषानि स्तब्धानि द्राव्यापाने मूर्छा मांसस्य यो मोहः प्रलापो मोहमिति च क्षीणो त्रयो दोषा बलस्योक्ता व्यापद्वि
 श्रंसने स्याः ॥ विशेषसादौ गत्राणां दोष विश्रंसनश्च मः ॥ अप्राचुर्यं क्रियाणां च मतं विश्रंसनस्य ॥ गुरुत्वे स्तब्धतां गेषु
 ग्लानिर्वर्णस्य नेदनं ॥ २॥ तं द्राविद्रावा त्र शोको बलव्यापदिक्लेशः ॥ मूर्छा मांसस्य यो मोहः प्रलापो स्तानमेव च ॥ ३ ॥ पूर्वोक्ता
 निचलिङ्गानि मरणं च बलस्ये ॥ तत्र विश्रंसं व्यापने च क्रियाविशेषः ॥ रविरुद्धैर्बलमाप्याययेत् ॥ नष्टं सप्तमितं रं वज्रं
 येत् ॥ तेजोप्याग्नेयं क्रमशः पच्यमानानां धातूनामग्निनिवृत्तं मुदरस्थं स्नेहजातं वसास्ये स्त्रीणां विशेषतो नवेत् ॥ ततमाह
 वसौ ऊर्मा र्प्यं मृद्वप्यरो तैमातो साहृष्टि स्थिति पत्निकांति दीप्तयो नवंति ॥ तत्कषाय तिकसीत गुरु रूक्षा विष्टं नवे गाधा
 तमवायव्यायामव्याधिकर्षनैर्विक्रयते ॥ तस्यापि पारुष्यवर्णने दतोदनिः प्रजन्तानि विश्रंसने नवंति ॥ कार्श्यं मंदानि

पितृद्वौ पीतावनासतासंतापः शीतकामित्वं अल्पनिद्रतामूर्छाबलहानिरिन्द्रियदौर्बल्यं पीतविण्मूत्रनेत्रत्वचश्चे
 ष्मद्वद्वौ शौक्ल्यं स्त्रैर्यंगौरवमवसादस्ते दानिद्रासंध्यतिशेषश्चरसोऽनिद्रद्वौ हृदयक्लेदप्रसेकंचापादयति। रक्तं रक्तो गा
 स्तितां शिरापूर्णत्वं च मासं स्फिकगडोष्टोपस्तेरुवाकुजं घासुष्टद्विगुरुगात्रतां च॥ मेदः स्निग्धं गतामुदरपार्श्वद्विका
 सश्वासादीन् रोगं ध्ये च॥ अस्मभ्यस्तीत्यधिदेतांश्च॥ मज्जासर्वांगनेत्रगौरवं। शुक्रं शुक्राश्मरीमतिप्रादुर्भावंच॥ पुरीषं मा
 तोपंजलौ शुक्लंच॥ सूत्रं मुकुर्मुकुः प्रवृत्तिवस्ति तोदमाभ्यानं च॥ गजैर्जठरान्निद्रद्विस्त्रेदंच॥ तेषां यथास्वरोधनं सपणंच॥
 * स्वेदस्त्वदौ रोगं ध्ये कं डूंच॥ आर्तवमंगमर्दमतिप्रवृत्तिदौर्बल्यंच॥ स्नयं स्ननयोरापीनत्वं मुकुर्मुकुः प्रवृत्ति तोदंच॥ * स्रुया
 दविरुद्धैः क्रियाविशेषैः प्रज्वलीत॥ सर्वः सर्वोतिवृद्धत्वात्तर्क्ये द्विपरंपरं। तस्मादतिप्रवृद्धानां धातूनां दासनं हितं। लंबं
 लक्षणं बलसयलक्षणं चातर्क्यवस्थामः। तत्र रसादीनां शुक्रां तानां धातूनां यत्परं तेजः तत्स्वचोक्तस्तदेव बलमित्यु
 च्यते। स्वरास्त्रासिद्धां तात्तत्र बलेन स्थिरोपचितमांसता सर्वेष्वेष्टास्वप्रतिघातः स्वरवर्णप्रसादो बाह्यानामन्यतराणां
 च करणानामात्मकार्यप्रतिपत्तिर्नवति। नवतिचात्र। अजसोमात्मकं स्निग्धं शुक्लं शीतं स्थिरं सरं। विविक्तं मृदु मृत्स्वं

कदम्ब

वनं ज्ञेयम् ५

७

शिलाजतुगुगुलुगोमूत्रत्रिकलालोहरजासरसांजनमधुयवमुद्रकोरदूषकश्यामाकोट्टालकादीनांरूक्षणछेदनीया
नोचद्रव्याणांविधिवदुपयोगोद्यायामोलेखनेवस्फुपयोगश्चेति। तत्रपुनर्वातलाहारसेविनोतिव्यायामव्यवायामयन
चितानयशोकशोकध्यानरात्रिजागरणपिपासासुकखायाप्याशनप्रवृत्तिनिः उपशोषितोरसधातुः शरीरमनुका
मन्तल्पत्वात् न प्रणीयति तस्मादतिकार्ष्यं नवति। सोतिष्ठशः सुतिपासासीतोष्मवातवर्षा-नारादानेष्वसहिष्णुना
नरोगप्रायोप्यप्राणश्चक्रियासु नवति॥ श्वासकासशोषस्त्रीहोदरात्रिसादगुल्मरक्तपित्तानामन्यतमंप्राप्यमरणमु
पयाति। सर्वएवचास्परोगावलवंतो नवति। अल्पप्राणत्वादतेस्स स्यात्पतिहेतुं परिहरेत्। उत्पन्नेतुपयश्चास्याश्वगंधा
दिदारीविदारिगंधाशतावरीबलातिबलानागबलानामधुराणामन्यासांचौषधीनामुपयोगः। स्त्रीरदधिदृतमांसश
लिषष्टिकगोक्षमानांचदिवास्वप्नब्रह्मचार्याव्यायामवृहलेवस्फुपयोगश्चेति। यः पुनरुनयसाधारणान्कपसेवते तस्य
नरसः शरीरमनुकामन्धात्तनुपचिनोति। समधातुत्वान्मध्यशरीरो नवति। सर्वक्रियासु समर्थः सुतिपासाशीतो
ष्मवातवर्षातपसहोबलवांश्च सततमनुपालयितव्यो नवति॥ नवतिचात्र॥ अत्यंतऊसितावेतौ सदा स्खलन्तौ न

शास्त्रयोगे ४

२०॥

तामलानां धनिर्यत्कप्रकृतिर्वापतौ तस्मान्निर्वलहानि अनिलप्रकोपमरणानि सयेत तत्र स्नेहपानाभ्यंगप्रदेहपरि
 षेकः लघ्वनानि सयविदधित। नवतिचात्र। दोषधातुमलक्ष्णीलोबलक्ष्णीलोपिवानरः। स्वयोनिर्वर्द्धनं नोक्तं अनपानं प्र
 कोस्पते ॥ १॥ यद्यदाहारजाते हि क्षीणः प्रार्थयते नरः। तस्य तस्य सत्त्वात्तेन तं तं सयमपोहति ॥ २॥ यस्मात्तुः सयादायुः संसा
 कर्मविनाशयेत्। प्रसीलं च बलं यस्यासौ शक्यश्चिकित्सितुं ॥ ३॥ सर्वः सर्वोतिष्ठत्वात् वर्द्धयति परं परं। तस्मादतिप्रवृद्धा
 नां धातुनां क्षीणं न हि ते ॥ ४॥ रसमिति तमेव स्त्रोऽप्यकार्षे च ॥ तत्र श्लेष्मिधाहारसेविनोऽध्ययनशीलस्य अवयामिनो दि
 वा स्वप्नतरस्य च आम एवा नरसो मधुरतरश्च शरीरमनुकाम न तस्नेहान्मेदो जनयति ॥ तदतिस्त्रोऽप्यमापादयति ॥ त
 मतिस्त्रोऽप्यमापादयति। तमतिस्त्रोऽप्यं सुदृश्वासपिपासास्तु तस्वप्नस्वेदगात्रदौर्गंधं कुथनं सादगद्गदत्वानि स्निग्धमे
 वा विशंति। सौकुमार्यान्मेदसः सर्वक्रियास्तु समर्थः। कफमेदो निरुद्धमार्गत्वाच्चाल्यविशयो नवत्यावृत्तमार्गत्वात् शोषो
 धातवो न आप्यायंते। इत्यर्थमतोऽप्यप्राणो नवति। प्रमेहपितृकाज्वरनगंदरविद्विधातविकाराणामन्यतमं प्राप्य प
 चत्वमुपयाति ॥ सर्व एव चास्परोगावलवंतो न वंत्यावृत्तमार्गत्वात् श्रोत सामतस्तस्योत्पत्तिहेतुं परिहरेत्। उल्लेखेने तु

सुतापि

मा

आयुते विध्येत्। प्रतनुकंश्च्यवकुलधोरया सर्वदक्षिणं ऊमारस्यवामं कन्यायां विंधावपिचुवती प्रवेशयेत्॥ सम्पक्विदुमा
मतेलेन परिषेचयेत्। शोणितवकुलेन वेदनायां चान्यदेशविदुमिति निरुपद्रवतया उग्रदेशविदुमिति। तत्रासेन
यदृष्टया विंधासुशिरासु कालिका मूर्मुरिका लोहितका सोपद्रवानवन्ति। कालिकायां च रोदाहः श्वयथुर्वेदना
च नवति॥ मूर्मुरिकायां वेदना च रोमथयश्च। लोहितकायां मन्यास्तं जोऽपती नैकं शिरोग्रहः कर्णश्रुतानि नवन्ति॥
तेषु च यथास्वंप्रतिजुवीते। क्लिष्टजिह्वाशस्तश्चोष्मधादेव गाढवर्त्तिता दोषसमुदायाश्च रास्तम्यधा दायत्रसं
रंजो बलवान् वेदनावानवति। तत्र वर्त्तिमपहृत्य मधुकैरंडसूक्ष्मं जिष्टायवतिलकैर्मधुघृतप्रगाढैरा लेपये
त्तावत्तयावत्सुरूठइति सुरूठं चैनं पुनर्विध्यत्॥ विधानं तु सर्वैकमेव। तत्र सम्पक्विदुमा मतेलेन परिषेचयेत्।
अहा अहा इति स्खलां स्खलत रांदद्यात्परिषेकं च॥ तमेव। अथ अपगता दोषो द्वैकैर्लेपैर्वेदनं कंजयाम्॥ नवति वा
त्र॥ एवं विवेक्षितः कर्णं छिद्यते उद्विधान्तरां। दोषतो वा निद्या तादासंधानं तस्य मेष्टु। तत्र समासेन पंचदश कर्ण
संधिवंधान्ततयः। तद्यथा॥ नेमी संधानका उत्पलनेदको वस्त्ररक आसंगिमोगं उकर्ण आहायो निर्वेधि मोच्यायो

प३३ लक्ष्मणनोर्थ ३

अथ गी २

सौ। अष्टौ। मध्यशरीरस्तुल्यः स्त्रुधातु सजितः॥१॥ दोषप्रकुपितो धातु न स पयन्यात्मने जसा॥ इदं स्वतेजसा वक्रि
रुषागतमिवोदकं॥२॥ वैलस्य एषा तृतीया राणां अस्त्रावित्वा तथैव च॥ दोषधातु मलानां तु परिमाणं न विद्यते॥३॥ ए
षो समत्वं यच्चापि निषग्निरवधार्यते। न तत्र स्वास्त्रादृते राक्षसं वक्तुं मन्येन हेतुना॥४॥ दोषादीनां तु समतां अनुमा
नेन लक्ष्ययेत्॥ अप्रसन्नैर्द्वियं वीक्ष्य पुरुषं ऊरा लोनिषक॥५॥ जठरानलं दोर्व्यात् अविपक्व स्तु योरसः। स
आमसं शो दोषः सर्वव्याधिप्रकोपनः॥६॥ समदोषः समानिश्च समधातु मूलक्रियः। प्रसन्नोर्मे द्वियमनाः स्वस्थ
इत्यनिधीयते॥७॥ स्वस्थस्य रस एऊर्यात् अस्वस्थस्य तु बुद्धिमान्॥ सेपयेत्तु हृदये चापि दोषधातु मलान् नि
षक॥८॥ तावत्प्रायद रोगः स्यात् नरो रोग समन्वितः॥ इति सौश्रुते सूत्रस्थाने पंचदशोऽध्यायः॥ अ
नथातः कर्णवैधवैधविधिमध्यायं व्याख्यास्यामः॥ अथ खलुरसाक्षर ए निमित्तं बालस्य कर्णो विध्यते॥
नोषष्टे मासि सप्तमे वा। शुक्लं पक्षे प्रशस्तेषु तिथि करण मुहूर्ते नक्षत्रेषु लतमंगल स्वस्तिवाचनं ध्यायं कर्णं ऊमा रं मु
पवेश्य बालं कीडनं कर्णं खलोऽपानि सांत्वयौ मानो निषकं वामहस्तेनालक्ष्य कर्णं दैवतं ते छिद्रे शनैः शनैर्दृष्ट्वा हस्तेन

देवार

एकैव तु न वेत्यादिः स्तूयादधी स्तिरात्रुया। तां द्विधा पाटयित्वा तु स्तिवाचोपरि संधयेत् ॥ ३ ॥ गंडादुत्पाद्य रमांसेन
सानुबंधेन जीवता। कर्णं मालिमपा ले स्तुर्क्या र्निर्लिख्य शस्त्रवित् ॥ ४ ॥ अतो अन्यतमं बंधं चिकीर्षुरगोपहर
णीयोक्तोपसंनृतसंनारं विशेषतश्चात्रोपहरेत्। सुरामंडं क्षीरमुदकं धान्याम्लं कपालचूर्णं चेति। ततो गनापुरु
षं वाग्रथितकेशांतं लघुनुक्तवंतमाक्षः सुपरिगृहीतं कृत्वा बंधमुपधार्य छेद्यनेद्यलेख्यवेधनैरुपपन्नैरुपपाद्य
कर्णशोणितमवेक्ष्य दुष्टमदुष्टं चेति। तत्र वा दुष्टे धान्याम्लोऽस्मोदकान्यां पित्तदुष्टे शीतोदकपयोऽन्यांश्चेष्मदुष्टे सु
रामंडोऽस्मोदकान्यां शरव्याभ्य कर्णं पुनराविलिख्यानुन्नतमहिना विषमं चेत्कर्णसंभ्रंसं निवेश्य स्थितरक्ते संनि
दध्यात् ततो मधुघृतेनाभ्यज्य पित्तघ्नो नयोरन्यतरेणावगुंघ्र्य सूत्रेणानवगाढमशियिलंबधा कपालचूर्णैरिव की
र्याचारिकमादिशेत्। द्विषणीयोक्तेन विधानेनोपचरेत्। न वतिचात्र। विद्यदने विं दिवा स्वप्नं व्यायाममतिनोज
ने। व्यवायमग्निसंतापं वा कश्चिन्मं च विवर्जयेत् ॥ १॥ आमतैलपरीषेकं त्रिरात्रमवचारयेत् ॥ ततस्तैलेन संसृष्टं
हावपनयेत्पित्तु। नचाशुद्धरक्तप्रवृत्तरक्तं क्षीणरक्तं वा संनिदध्यात् ॥ सहिवातदुष्टे रक्ते रूढोपि परिपुटवान् ॥

जिमः॥ कपाटसंधिकोर्द्धकपाटसंधिकः संसि सोहीनकर्णौ वक्षीकर्णौ यष्टिकर्णः काकोष्टिक इति। तेषु पृथु लाय
तसमोनयपालिर्नेमी संधानक वृत्ताय तसमोनयपालिरुल्लेखनेद्यकः। क्रस्ववृत्तसमोनयपालिर्वक्षूरकः॥ अन्यं
तरदीर्घकपालिरासंजिमः॥ बाह्यदीर्घकपालिर्गोत्रकः॥ अपालिरुनय तोष्पाहार्यः॥ पीठोपमपालिरुनयतः सीए
पत्रिकाश्रुतो निर्वेधिमः॥ स्तूलाणु समविषमपालिव्यो योजिमः॥ अन्यंतरदीर्घकपालिरितरा ल्यपालिः कपाटसंधि
कः॥ बाह्यदीर्घकपालिरितरा ल्यपालिरुर्द्धकपाटसंधिकः॥ तत्रदशौ तु कर्णवंधविकल्याः साध्यास्तेषां नाम निरेवा
रुतयः प्रायेण व्याख्याताः॥ संसि द्वादयः पंचाः साध्याः॥ तत्र शुष्क शुल्लु रुच्छ नपालितितरा ल्यपालिः संसि सः॥ अ
धिष्ठानं पर्यंत योश्च सी ए मां सो ही न कर्णः॥ तनुर्विषमा ल्यपालिर्वक्षीकर्णः॥ यथितनिर्मो सस्तश्च शिरा तोश्च स्म
पालिर्यष्टीकर्णः॥ निर्मो स संसि द्वा ग्रा ल्य शो लित पालिः काकोष्टिक इति साध्येष्वपि बंधेष्वपि शो फ दा ह रा ग पा क
पिडिका आ वो प द्र व यु क्तान सिद्धि मु प यां ति। न वे ति चात्रा। यस्य पालि द्वय मपि कर्णस्य न न वे दि ह कर्ण पी ठं स मे म ध्ये
तस्य निर्विध्यवर्द्धयेत्। बाह्या यामि ह दी र्घा यां संधि रा न्यं त रो न वे त्॥ अन्यं तरा यां दी र्घा यां बाह्य संधि रु दा द्रु तः॥ २॥

स्मिः। सुखे वेद नो यस्तु तं कर्णवर्द्धयेत् शनैः॥७॥ कर्णपाश्यामयान्दृष्ट्वा पुनर्वक्ष्यामि सुश्रुतः॥ कर्णपाश्यां
 प्रकुपिताः वातपित्तकफोत्त्रयः॥८॥ द्विधा त्रिधा च संसृष्टाः ऊर्वति विविधा रुजः॥ विस्फोटास्तद्वृताः शोकाः पा
 श्यादुष्टे तु वातिके॥९॥ दाहविस्फोटजननशोफपाकश्च पैत्रिके। कंदूश्च ध्वयधुस्ते नो गुरुत्वे च कफात्मके॥
 यथा दोषे च संशोध्य ऊर्था तैवां चिकित्सितं॥ स्वेदान्यंगपरीक्षकैः प्रलेपास्तृप्तिमोक्षणैः॥१०॥ मृद्वीक्रियां बृह
 णीयैः यथास्वं नोजनैस्तथा। य एव वेति दोषाणां सचिकित्सां कर्तुं महति॥११॥ अत उर्ध्वनामं लिगैव सेपाश्यामु
 पद्रवान्। उत्पाटनो ह्युत्पटनः श्यावकंदूयते नृशो॥१२॥ अवमंथः सकंदूको ग्रंथिको जंबुलस्तथा। श्रावी विवा
 दिवोश्चैव शूलेषां क्रमशः क्रियाः॥१३॥ अपामार्गसर्जं रसः पादलाव ऊचत्वचौ। उत्पद्यमाने लेपः स्यात् तैल
 मनिश्चयात्॥१४॥ श्यामा कशिंशुसती कगो धामे दोषा तद्वसा। वाराहमस्य मैलेष्यपित्तं सपिंशुसं सृजेत्
 ॥१५॥ लेपमुत्पटके रघातैलमे निश्च साधितं। गौरी सुगंधां सस्यामं अनैनां तंदुर्लीयको॥१६॥ स्यावे प्रलेपं
 संदधात् तैलमे निश्च साधितं॥ पाठारसो जनसौद्रं तथा स्यादस्त्रकोजिकं॥१७॥ तन्यालेपं सकंदूके तैलमे

पिबदुष्टेदाहपाकरागवेदनावान्। श्लेष्मदुष्टस्तश्च कंडूमान्। अपहृत्तरक्ते स्यावशोफवान्। स्त्रीणोऽप्यमांसोनृदि
मुपैति। सयदोऽसूतुनिरुपद्रवः सवर्णोऽनवति। तदेनैरानैः शनैरप्रवर्द्धयेत्। अतोऽन्यथा संरुं नदाहपाकरागवेदना
वान् पुनश्चिद्यते च। अथ स्योपदुष्टस्यातिवर्द्धनार्थमन्यंगः। तत्र यथा गोधाप्रतुंद विक्षिरत्तपोदुक्तां सवसामज्ज
सर्पिः तैलंगौरसर्पपचैर्जयथाधानं संरुत्याऽऽक्षिप्य च लातिवधानं तापार्थं श्वगंधाविदारिगंधाक्षीरशुक्ला
जलश्लकयवमधुकमधुरकवर्गपयस्याप्रतिवापं तैलपाचयित्वा स्यनुगुप्तं निदध्यात्। श्वेदितोऽमर्दितं कर्णस्त्रि
हेनैतेन योजयेत्। अथानुपद्रवः सम्यक् बलवांश्च विवर्द्धयेत्॥१॥ यवाश्च गंधाय स्याद्वै तैले श्वेदितं न हितं।
सितावर्यश्च गंधाऽप्ययस्पा रंडजीवनैः॥२॥ तैले विपक्वसक्षीरमन्यगात्पालिवर्द्धनं॥ ये तु कक्षीनवर्द्धयेत्ते विवि
धानेन योजिताः॥३॥ अथामपांगदेषु शोतुर्ज्यात् एछन्नमेव च। वात्येदं न ऊर्वीतया पदस्तु ततोऽक्रवा॥४॥ अ
मिताः कर्णबंधास्तु विज्ञेया ऊश्लैरिह॥ यो यथा सुविनिष्ट स्यात् तं तथा विनियोजयेत्॥५॥ अरुदंतु यदा क
र्णसहसैवातिवर्द्धयेत्। आमकोशी समाध्यातः। क्षिप्रमेव विमुच्यते॥६॥ जातरोमा सुवर्मा च क्षिप्रं संधि सम

जीर्णस्निग्धविरेच्यथोपदेशं ॥३०॥ रूढं च संधानमुपागतं स्यात्तदुर्दशेषंतु पुनर्निवृत्ते। हीना पुनर्व
 र्दयितुं यते तसमां च ऊर्यादतिवृद्धमासां ॥३१॥ नाडीयोगं विनोष्टस्य नासासंधानैव द्विद्धि। य एवमेवं जानी
 यात्सरासः कतुमर्हपि ॥ इति सौश्रुते सूत्रस्थाने षोडशोऽध्यायः ॥१६॥ ॥ अथातः आमपक्वे सृणी
 यमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥ अथ शोफसमुच्छानाग्रंथिविद्वध्वलजीघ्रतयः ॥ प्रायेण व्याधयोऽनिधास्यंते।
 अनेकास्तयः तैर्विषयैः उत्पन्नतः पृथुर्यथितः समो विषमो वा त्वग्मांसस्थायी दोषसंघातः शरीरे को देशोऽस्ति
 तः शोफ इत्युच्यते ॥ स षड्विधो वातपित्तकफशोणितं सन्निपातागंतुनिमित्तः। तस्य दोषरूपव्यंजनैर्लक्षणानि
 व्याख्यास्यामः ॥ तत्र वातश्च यथुररुणः तृष्णो वापुरुषो मृदुः अ० नवस्थिता स्तोदादयश्चात्र वेदना विशेषा नवं
 ति ॥ श्लेष्मश्च यथुः पांडुरुको वा कठिनः स्निग्धो मंदानुसारिकं द्वादयश्चात्र वेदना विशेषाः नवंति। सन्निपातश्च
 यथुः सर्वदोषविशेषलिगोपेतः ॥ पित्तवत् शोणितं जोतिरुष्मपित्तं रक्तलक्षणं। आगंतुर्लोहिता वनासश्च स यदा
 बाह्याभ्यंतरेः क्रियाविशेषैर्न संज्ञावितः प्रशमयितुं क्रियाविपर्ययाद्भुत्वाद्वा दोषाणां तदा पाकतिमुखो न

लोकात् वसत विवर्तते

निश्च साधितं। व्रणीकृतस्य देयं स्यादिदं तैलं विजानता ॥१९॥ मधुकंदी रकाकोली जीवकाद्यैर्विपाचितं। गोधावराह
सर्पाणां वसास्युः ततश्च हरे ॥२०॥ प्रलेपनमिदं दद्यात्तदवसिध्याथ मंथके। प्रपौंडरीकं मधुकंदं समं गंधवमेव च ॥२१॥
तैलमे निश्च संपक्वं शृणुकंदं मृतः क्रियां ॥ सह देवा विश्वदेवा अजाती रं स सैधवं ॥२२॥ एतैरा लेपनं दद्यात्तैलमे निश्च
साधितं। ग्रंथिके गुटिकां सर्वं श्रावयेदवपाचयेत् ॥२३॥ ततः सैधवचूर्णेन दृष्ट्वा लेपं प्रदापयेत्। लिखित्वा वा श्र
तं दृष्ट्वा चूर्णे रोधस्य जंबुलं ॥२४॥ क्षारेण प्रतिसार्येनं शुद्धं संरोपयेत्ततः। मधुपर्णी मधुकंदं च मधुकंदं मधुता सह ॥२५॥
लेपः श्राविलिदातव्यं तैलमे निश्च साधितं। पंचकं कै समधुकैः पिष्टे स्तैश्च घृतान्चितैः ॥२६॥ जीवकाद्यैः स सपिष्टैः
दध्यमानं प्रलेपयेत्। विश्वे विताया स्वथकना सिकायाः। वस्यामि संधान विधिं यथावत् ॥ नाशा प्रमाणं दृष्टि वीरुहा
णां पत्रं गृहीत्वा त्व विलंबित स्या ॥२७॥ तेन प्रमाणेन हि गंडपांश्चां बुद्धत्य बद्धं त्वथ ना सिकाग्रं। विलिख्य वातु प्रविशं
धीत तं साधु बद्धं निषग प्रमत्त ॥२८॥ सुसंहितं सम्पगतो यथावत् नूडी दयेना नि समिस्पवद्धा। श्रोत्रं मूत्रं वैनाम वक्ष्ये
येन पतंग यष्टी मधुकां जनैश्च ॥२९॥ संस्थाप्य सम्पक् पिचुना व्रणं तैलेन सिंवेद संलुति लानां। घृतं च पायः स नरः सु

वति। तस्यामस्य पचमानस्य पक्वस्य लक्षणमुच्यमानमुपधारये। तत्र मंदोष्णतात्वं कसवर्णताशीतशोफतास्त्वैर्यमं
दवेदनतालशोफतावामलक्षणमुद्दिष्टं। सूचीनिरिव निस्सुद्यते। दस्य तद्वापि ष्यदिका निः। तानि श्वसं सप्यं तद्
वच्छिद्य तद्बरास्त्रेणानिद्य तद्बचराक्किनिस्नाद्य तद्बचदंडेन पीद्य तद्बचपिलिना॥ वर्य्यं तद्बचो गुल्यादह्यते।
पच्यतद्बचाग्निक्षाराभ्यामोषचोषपरिदाहाश्चेवेदना नवंति॥ वृश्चकविद्धद्बचच्छानासनशयनेषु नशांतिमुपैति॥
अध्मातवस्तिरिवाततश्च शोफतावलीप्रोदुर्नावस्त्वक्परिपुटनं निम्नदर्शनं। अंगुल्यावपीडिते प्रत्युन्नमनं वस्त्रा
विवोदकसंचरणं च हृयस्य प्रपीडयत्येकमेतमेते चावपीडिते मुकुर्मुकुस्तोदः कंदूरन्नतव्याधिरुपद्रवशांतिर्न
त्पानिकोक्षाचपक्वलिङ्गं। कफजेषु तु रोगेषु गंभीरगतिः। त्वादनिघातजेषु च प्राधकेषु किंचिदसमस्तं पक्वज
लमुद्दिष्टं दृष्ट्वा पक्वमप्यपक्वमन्यमानो निषक्मोहमुपैति। तत्र हित्व कसवर्णताशीतशोफतास्त्वैर्यमस्य रुजता
श्मवच्चघनतानमोहमुपेयादिति। नवंति चात्र॥ आमं विदह्यमानं च सम्यक् पक्वं वयोनिषक्। जानीयात्सनवेद्वेद्यः
शेषास्तस्करष्टयः॥ १॥ वाताहतेनास्ति रुजानपाकः। पित्राहतेनास्ति कफाच्च सयः। तस्मात्तसमस्तान् परिपाकका

लेपचंति शोफांस्त्रय एव दोषाः॥ तस्माच्च सर्वे त्रिजिरेव दोषैः संपाकमायातिविकारसंघाः। कालान्तरेणाभ्युदितं तु
 पित्तं कृत्वा वशे वातकफौ प्रसह्य॥२॥ पचत्यतः शोणितमेव पाको मतो परेषां विदुषां द्वितीयः। तत्रामले देहोऽस्य शिरा
 स्नायुसंध्यापादनैः। शोणितोति प्रवृत्तिवेदना प्रादुर्भावो वृद्धरणमनेकोपोऽवदर्शनं॥ स तविद्वति वा नवति।
 स यदा नय मोहान्पां पक्वमप्यपक्वमतिमन्यमानश्चिरमुपेक्षते। व्याधिर्वैद्यस्तदागं नीरागुगतो हारमलनमानः स
 यः स्वमाश्रयो भवदायी संगमहोतमवकाशं कृत्वा नाडीजनयित्वा कृच्छ्राध्यो नवत्यसाध्यो वेति। नवति चान्न॥
 यश्चिन्नन्याममशानात्त्यश्च पक्वमुपेक्षते। स्वपचाविव मंतद्यौतावनिश्चितकारिणौ। प्राकृशस्त्रकर्मणश्चेष्टं नोजये
 दातुरं लिषक्। मद्यपंपाययेन्मद्यं तीक्ष्णो यो वेदना सह॥ नमूर्च्छत्यन्नसंयोगात् मत्तः शस्त्रं नैव बुध्यते॥२॥ तस्मादवश्यं
 नोक्तं यं रोगेऽस्तेषु कर्मणि। प्राणो ह्यान्यतरो नृणां वायुः प्राणगुणान्वितः॥ आधारयेत्यविरोधेन शरीरं पांचनो
 तिकं॥ अग्नौ महाबाक्रियया विनायः समुत्थितः पाकमुपैति शोफः॥ विशालमूलो विषमं विदग्धः सल्लघुतां यात्य
 वगाढदोषः॥ आलेपविश्रावणशोधनैस्तु सम्पक्वमुक्तैर्यदि नोपशाम्येत्। पच्येत शीघ्रं सममल्पमूलं सपिडित

तत्र कोशमंगुष्टागुलिपर्वसु विदध्यात्। दामसंवाधे गेसं धिकूर्चकं नूतनोतरं कर्णेषु स्वस्तिकं स्त्रिगिकां यमलव
णयो र्यमकं हनुशखगते पुरवडामपंगयो चीनं पृष्टोदरोरः सुविबंधं मूर्धनि विनाने चिबुकनासौष्टावस्तिपुगोः क
णोजनन एतु ई पंचागीचेति। योवायस्मिन् शरीरप्रदेशे सुनिविष्टो नवति। तं तस्मिन् विदध्यात्। येन कर्मजुर्मधस्ति
र्यक॥ तत्र घनांकवलि कोदत्वा वामहस्तपरिद्वेपमृजुमनाविदमसंकुचितं मृदुपदं निवेश्य बध्नीयात्। न च व्रणस्या
परिजृयात्। ग्रंथिबाधकरं वा न च विकेशिको मुखे तिस्मिन् अतिरूक्षे विषमे र्जुर्वीत। तस्मादतिस्नेहात् केदो रौस्या
छेदो दुर्गो साध्या वत्मा वध्नीयमिति। तत्र व्रणायै तं न विरोधात् बंधत्रिविधो गाढः समः शिथिलः इति॥ कीडय च रु
जोगाढः सोष्णो स शिथिलः समो बंधः प्रकीर्तितः॥ तत्र स्फिकजसिकसावदं एतु शिरः सुगाढः। शाखावदनकर्णकं
ठमेदु मुखपृष्ठपाश्वीदरोरुः सुसमः अदृष्टो संधिषु शिथिल इति॥ तत्र पैत्तिकं गाढस्थाने समं बध्नीयात्॥ समस्थाने
शिथिलं शिथिलस्थाने नैव एव शोणित दुष्टं च॥ तत्र श्लेष्मिकं शिथिलस्थाने समं समं स्थाने। गाढं गाढस्थाने गाढतरं।
एव वा तदुष्टं च। तत्र पैत्तिकं शरदिग्रीष्मादिरद्रो बध्नीयात्। रक्तोपदुतमप्येवं श्लेष्मिकं हेमंतवसंतयोः स्महात्वा तो

स्मृते नैव गाढे जशिथिलः ४५

पदुतमप्येवं। एवमप्यस्य बंधविपर्ययच ऊचीत। तत्र समश्लिषि लब्धाने शुगाटं बंधे विकेसिकौषधनै रर्थसंशोफवेद
 नोप्रादुर्भावश्च गाढसमस्थानेषु श्लिषि लब्धे विकेसिकौषध पतनै पदरां चारात् व्रणवर्मावधर्षणमिति गाढश्लिषि
 लब्धाने समंबद्धे बंधगुणानावदति॥ अविपरितबद्धे वेदनोपशान्तिरसकप्रसादो माईवं च॥ अबध्यमानो देशमशक
 त एकाष्टोपलपांशुशीतवातातपप्रवृत्तिनिरनिघातविशेषे रनिहन्यते। व्रणो विविधवेदनोपदुतश्च दुष्टतामुपैति॥
 आलेपनादिनिचास्पविशोषमुपयांति॥ कर्णितं मथितं नमविस्मिष्टमतिपातितं। अस्मिन्नायुशिराछिन्नमाशुबन्धेन
 रोहति॥ १॥ सुखमेव व्रणीतः शोते सुखंगच्छति तिष्ठते। सुखं राय्यासनसुखसिद्धं संरोहति व्रणः॥ २॥ अबध्याः रपित
 रक्तानिःघातविषनिमिक्ताः तथा शोफतोददाहरागपाकवेदनानिहताः॥ क्षारान्निदग्धाः पाकात्प्रऊषितशातमांसा
 श्वनवंति ऊष्टिनामविदग्धानां पिडिकामधुमेहिनां। व्रणाच्छुण्णसिध्यंतियेषां चापि व्रणो व्रणः॥ कर्णिकाश्चोदुरुवि
 षे विषदुष्टव्रणाश्च ये। मांसपाके च न बध्यंते गुदपाके च दारुणे। स्वबुध्या विनजे चापि लुप्त्या लुप्यांश्च बुद्धिमान्॥ ३॥
 देशं दोषं च विज्ञाय व्रणं च व्रणकोविदः॥ कृतुं च परिसंख्यायततो बंधान्निवेशयेत्॥ ४॥ ऊर्द्धैति र्यगधस्ताचयत्रिणा

लनेते। निरुद्धालेपनसंस्तः तेनाश्रावसे निरोधो मृदुतास्तुतिमांसापकर्षणमेतन्निर्दोषतात्र ए शुद्धिश्चनवति॥ उच्ये
 गुणोऽालेपनंचालेपरात्रौ प्रयुजीतमात्रं ताशोत्यपिहितोष्णः तदनिर्गमात्तं विकारप्रवृत्तिरिति। त्वक्प्रसादनमेवायं
 मांसमेदं प्रसादे। दाहप्रशमने श्रेष्ठं तोदकं ह्र विनाशनं। मर्मदोशेषु यरोगागुह्येष्वपितथानृणो॥ संशोधनायतेषां हि ज्यो
 दालेपनं निषक्तं॥ २॥ अविदग्धेषु शोफेषु हितमालेपनं नवेत्॥ यथास्वं दोषशमनं दाहकं ह्र जापहे॥ ३॥ षड्नागपत्रिके
 स्नेहाच्चतुर्नागंतुवातजे॥ अष्टनागंतुकफजैस्नेहमात्रां प्रदापयेत्॥ ४॥ प्रदेहसाध्यव्याधौ तु हितमालेपनं दिवो॥ पित्तस्य
 निघातोच्छेदविषे च विशेषतः॥ ५॥ नचपयुशितं लेपे कदाचिद्विचारयेत्॥ उपर्युपरिलेपं च न कदाचित्प्रदापयेत्॥ ६॥
 अष्माणवेदनां दाहं घनत्वाद्जनयेत्सहि। नचतेनैव लेपेन प्रदेहं दापयेत्पुनः॥ ७॥ शुष्कजावांसनिवीर्यो युक्तोपि स्याद
 पार्थक्यः॥ अत उर्ध्वं त्रैलोक्यं बंधनं द्रव्याण्युपदेक्ष्यामः॥ तत्तथा॥ सौमक्यं साविकं द्रुकूलपंकजं शसंतानिका लोहानीति॥
 तेषां व्याधिकां च वेद्योपयोगः। प्रकरणतश्चैषामादेशः। तत्र कोशदा मस्वस्तिकानुवेक्षितस्तोली मंडलस्थगिका य
 मकस्वदाचीननिबंधविता नोगोत्फणाः पंचांगिचेति चतुर्दशबंधविशेषास्तेषां नाम निरेवास्तयः। प्रायेण व्याख्याताः।

अतस्मिन्

प्रतोली
वस्तुतः

पटत्रस्त ३ शोयस्तककषल चर्मक ४ चतुर्दश
 पार्थक्यं लोहं ७ द्रुकूल ८ पंकज ९ शसंत १० तानिका ११ लोहानीति १२
 जेत

शोपरिसौख्यदोषः ॥ २॥ काष्ठं समासाद्य यथा च वद्विवासीरितः सदहति प्रसह्य ॥ तथैव सपोष्पविनिश्रुतो हि मांसं शि
 रस्मा युचखादतीह ॥ आदौ विस्मापनं ऊर्यात् द्वितीयमवसेचनं ॥ तृतीयं उपनाहं च चतुर्थी पाटनक्रिया ॥ पंच
 मशोधनं ऊर्यात् षष्ठरोपणमिष्यते ॥ एते क्रमात्र एव स्योक्ताः सप्तमं वेत्तापहमिति ॥ ॥ इति आमपक्वेषणीयो ध्या
 यः समाप्तः ॥ ॥ अथातो व्रणलेपनबंधविधिं मध्यायं व्याख्यास्यामः ॥ ॥ आलेपश्च आद्य उपक्रम एषः सर्वशोफा
 नां सामान्यः प्रधानतमश्च नवंति ॥ ते च प्रतिशोगं वक्ष्यामः ॥ ततो बंधः प्रधानं तेन शुद्धिर्ब्रणरोपणमस्ति संधिस्थैर्ये
 च ॥ तत्र प्रतिशोमे हि सम्यगोषधमवतिष्ठते ॥ अनुप्रविशति च ॥ शोफकृपात्स्वेदवाहिनिः शरीरा मुखे वीर्यं प्राप्नो
 ति ॥ तस्य प्रमाणं महिषार्द्रचर्मोऽसौ धमुपदिशति ॥ न च शुष्पमाणमुपेक्षेताऽन्यत्र पीडयितव्यात् ॥ शुष्को ह्यपार्थको
 रुधिरश्च ॥ सत्रिविधः ॥ आलेपः प्रदेहो लेपश्च तत्र प्रदेहा लेपनयोरंतरं ॥ आलेपः शीतलनुरविशोषी च ॥ प्रलेपस्तु
 स्मः शीतो वा बद्धुरविशोषी च ॥ मध्यमो लेप इति विशेषतो रक्तपित्तप्रसादलला लेपः ॥ प्रदेहो वा तक्ष्णप्रशमनः ले
 पनस्तु ॥ शोधनो रोपणः ॥ शोकवेदनापह रश्च तस्योपयोगः सता सतेषु यस्तु सतेषु युज्यते स नूयः कल्क इति संज्ञा

प्रदेहश्च

कार्तिका

सुखचेष्टाप्रचारः स्यात्स्वास्तीर्णशयनेवली। आच्योदिशि स्थिता देवाः तत्सगार्थं ततः शिर्वः॥ तस्मिन् सुहृद्भिरनुकूलैः
प्रियंवदैरप्युपास्यमानो यथेष्टमासीत्। नवेति चात्र॥ सुहृदो विस्तिपत्याशु कथायोगैरनिस्सितैः॥ आश्वासयंतो वेङ्क
शः स्वनुकूलो रुजो ब्रह्मै॥ दिवान निद्रावशागः स्यात्ततः प्रयेसं नवः॥ दिवा स्वप्नाद्वैकं दृगात्राणां गौरवं तथा॥ २॥ स्वयं
वेदनाशंगैः श्रावश्चैव नृशं नवेत्॥ उच्छानसंवेसनपरिवर्तनवंक्रमणोच्चैर्नीषणादिषु चात्मचेष्टास्वप्रमत्तोऽप्येता
रसेत्॥ स्नानासनं चैक्रमणं यानेयानातिजाषणं। ब्रह्मवाणैर्न निषेवेत शक्तिमानपि मानवः॥ १॥ उच्छानाद्यासने स्ना
ने शय्याचातिनिषेवितौ॥ श्राप्यान्मा रूतादेगेरुजो तस्मान् विवर्जयेत्॥ गम्यानां च स्त्रीणां संदर्शनं संजाषणं संस्पर्शनं
निचदूरतः परिवर्जयेत्॥ स्त्रीदर्शनानिःदिशुक्लं कदाचिच्चलितं भवेत्॥ ग्रीष्मर्षमेळतान् दोषान् सांसर्गेष्वप्युपा
त्॥ नवधान्यमाषतिक्षकलायुक्लच्छनिष्यावकहरितकशाकास्तलवणकटुकगुडकुष्ठविल्वतिवधूरशुष्कशाकाज
विकान्तपोदकमांसवसाशीतोदकलशरापायसदधिदुग्धतक्रप्रचृतीन् परिहरेत्। तक्रांतो नवधान्यादिर्योयं वर्ग उ
दाहृतः। दोषसंजनो ह्येषः विज्ञेयः सूर्यवर्द्धनः॥ १॥ अथ पञ्चमैरेयारिष्टासवसीधुसुराविकारान् परिहरेत्। मद्यमस्य

त्रिविधा स्मृता। यथा च बध्यते बंधस्तथा वक्ष्याम्यशेषतः॥४॥ घनांकवलि कोदत्वा मृदु चैवावपटकं॥ विकेशिका मोष
 धं च नातिस्निग्धसमाचरेत्॥५॥ अक्ले दयत्युति स्निग्धा तथा रौक्ष्या क्षिणोति च। युक्तस्नेहारोपयति दुन्यस्तावत्तमं धर्ष
 ति॥६॥ विषमं च त्रणं ऊर्यात् स्तं नयेत् श्रावयेत् तथा। यथा त्रणं विदत्वा तु योगं वैद्यः प्रयोजयेत्॥७॥ पित्तजे रक्तजे वा
 पित्तसंलक्षणे वपरिस्तिपेत्। असंलक्षितं फले जेवापि वा तजेपि विचक्षणः॥८॥ तलेन प्रतिपीड्याथ श्रावयेदनुलोमतः॥ सर्वो
 श्वबंधो गूढान्तरान् संधीश्च विनिवेशयेत्॥९॥ उष्ट्रस्याप्येष संधाने यथोक्तिः शो विधिः स्मृतः। बुध्योत्प्रेषं स च यु
 क्तेन तथा चास्तिष्ठु जानता॥१०॥ उन्निष्ठेते निषण्णस्य रायने वाधि गच्छति॥ गच्छतो विविधैर्यानेः नास्य दुष्यति सत्रेण॥११॥
 ये च स्युर्मांसं संस्थावै त्वगताश्च तथा त्रणाः॥ संध्यस्ति कोष्ठप्राप्ताश्च शिरास्ता युगतास्तथाः॥१२॥ तथा वगो दागं नीरा सर्वतो वि
 षमस्ति ताः॥ नैते साधयितुं शक्याः कृते बंधात् नवंति हि॥ ॥ इति सूत्रस्थाने त्रणालेपना माध्यायः॥ ॥ अथातो
 ब्रूणीतोपासनीयमध्यायं व्याख्यास्यामः॥ ॥ अथ ब्रूणिनः प्रथममेवागारं अचिच्छेत्। प्रशस्तवास्तु निगृहे वा तावा
 तर्धर्जिते निवातेन च रोगास्फः शारीरा गंतुमानसाः। तस्मिन् रायनं मसं बाधं स्वास्तीर्णं मनोऽज्ञं प्राक् शिरस्कं सस्रजं ऊर्वीत।

नमो भगवते

वेदविहितैरपरैश्चासीर्विधानौ रूपाध्यायानि षजसंभूयोरक्षां ऊर्युः। सर्वपारिष्ट पत्रान्यां सपिंखा। पाखवणे
नच। द्विरङ्गः कारयेद्दमदशरात्रमतेन्द्रितः॥ छत्राति छत्रेलांगुलीजटिलो ब्राह्मचारिणी॥ लक्ष्मीगुहामतिगुहो
वचामतिविषांतथा। शतवीर्यासहस्रवीर्यासिद्धार्थकोश्च शिरसाधारयेत्। व्यजेतवालयमजनैर्व्रणं विवृतयेत्।
नतुद्देनचकंदूयेत्शयानः परिपालयेत्। अनेन विधिना युक्तमादावेव निशाचराः। वनेके सरिणाक्रांतं वज्रं
यतिमृगाइव॥ जीर्णशाल्योदनं स्निग्धमल्पमुष्मद्वोत्तरं॥ भुंजानो जोगलैर्ममैः शीघ्रं ब्रह्मणमपोहति॥ २॥ तदु
लीयकजीवंती सुनिषण्णकवासुकैः। बालसूतकवार्ताकैः पुरोलैः कारवेक्षकैः॥ ३॥ सदादिमैः सामलकैः घृतच
ष्टैः ससैधवैः। अन्यैरेवं गुणैर्वापि मुक्तादीनां रसेन वा॥ ४॥ ससुम्नश्चिलेयीज्जम्बीरजले चापि सतं विवेत्। दिवा
ननिद्रावरागो निशि वा गृहगोचरः। ब्रह्मी वैद्यवशो तिष्ठेत् शीघ्रं ब्रह्मणमपोहति॥ ब्रह्मेश्वरयथुरायासात् सचरागश्च
जागरात्॥ तौ चरुक् दिवा स्वापात् चमृत्कश्चमैथुनात्॥ एवं तत समाचरो ब्रह्मी संपद्यते सुखी॥ ७॥ आयुश्च दीर्घमा
प्नोति धनं च तस्मिन् विचौ यथा॥ १८॥ ॥ अथातो हिताहितीयमध्यायं व्याख्यास्यामः॥ ॥ यद्वा यो पथ्यंतपित्ता

तथा रूक्षं तीक्ष्णं च वीर्यं तः॥ आशुकारि च तत्पितृसिंघं व्यापादयेत् ब्रह्मणो वा तात परजो ह्येवमावस्यायाति सेवना
उत्ति नो ज्ञाना निष्ठं श्रवण दर्शनेष्वामर्शं न यशोकथ्या न रात्रि जागरण विषमासन शयनोपवास वागव्यायाम स्थान च
क्रमेण रात्रि जागरण नियमशीत वात विरुद्धाशनार्जीर्ण मस्त्रिकाद्या बाधाः परिहरेत् ब्रह्मणितः स तस्य कारणैरव
मादिनितः॥ क्षीण शोणित मांसस्य भुक्तं सम्यक् न जीर्यते॥ १॥ अजीर्णं त्यक्त्वा दीनां विभ्रमो बलवान् न वेत् ततः शोक
रजाश्चावदाह पाकानवाप्नुयात्॥ २॥ सदा च नीच न स्वाभ्यस्येत् शुचिना शुक्ल वाससा शोति मंगल देवता ब्राह्मण एत
परेण न वितव्यमपि॥ तत्कस्य हेतोः हिंसा विहारालिरक्षां सिपुपति कुवेरा नुचराणि मोक्ष शोणित प्रियत्वात् सत
जनिमित्तं ब्रह्मणि न मुपसर्पति॥ सत्कारार्थं जिघांसूनि वा कदाचित्तेषां सत्कारकामानो प्रयतेनांतरात्मना ह्यपवत्स
पहारांश्च रक्षांश्चैवोपहारयेत्॥ ते तु संतर्पिता आत्मवर्तनं न हिंस्युः॥ तस्मात्सततम तं दितो दकस्व जन परिचृते
नित्यदीपैरास्त्रेऽस्त्ररदो म पुष्प लाजाद्यलेभ्य ते वै शमनिसं पन्मंगलयुक्ता मनोऽनुकूलाः कथांश्च एव नासीत्॥ स
पन्मंगलयुक्तानिः कथानिः प्रीतिमानसः॥ आसावा न व्याधि मोक्षाय सिंघं सुखमवाप्नुयात्॥ रुग्णं पुत्रु सामाथर्व

कुष्माण्ड

उपदिष्टानि हिताहितानि तु ॥ यद्वायोः पथ्यं तत्पित्तस्य पथ्यमिति संयोगादपराणि विषतुल्यानि न वंति ॥ तद्यथा
 वक्षीफलकबरीरामफलखण्डलच्छपिण्याकदचितैलविरोहिपिष्टं शुष्कशाकीजाविकमांसमद्यजोबबलितं
 ममस्योगोधावराहांश्च नैकं ध्यमश्नीयात्पयसा ॥ अन्यत्र रोगोपसृष्टेभ्यः ॥ रोगं साध्यं च देहं च काले देहं च बुद्धिमान् ॥ अ
 वेस्याम्यादिकान् नावान् रोगवृत्तेः प्रयोजयेत् ॥ अवस्थोतरवाङ्मुल्यात् रोगादीनां व्यवस्थितं ॥ द्रव्यं नेष्टं तिनिषजः ॥ इच्छं
 तिस्रस्तुल्यसत्ता ॥ द्वयोरन्यतरादाने वदंति विषदुग्धयोः ॥ दुग्धस्यैकोतहिततां विषमेकोततोहितं ॥ एवं युक्तं रसेषु पु
 येषु सखिधादिषु ॥ एकोतहिततां विद्धि वसुश्रुतनाम्यथा ॥ अतो संयोगादहितानि वक्ष्यामः ॥ न च विरूढधान्यैव
 सामधुपयोवा माषैर्वाग्राम्यान् रपोदकपिशितादीनि ॥ नान्यवहरेत् ॥ न पयोमधुन्यां रोहिणी शौकं काशं शौकं चाश्नीयात्
 बलाकां वारुणीं कुष्माण्डान्यां काकमाचीं पिष्यन्ति मरिचाभ्यां नाडी नैर्गशाकं कुर्जटदधीनि चानेकं ध्यमधुचोष्मोदका उप
 नैपित्तेन चामूमांसानि सुरास्यशरापायसांश्च नैकं ध्यमश्नीयात् ॥ सोवीरं केण सह तीक्ष्णं शुष्कं तीक्ष्णं सह मधुघृतम
 स्थानं नैर्षते मांसानि मधुना गोधां मस्यान् सौदासवेन दृषतमांसं तेनैव तथा ॥ मेरेयमाधीकान्यां च मस्यैः सह सुवि

शेषा ज्ञातव्यं

गोधूमकाण्डि २

सुशानु उपरी नाग

स्यापथ्यमिति। अनेन हेतुना। न किंचित् द्रव्यामेकांतेन हितमहितं वा स्तीति। केचिदाचार्या ब्रुवते॥ तन्नूनसम्पू॥
 इह कस्मात् द्रव्याणि स्वभावतः संयोगात् एकांतं अहितानि हितानि च न वंति तत्रैकांतहितानि जाति सात्मात् सलि
 यद्युत दुष्पैदन प्रवृत्तिनियुक्तं संतुं एतां नि एकांता हितानि तु। दहन पचन मारणादि घनि प्रजापितार विषा
 दीनि संयोगादपराणि विषतुल्यानि न वंति। अपथ्यत्वात्॥ हितानि हितानि तु। यद्वा योः पथ्यं तत्पित्त स्यापथ्यमिति। अ
 त सर्वप्राणिनां अयमाहारार्थं वर्ग उ प दिश्यते। तद्यथा॥ रक्तं शालिषष्टिकं क गु मु कं डुक पीतकं शमोदकं कावकास पाउक
 नकं पुष्पकं क ई मकं शकुना हत सुगंधकं क ल म नीवार को द्वौ क दा लं क र्या मा क गो धू मय एव ए ल ह रि ल ऊ रं ग
 मृग मातृ का ख दं द्रा क र लं क र क यो त ला व ति त्रि र क पिं ज ल व र्त्ती रि क व र्त्त का दी नि मां सा नि मु ज व नं म ऊ ष क लो य
 म स्त र मं ग ल्य च ए क ह रे ए वा ट की स ती नाः चि छि वा सु क सु नि ष ए क जी वं ति तं दु ली य क मं डू क प र्णः ग व्यं दृ तं सौ द्र
 सै ध वं दा डि मा म ल क मि त्रे ष व र्गः सर्व प्राणिनां सामान्यतः॥ तानि तु स्वभावापथ्यसंयोगः संस्कारः कर्म मानेभ्यः
 पंच निपथ्य तमश्च तथा ब्रह्म चर्य निवात राय नो ह्मोदक निशास्य मया यामाश्चैकांततः पथ्यतमाः एकांता हितानि प्रा

कस्तुरी मृग

पाउक

मुज

मृग

पाका-यो। अवलतिकौ अवलकषायौ सर्वतः॥ कटुतिकोरससवीर्या-यो। कटुककषायौ तिक्रकषायौ च। सतः॥ तरतमयो
 गयुक्तोश्च नावान्ति रुक्षानातिस्निग्धानात्फस्मानातिशीतानित्येवमादीन् वज्रयेत्। नवंतिचात्र। विरुद्धान्येवमादीनि
 रसवीर्यविपाकतः। तान्येकांतेहितानि स्युर्विषतुल्यानि बापुनः। व्याधिमिदियदौर्वल्यमरणांधीविण्णति॥ विरुद्धसै
 वीर्यादीन् जुजानोनात्मवानरः॥ २॥ यत्किंचितदोषमुक्तेश्चतुर्कंकायान्ननिर्हरेत्। रसादिष्वयथार्थंचनेदिकारयक
 ल्यते॥ ३॥ विरुद्धाशतजान् रोगान् प्रतिहृतिविरेचनं। वमनंशमनं चापि सर्वेवाहितसेवनं॥ ४॥ सात्प्यतोऽप्यतयावा
 पिदीप्तान्नेस्तरुणस्यच। स्निग्धव्यायामबलिनां विरुद्धं वितथं नवेत्॥ ५॥ व्यायामशीलो बलवान् शिशुश्च। स्निग्धे नि
 मांश्चापि महारानश्च। प्राप्नोति रोगान्न विरुद्धजानोना-त्यासतोना-प्यतयाचजेतुः॥ अथवातगुणान् वक्ष्यामः॥ सर्वः सम
 धूरः स्निग्धो अवलश्चैवमारुतः। गुरुर्विदाहजनोरक्तपित्तविवर्द्धनः॥ १॥ क्षतानां विषजुष्टानां ब्रणिनः श्लेष्मलाश्च ये। ते
 षामेव विशेषेणादोषरोगविवर्द्धनः॥ २॥ वातलानां प्रशस्तश्च श्रान्तानां कफरोगिणामधुरश्चाविदाही च कषायानुरसो ल
 धुः॥ ३॥ दक्षिणोमारुतः श्लेष्मः चक्षुष्यो बलवर्द्धनः। रक्तपित्तप्रशमनो न च वातप्रकोपणः॥ विशदोरुक्षपक्षः खरः स्नेहः

गु ५१२२

पौ १

कारान्। गुडेन काकमाची मधुना सूखकं च। गुडेन वाराहं मधुना च सह विरुद्धं। स्त्रीरेण मूलकमाप्रजां ववश्चावितश्च
 करगोधाश्च सर्वोश्च मस्यान्पयपयसाविशेषेण चिलिचिमंकदलीफलं तालफलेन पयसा दध्ना तक्रेण वा लकुचफलं
 दध्ना माषसूपेण वा। मधुना घृतेन वा। प्रकपयः पयसो ते वा अतः कर्म विरुद्धान् वक्ष्यामः॥ कपोतान् सर्पपतैश्च चष्टान्
 वा दद्यात्। कपिं जलं मयूरं लावति तिरिगोधांश्चैरुदार्प्य निसिद्धा एरंडतैलसंमूर्छितान् वा ध्यान्। मधुचां तरिसोदकानु
 पानं कांश्यनाजनेदरागत्रं पय्युषितं सपिर्मधुचोक्षैरुक्ष्येन वा। पय्यपरिपचने शृंगवेरपरिपचने वा नाजने सिद्धां काक
 माचीं तिलकं कसिद्धमुपोदकाशकं नालिकेरेण वाराहवसापरिचष्टो बलाको नासमंगारश्चैव च नाश्रियादिति। अथोपसी ५
 तोमान विरुद्धवक्ष्यामः॥ मध्वं बुनीमानतस्तुल्येन सपिं श्रीयात्। मधुस्नेहोजलस्नेहो वा। एवं तैलसपिंषीतैश्च वसेतैलमज्जा
 नौ सपिंर्वसे सपिंमज्जनौ वसामज्जनौ विशेषादां तरिसोदकानुपानौ। अत ऊर्ध्वं रसद्वंद्वानिरसतो वीर्यतो विपाकतश्च
 विरुद्धानि वक्ष्यामः। तत्र मधुरास्त्रौरसवीर्यविरुद्धौ। मधुरलवणौ च। मधुरकटुकौ च सर्वतः। मधुरतिकौरसविपाकाभ्यां
 धुरकषायौ च अम्ललवणौ च सर्वतः। अम्लकटुकौरसविपाकाभ्यां। अम्लतिकौ। अम्लकषायौ च सर्वतः। लवणकटुकौरसवि

र्व

बाघपेयलेख
पोष्य

आधौ वस्यामः॥ पितृस्य यत्तु श्रीहानौ हृदयं दृष्टिः॥ पूर्वोक्तं च त्वक्का एतानि दोषाणां स्थानान्यप्यपन्नानां नवति चात्र।
विसर्गादौ न विसेपैः सोमस्तूर्यानि जायथाः॥ धारयन्ति जगद्धेहं कफपित्तानि लास्यथा॥ तत्र जिह्वां संकिंपित्तव्यतिरेकाद
न्योऽग्निराहोऽश्वित्यमेवान्निरिति॥ अत्रोच्यते। नखधुपित्तव्यतिरेकादन्योनिरुपलभ्यते। आग्नेयत्वापित्ते दहन
पाचनादिघनिप्रवृत्ते निवदुपचाराक्रियते तन्निरिति। क्षीणे ह्यग्निगुणे तस्मान्न द्व्योपयोगा अति प्रवृद्धे शीतक्रि
योगयोगादागमाच्च पश्यामौ न पित्तव्यतिरेकादन्योनिरिति। तत्त्वदृष्टहेतुकेन विशेषेण पक्वामाशयमभ्यस्य पित्तं च
तुर्विधमन्नं पानं पचति। विवेचयति चान्नरसवातमूत्रपुरीष्वाणि। तत्र स्थमेवात्मराकृपाशेषाणां पित्तस्थानां शरी
रस्य चान्निःकर्मणानुग्रहं करोति॥ तस्मिन्निते पाचको निरिति संज्ञा। यत्तु यत्तु त्वीदृशं पित्तं तस्मिन्नं जको निरिति
संज्ञा। रसस्य रागलुदुक्तः। यत्पित्तं हृदयस्थं तस्मिन् साधको निरिति संज्ञा। सोऽनिप्रार्थितमनोरथसाधनलुदुक्तः॥
यदृष्टं पित्तं तस्मिन् लोचको निरिति संज्ञा। सरूपग्रहणे भिद्यतः। यत्तु त्वचिपित्तं तस्मिन् आजको निरिति संज्ञा। सौ
म्यगपरिषेकावगाहालेपनादीनां क्रियाद्व्याणां पक्वाध्यायानां च प्रकारशकः॥ पित्तं तीक्ष्णं इव सति नीलं पीतं तथैव

वक्ष्यते ॥ पश्चिमो मातु तस्मीक्ष्णः कफमेदो विशोषणः ॥ ५ ॥ सद्यः प्राणः सयकरः शोषणस्तु शरीरिणः । उत्तर
मातु तस्मिन्ने मृदुर्मधुर एव च ॥ ६ ॥ कषायानुरसः शीतो दोषाणां चाप्रकोपणः । तस्माच्च प्रत्युत्तिष्ठानोक्तो नो बलव
र्द्धनः ॥ ७ ॥ क्षीणस्य विषात्तानां विशेषेण तु प्रजितः ॥ ८ ॥ इति सौश्रुते सूत्रस्थाने हिताहितीयमध्यायो विंश
तिमः समाप्तः ॥ ॥ अथातो ब्रह्मण प्रश्नमध्याये व्याख्यास्यामः ॥ ॥ यथोवाच नगवान् बन्धनं तरिः सुश्रुताचार्यः ॥
वातपित्तश्लेष्माण एव देहसंभवहेतवः ॥ एतैरेवाचार्याः पुरुषे रधोमथोर्ध्वे संनिविष्टैः शरीरमिदं धार्यते । आगारमि
वस्थूणा निः तिस्र निरतस्त्रिस्तूणमाकु रेके । त एव चाचार्याः प्रलयहेतवः । तदे निः शोणितचतुर्थैः संभव स्थितिप्र
लये ध्वप्यविरहितं शरीरं न वेति ॥ न वेति चात्र ॥ नृत्वे देहः कफादस्ति न पित्रा न च मातु तात् ॥ शोणितादपि वा नि
त्यं देह एतैस्तु धार्यते ॥ तत्र वा गतिगन्धनयोरिति धातुः । तप ह्यप संतापे । श्लिष आलिङ्गने । एतेषां लब्धिहितैः । प्रत्य
यैः वातश्लेष्मा निचरुपाणि न वेति । दोषस्थानान्यत ऊर्ध्वं वक्ष्यामः ॥ तत्र समासेन वातः श्रोणीगुदसंश्रये तदुपप्य
धो नानेः पक्षाशयः । पक्वमाशयमध्यस्थं पित्तमाशयमध्यस्थं श्लेष्माणः । अतः परं पंचधा प्रविन्यते । तत्र वातस्य वात

वा २

नावनासतामंदोष्मतां चोगानो गौरवमाक्षस्ये च अशान द्वेषश्चेति लिंगानि न वेति । तत्र प्रथमं तः क्रिया कालः । अतः
 उर्ध्वं प्रकोपणानिवक्ष्यामः । तत्र नाराहरणं बलवद्विग्रहाति व्यायामव्यायामप्रवचना निघातलघनघवनप्र
 तरणरात्रिजागरणजतुरंगरथपदाति चर्या कदुकषायति रुस्तलघुशीतवीर्यशुद्धशकं वधूरचरकोदौषक
 कोरदूषकरपा माकुनीवारस्रमस्रराठकीहरेण्डकलायनिः । पावानशनविषमासनाभ्यसनवातसत्रपुरीषउरुर्ध्व
 र्धसवश्रुतारबाष्पवेगविघातादिनिर्वीयुः प्रकोपमापद्यते । सरीता न प्रवाते शुधर्मो ते च विशेषतः । प्रत्यक्षस्य प
 राद्धे च जीर्णैश्च प्रकुप्यति । क्रोधशोकनयायासोपवासविदग्धमैथुनोपगमनकद्वलवलातीस्तोष्णलघुविदाहि
 तिलनैलपिण्णककुलच्छसपैषपातसीहरीतकशाकगोधामस्याजाविकमांसवर्धितककूर्चिकामस्तुसौरकसुराविको
 रास्तकैदुकद्वराकैप्रवृत्तिनिः । पित्तं प्रकोपमापद्यते । तदुष्मैरुष्मकाले मेघाते च विशेषतः । मध्याह्ने चार्धरात्रे च जीर्ण
 त्पन्ने च कुप्यति । दिव्यस्वप्नाव्यायामालस्यमधुरास्तलवलासीतस्निग्धगुरुपिष्ठलानिस्पदिहायनकयवकनैषधेय
 माषमहामाषगोधूमतिलपिष्टविच्छिदधिदुग्धलशारापायासस्तुविकारारूपोदकसमांसवसाविरामृक्षोणाक्ष

ज्ञेयजला
 वरोध
 श्रीकारिणे

कोरदूषक

जोधतम
गी ४

मस्त्रेहृदि ३
 रत्न ३१

कद्वुधनुपरि
 दहीप्राली
 हयवराशालीरपवाजराशाली
 जालीवरा

व। उल्लंघकदुरसंचैवविदग्धं चाम्बमेवतु। श्लेष्मस्तानान्यत ऊर्ध्वं वक्ष्यामः॥ तत्रामारायः पित्राशयस्योपरिष्ठान्ततत्प
 त्यनीकं लब्धोर्ध्वगतित्वातेजसोनिग्रहायचंद्रवादि तस्य चतुर्विधस्याहारस्याधारः। सचतत्रोदकेर्गुणैराहारं प्रैक्षि
 नोनिचसेधातः सुखजरोनवति। मोधुर्यात्पिष्ठिलत्वाचप्रकैदित्वात्तथैवच। आमाशये संनवति। श्लेष्मा मधुरशी
 तलः। सतत्रस्थ एवात्मशक्त्याशेषाणो श्लेष्मस्तानानां शरीरस्य चोदककर्मणानुग्रहं करोति॥ सत्कैदकेः। उरस्थः त्रि
 कसेधारणमात्मवीर्येणान्नरससहितेन हृदयावलंबनं करोति॥ सोवलंबकेः। जिह्वा मूलकं ठस्थो जिह्वैद्रियस्यसौम्य
 त्वात्सुम्यगं सज्ञाने प्रवर्तते स बोधकः॥ शिरस्थः स्नेहसंनर्प्येण धिल्लतत्वादिद्रियाणामनुग्रहं करोति। मात्मवीर्ये
 ण सतर्प्यकः संधिस्थः। श्लेष्मो सर्वसंधिस्त्वनुग्रहं करोति स श्लेष्मकः। श्लेष्मा शीतो गुरुः स्निग्धः पिच्छिलः शीत एव च॥
 मधुरस्त्वविदग्धः स्याद्वि। दग्धो लवणः स्मृतः। तत्र स्थं मेव शेषाणोपाणितस्तानानामनुग्रहं करोति॥ शोणितस्ताने
 यल्लत्तीहानौतच्च प्रागनिहितं॥ अनुल्लंघनीतं मधुरं स्निग्धं रक्तं च वर्णतः। शोणिते गुरुविश्रं स्याद्विदाहश्चास्यपित्तव
 त्॥ एतानि दोषस्तानान्येषु संचयीयते दोषाः॥ आकसंचयहेतुरुक्तः॥ तत्र संचितानां दोषाणो संचयप्रणकोष्ठतपी

वेदनाप्रादुर्भावावापुङ्गुर्मुकुट्यत्रागच्छतिविविधवेदनाविशोषास्तवातिकमिति विधात् ॥ ७ ॥ चोषपरिहाहधूमाय
 नानि । यत्रगात्रमंगावकीर्णमवपच्यते । यत्रचोष्माजिह्वल्लिङ्गिः सतेक्षारावसिक्तइववेदनाविशोषास्तपैतिकमि
 ति विधात् । पित्तवदक्तसमुच्चंचजानीयात् । कंठ्ठुर्गुरुत्वंसुप्तत्वमुपदेहोऽप्यवेदनत्वंस्तनः सैत्यंचयत्रतंशेषिक
 मिति विधात् । यत्रसर्वासावेदनानामुत्पत्तिस्तंसांनियान्तिकमिति विधात् । अतउर्द्ध्व एवर्णान्वक्ष्यामः । नस्मक
 पोतकास्त्रिवर्णः पुरुषोऽरुणः । तस्मदितिमारुतजस्यनीलः पीतोहरितः रषावः तस्मैरक्तः कपिलः ॥ पिंगल इति ॥
 रक्तपित्तसमुच्छायोः स्वेतोस्निग्धः पांडुरिति श्लेषजस्य । सर्वत्र एवेदनोपेतः सांनियान्तिक इति ॥ नवतिचात्र ॥ नकेव
 लंब्रलोष्ट्रकोवेदनावर्णसंग्रहः । सर्वशोकविकारेषुत्र एवयैध्वस्येतरनिषक ॥ ॥ इति सूत्रस्थाने द्वाविंशतिमो
 ध्यायः ॥ २२ ॥ अथातोऽत्याहृत्य विधिमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥ ॥ नत्रवर्षस्थानां दृढानां प्राणवतां सत्वव
 तामात्मवतांचसुचिकिस्यात्र एतौहैति । एकस्मिन्वापुरुषेयत्रैतद्रुणपंचकं । तस्यसुखसाधनीयतमाव्रणाः । त
 त्रवयस्थानां प्रत्यग्रधातुत्वादाशुव्रणारोहेति ॥ दृढानां स्थिरबहुमांसत्वात् रास्त्रमविचार्यमाणं शिरोस्नाद्यादीन्

विकिर्करणी करणी स्नाप्यो स्नाप्य ३

तुलाधान
प्रसाधने
तैलम्

धिरस्तिग्धश्चसंविगतः समंतात्परिपीड्यमानो न प्रवर्तते ॥ आर्जुनं च न प्रसारणे न मना विन मन प्रभाव नोक्ता स न प्रवाहि
लेश्वप्रश्रवति ॥ आश्रावश्चात्र पिच्छलोऽवलंबी स केन स्य रुधिरोन्मथितश्च कोष्टगतोऽसुकमूत्रपुरीषपूयोदकानि श्र
वति मर्मगतस्त्वगादिषु अवरुद्धत्वान्नोच्यते ॥ तत्र त्वगादिगतानामाश्रवाणां यथाक्रमं पारुष्यस्यावाऽवरणाय दधि मस्तु
क्षारोदकमो संधावेन पुलाकोदकसन्निजत्वानि मारुताद्भवन्ति ॥ पित्रात्तु गोमेदकगोमूत्रनस्मशं खं कखायोदकमाद
कसन्निजत्वानि पित्तवद्भक्तादतिविश्रवत्वं च ॥ कफान्ब्रूतीतकासी समञ्जपिष्टतिलनालिकेरोदकवराहुबुसास
न्निजत्वानि ॥ सन्निपातान् ॥ तिलनालिकेरोदकैरेवैरुक्करसकांजिकप्रसादोरुकोदकप्रियंगुफलं यत्तु मुद्रस्य
सवर्णत्वानीति ॥ श्लोकौ चात्र न ब्रूतः ॥ पक्षाशयादशब्दस्तु पुलाकोदकसंनिजः ॥ क्षारोदकनिजः ॥ श्रावो वज्योरक्षाश
यान्भवन् ॥ आमारायात्कलायां नो निजश्चित्रिकसंविजः ॥ श्रावनैतान् परीक्षादौ ततः कर्माचरेन्निषक ॥ अत ऊ
र्ध्वं सर्वत्र एवेदनावक्ष्यामः ॥ तोदमेदनताडनछेदनायामनेमन्निविक्षयेण चुमचुमायनिनिर्द्दहना नैवेजनस्फोटनविदा
रणोत्पादनकंपनविविधश्चलविश्लेषणविकरणहरणस्तेजनस्वपनाकुंचनां ऊशिकाः संभवन्ति ॥ अनिमित्तविविध

शालाकाबोमन्त्र

तत्ता १२

शारफाफनेपवत्प्रौडा

सरंति॥ लस्मेर्देवयेवेवापियत्रांगैः अपितो नृसं। दोषो विकारं न न सि मेघवत्तत्र वर्षति॥ नात्यर्थं कुपितश्चापि लीनो
मायेषु तिष्ठति॥ निः प्रत्यनीकः कालेन हेतुमासाद्य ऊप्यति। तत्र वायोः पित्तस्थानगतस्य पित्तवत्प्रतीकारः पित्तस्य
कफस्थानगतस्य कफवत्प्रतीकारः। कफस्य वातस्थानगतस्य वातवदेष क्रियाविनागः॥ एवं प्रकुपितानां प्रसर
तां वायोर्विमार्गगमनारोपौ। ऊषचोषपरिदाहक्षमायनानि पित्तस्य अरोचका विपाकां गसादाच्छेति। श्लेष्मणो
लिंगानि नवंति। तत्र तृतीयः क्रियाकालः। अत उर्द्धस्थानसंश्रयं वक्ष्यामः॥ एवं प्रकुपितास्तां स्नानशरीप्रदेशान्
धिगम्य तां स्नानव्याधीनजनयंति। ते यदोदरे सन्निवेशं कुर्वन्ति। तदा गुल्मविप्रभृदराग्निसंगानाहविश्चिकाती
सारप्रचृत्तीन् जनयन्ति वस्तिगता प्रमेहाश्मरी मूत्रादोषप्रचृत्तीन् मूत्रगता निरुद्धकप्रकारोपदेशाश्च कुदोषप्रचृ
त्तीन् पुदगता नगंदरार्शप्रचृत्तीन्। वृषणगता वृद्धीः॥ ऊर्द्धगतुगता स्तूर्द्धजान्त्वग्मांसशोणितस्थाः सुद्रोगान् ऊष
निविसर्प्याश्च मेदोगता ग्रंथ्यप्युर्द्धगतगंडोऽक्ष्मीप्रचृत्तीन् अस्थिगता विप्रभृदरायीप्रचृत्तमज्जुक्तेगतान्
दोषाणो व्याधयो न निर्दिष्टा। पादगता क्षीपदवातशोणितवातकंठकप्रचृत्तीन् सर्वगतान् च रसर्वांगरोगप्रचृत्तीन्।

कोहज

विषे

कसेरु कष्टगाटक मधुर वक्षीफल शर्मनाथ शन प्रभृति त्रिः श्लेष्मा प्रकोपमापद्यते ॥ सरीतैः शीतकाले च वसे
ने च विशेषतः ॥ पूर्वोक्ते च प्रदोषे च नुक्तमात्रे च ऊप्यति ॥ पित्तप्रकोपणैरेव च नीलसोदवस्निग्ध गुरु निस्वाहारेः ॥ दि
वास्वप्रकोधानलातपशमानिद्याताजीर्ण विरुद्धासनादि निरसक प्रकोपमापद्यते ॥ यस्मादक्तं विनादोषैः न कदाचित्प्र
ऊप्यति ॥ तस्मान्न स्पयथा दोषे कालि विद्यात् प्रकोपणे ॥ तेषां प्रकोपात् कोष्ठे तोदसे चरणस्त्रीकापि पासा परिदाहा
न देष हृदयोक्ते दाश जायंते ॥ तत्र द्वितीयः क्रियाकालः ॥ अत उर्ध्वं प्रसरं वक्षामः ॥ तेषामेव रीते क विशेषैः प्रऊपि
तानां कि एवोदक पिष्ट समवाय इवोदिका नो प्रसरो नवति ॥ तेषां वायुर्गतिर्मत्वा त्रसरण हेतुः ॥ सत्यश्चै ताप्ये सहि
जो नूयिष्टोरजश्च प्रवर्तकं सर्वनावानां यथामहा उदकसंचयोति वृद्धः सेतुमवदार्या परेणोदके न व्यामिश्रः ॥ सर्व
तः प्रधावत्येवं दोषाः कदाचिदेकशो द्विशः समस्माः शोलितसहिता वा अनेकधा प्रसरंति ॥ तद्यथा वातः पित्तं श्ले
ष्मा शोलितं वातपित्तं वातश्लेष्मा पित्तश्लेष्मा एवोत शोलिते ॥ पित्तशोलिते श्लेष्मशोलिते ॥ वातपित्तशोलितानि ॥
वातश्लेष्मशोलितानि ॥ पित्तश्लेष्मशोलितानि ॥ वातपित्तकफाः वातपित्तकफशोलितानि इति ॥ एवं पदचदशधा प्र

प्रकोप विशेषः
५

सुराजी

स्त्रिपुटकरति। व्रणात्कृतिसमासः॥ शोषास्तु विलतात्ताय योदुरुपक्रमाः सर्वव्रणाः क्षिप्रं संशोहत्यात्मवतो सुनि
 पन्निश्चोपक्रोताः॥ अनात्मवतामस्यैश्चोपक्रोताः प्रदुष्यन्ति। प्रवृद्धत्वात्तदोषाणोत्पत्तिरिति संवृत्तौ विवृतः कठिनो मृदु
 रुसन्नोऽतिशीतोत्युष्णः क्षुब्धरक्तपित्तशुक्लादीनां वर्णानां अन्यतमवर्णैश्चैरवः प्रतिप्रयमांसशिरास्नायुप्रवृत्ति
 निःसृष्टिप्रतिप्रयाश्चाप्यभाससंग्रहमनोस्तेदर्शनो गंधोत्पत्त्यर्थं वेदनावाग्दह रागपाकतोदकं दूशोफपिडिकोपदुतो
 त्यर्थं दुष्टशोणिताश्चावीदीर्घकालानुबन्धीनि च दुष्टव्रणलिंगानि भवन्ति। तस्य दोषोष्णयेण षट् विवृत्य यथा
 स्वप्रतीकारं प्रयतेत। अत ऊर्ध्वं सर्वाणां आध्यानवक्ष्यामः॥ तत्र घृष्टा सुष्ठिना सुत्वदुस्फोटनिभे विदारिते वा सलि
 लप्रकशो नवत्याश्रवः किंचिद्विश्वावीतावजासश्च। मांसगतः सर्पिः प्रकाशसौद्रः स्वेतः पिच्छलश्च शिरागतः सद्यः
 छिन्ना सुशरा सुरकातिप्रवृत्तिः। पक्वा सुचतो यनाडी निरिवतो यागमनं दूयस्य आश्रवश्चात्र तनुविच्छिन्नः पिच्छ
 लोऽनवले विषयावोऽवस्थाप्य प्रतिमश्च। स्नायुगतः स्निग्धो वनः सिध्वाणकप्रतिमः सरक्तश्चास्तिगतोऽस्थानिहेते स्फ
 रिते निभे दोषावदारिते वा दोषनिमित्तत्वात्। अस्तिनिःसारश्चुक्तिधौतमिवानाति अश्वावश्चात्र मज्जमिश्रः सरु

असि २

अफवत् २

दोषाचिह्न

आव ३

४३

अकिञ्चनाना १

तेषामेवमनिसन्निविष्टानां सर्वरूपप्रादुर्भावस्य तत्र प्रतिरोधपूर्वगतेषु चतुर्थः क्रियाकालः ॥ अत उर्द्ध्वं विदश
ने। वक्ष्यामः शोफावृद्धः ग्रंथि विदधि विसर्पे प्रचृतीनां प्रत्येकलक्षणता ज्वरातीसारप्रचृतीनां च तत्र पंचम क्रियाकालः
अत उर्द्ध्वं एषां अवदीर्णानां व्रणभावमापन्नानां षष्ठः क्रियाकालः ॥ ज्वरातीसारप्रचृतीनां च दीर्घकालानुबन्धः ॥ तत्रा
प्रचृत्तिक्रियामाणे साध्यतामुपयाति ॥ नवंति चात्र ॥ संचये च प्रकोपे च प्रसरे स्थान संश्रयो ॥ व्यक्तं ने दे च यो वे त्रि दो
षाणां संनवे द्विषक् ॥ संचयेऽपहता दोषाः ॥ क्षने ते नोत्र रागति ते तत्र रासुगतिषु नवंति बलवतराः ॥ २ ॥ सर्वे न वे
स्त्रिनिर्वापि हान्या मे के न वा पुनः ॥ संसर्गं ऊपितः कुर्द्धं दोषं दोषोऽनुधावति ॥ ३ ॥ संसर्गे योगरीयान् स्यात् उपक्रम्य
सर्वे न वे त्र शोषदोषा विरोधे न सन्निपात नथैव च ॥ ४ ॥ व्रणोति यस्मा ब्रूटोपि व्रणवस्तु न रात्रयति ॥ आदेहधारणात्
स्मात् व्रण इत्युच्यते कुधैः ॥ इति सौश्रुते सूत्रस्थाने एकविंशति मोध्यायः ॥ अथातो व्रणाश्च विस्तारं
यमध्यायां व्याख्यास्यामः ॥ ॥ त्वं ग्रास शिरा स्नायु स्थितं धिकोष्टमर्माणीत्यष्टौ व्रणसूनि ॥ अत्र सत्रेण निवेशः त
त्राद्येकवस्तु सन्निवेशित्वेनेदि व्रणः सूपचारः शोषाः स्वमवदीर्यमाणानां दुरपचारा नवंति ॥ तत्रायतश्चतुरस्रोष्ट्रं

ब्रह्म-आवरणं

कृताशैत्यतोदोगात्राणां सदनधमनीशैथील्यच। मेदः सयेस्त्रीहानिदृदिः संधिश्चन्यताशैक्षं मेदुरमांसप्रार्थनाच।
 अस्ति सयस्ति तोदोदेतनखनोगाशैक्षच। मञ्जुसयल्यश्रुक्रता अस्ति निसोदोस्तिश्चन्यताच। श्रुक्रसये मेदुदृषण
 वेदनाशक्तिर्मैथुनेचिराद्वाप्रसेकः प्रसेकेचाप्यरक्तश्रुक्रदर्शनेच॥ तत्रापि स्वयोनिवर्द्धनद्रव्योपयोगः प्रतीकारः पुरी
 षस्यगद्गदवाक्कं हृदयपार्श्वपीडासशब्दस्यचवायोरुर्ध्वगमनेऽसौ संचरणं च। मूत्रसयवस्ति तोदो ल्यमूत्रताच। अ
 त्रापि स्वयोनिवर्द्धनद्रव्योपयोगं स्वेदसयेस्त्रीशैथिल्यमकुपतात्वकशोषः स्पर्शवैगुण्यं स्वेकादनाराश्च। तत्र प्रतीकारो न्येगस्वे
 दोपयोगश्च। आर्तवक्षये। यथोचितकालादर्शनमल्पतावायोनिवेदनाच। तत्र संशोधनमाग्नेयानां च द्रव्याणां तिलमाषसु
 कसुराप्रचृतीनां विधिवदुपयोगः। सन्यसये स्त्रीलतास्तन्यासेन बोध्यताच। स्वयोनेरेवुवर्द्धकक्षीरादिश्लेष्मवर्द्धनद्र
 व्योपयोगश्च। गर्तसयेगर्भोस्पंदनमनुन्नतजसिता तत्र प्राप्तिवस्तिकाध्यायः मधुवातहरेद्रव्यैः स्त्रीरवस्तिप्रयोगोमेध्या
 न्नोपयोगोश्चेति। अतउर्ध्वं अतिप्रवृद्धानां दोषाणां धातुमलानां लक्षणं वक्ष्यामः॥ वृद्धिः पुनरेषा स्वयोनिवर्द्धनार्तुप
 सेवनाद्भवति। तत्र वातहृद्दोषाकारुष्यं काश्म्यं कार्श्यं गात्रस्फुरणं उष्मकामितानि ज्ञानाशौ अल्पबलत्वं गाढवर्चस्त्वं च

अध्यान उपयोगश्च

विचित्रत उपयोगः ५

पुष्टिजनयति। मांसं शरीरलेपं पुष्टिं मेदसश्च। मेदः स्नेहं स्वेदं दृढत्वं पुष्टिं मस्त्रं च करोति। अस्थिनी देहधारणं मज्जः
 पुष्टिच। मज्जास्थिप्ररणं स्नेहं बलं शुक्रं पुष्टिच। शुक्रांधेय्यं च वनं प्रीतिं देहबलं हर्षं बीजार्थं च प्ररणं वासं निधारणं उ
 पष्टेन तत्पुत्रीषं केदविवेकं बलिप्ररणं तन्मूत्रं। स्वेदः केदत्वकं सौक्यं माय्यं तत्। रक्तलक्षणं आर्तवमलतिमगर्भक
 च। गर्भगर्भलक्षणं। स्नयं स्ननयोरापीनत्वजननं जीवनं चेति। तत्र विधिवत्परिरक्षणं। ऊर्वीत। अत उर्द्धमेवोक्षीणल
 क्षणवस्थामः॥ क्षयः पुनरेषामति संशोधनाति संशमनवेगविधारणा सात्प्या नयानतमनस्तापव्यायामानशानाति मैथु
 नैर्भवति॥ तत्र वातक्षये मेदचेष्टताऽऽयवाकत्वमप्रहर्षीमूढसंज्ञता च। पित्तक्षये मेदोष्माग्निता निः प्रजवंता च। श्लेष्मक्षये
 रूक्षतां तर्द्दाहमा माशयेतराशये शिरसां श्लेष्मतां संधिशैथिल्यं च तस्मादौर्बल्यं च। तत्र स्वयोनिवर्द्धनं कार्यं न तुः अ
 न्यैः कुरुकादिनिः पित्तवृद्धिर्न यात् पित्तस्पर्शीणस्पृक्तुर्कैरेव वर्द्धनं कार्यं। लवणादिनिः श्लेष्मवृद्धिर्न यात् श्लेष्मणः
 क्षीणस्पक्षीरादिनिर्वर्द्धनं कार्यं नास्त्वलवणैः पित्तवृद्धिर्न तां रसक्षये हृत्पीडापंकः शोषः श्लेष्मता तस्माच्च शोणित
 क्षये त्वक्पातुष्यमस्त्वशीतप्रार्थना शिराशैथिल्यं च। मांसक्षयस्फिक् गंडोष्टोपस्थोरुवेक्षः कक्षापिंडिकोदराग्नीवाशु

॥ मादिज्ञानसंख्यादिर्जः साधितोति ॥
तत्राहारविहारेण दुष्टदुष्कृतेन शुक्रगोणेन दुष्टवत्तदनवातदुष्टेन
कुष्ठिकिजातिभवति ॥

शेग

वापरासलरु
स्पः प्रसारविहारे
तादोपिप्रवेपत्रम्
असादमः त्रुदे
ववलेनिसनेति
यि यं प मनसा
स्तेत्त्विरज्जात
साध्यैपधत्त
यत्येतिनिहर्ष
चिरज्जासाध्य
पातमातेहे
प्रासीतोभरमा
यो नार

द्विविधं शारीरं मानसं च । तत्र शारीरं वातपित्तश्लेष्माणवैषम्यनिमित्तं । आधिदैवकं उपसर्गनिमित्तं । ततश्च स
प्तविधव्याधयुपनिपतति ॥ ता पुनः सप्तविधा व्याधयः । तद्यथा । आदिवलप्रवृत्ता जन्मबलप्रवृत्ता दोषबलप्रवृत्ता
संघातबलप्रवृत्ता कालबलप्रवृत्ता देवबलप्रवृत्ता स्वभावबलप्रवृत्ता इति ॥ तत्रादिवलप्रवृत्ता ये शुक्रशो
णितदोषान्वयाः कुष्ठारी प्रन्ततयः तेऽपि द्विविधाः मातृजापितृजाश्च । जन्मबलप्रवृत्ता ये मातुरपचोरात्यं गुजात्यं
वधिरसूषकमिर्मि एवामनं प्रन्ततयो जायंते । तेऽपि द्विविधाः रसच्छताः दोहदापचारुच्छताश्च । दोषबलप्रवृ
त्ता ये आतंकसमुत्पन्ना मिथ्या हासचारुच्छताश्च तेऽपि द्विविधाः । आमाशयसमुच्छा । पक्वीरायसमुच्छाश्च ॥ पुन
श्च द्विविधाः शारीरमानसाश्च ॥ त एते आध्यात्मिकाः संघातबलप्रवृत्ता ये आगतबो दुर्बलसूबलवद्विग्रहा
त्तपि द्विविधाः । रास्त्रच्छता व्यालच्छताश्च एते आधिभौतिकाः । कालबलप्रवृत्ता ये शीतोष्णवर्षावातातपप्रन्त
तिनिमित्ताः तेऽपि द्विविधाः व्यापनच्छता अप्यनच्छताश्च । देवबलप्रवृत्ता ये देवाप्रोहाघनिशस्तकाः ॥ अथ
दृष्टाच्छताः उपसर्गच्छताश्च तपि द्विविधाः विद्यदशनिच्छताश्च पिशाचादिच्छताश्च ॥ पुनश्च । पुनश्च द्विविधाः स
शस्त्रकृतानि शोणितदोषाः तस्मात्सुपेक्ष्यति व्याध्या आदिवलप्रवृत्ता ये शुक्रशोणितदोषाः तपि द्विविधाः । रास्त्रच्छता व्यालच्छताश्च एते आधिभौतिकाः । कालबलप्रवृत्ता ये शीतोष्णवर्षावातातपप्रन्त
तिनिमित्ताः तेऽपि द्विविधाः व्यापनच्छता अप्यनच्छताश्च । देवबलप्रवृत्ता ये देवाप्रोहाघनिशस्तकाः ॥ अथ
दृष्टाच्छताः उपसर्गच्छताश्च तपि द्विविधाः विद्यदशनिच्छताश्च पिशाचादिच्छताश्च ॥ पुनश्च । पुनश्च द्विविधाः स

रसोऽवसातले
दन्तुमात्तगर्भ
मनःश्रद्धाअति
रलीश्रुतालव
दाविद्याताज
भस्मविह्वलि
सीश्रुत
कर्वरदीलो
सोधानुहील
गतचतचित्त
तोषणमुष्म
नृप
दिनाश्रीसं
कद्योश्रुताल
यत्तरीश्रुत
श्रुतश्रीसं
नेत्रकेवि

यांति याप्याश्वासाध्यतां तथा ॥ द्युतिप्राणानसाध्यां स्तुनराणामक्रियावता । यापनीयं विजानीयात् क्रियाधारयते तु
 क्रियायां तु निवृत्तायां सद्य एव निवश्यति ॥ २ ॥ प्राप्ता क्रियाधारयति याप्यव्याधितमातुरं ॥ प्रापति प्यदिवारं गारं वि
 श्वेन साधु योजितः ॥ अत ऊर्ध्वं असाध्या नूवक्ष्यामः ॥ मांसपिंडवदुद्वेगताः ॥ प्रसेकिनौ तः प्रयवेद नावांताऽश्वापानव
 दुष्टोष्ठाः केचि कठिना गोष्ठं गवदु मांसं ग्रहरोहाः ॥ अपरे दुष्टरुधिराश्चाविणः ॥ तनु शीता पिच्छिलाश्चाविणो वाम
 ध्योन्नताः ॥ कचिदवसन्न सुषिरपर्यंताः स एतल्लवक्त्रायुजा लवं तो दुर्दशाः ॥ वसामे दोमज्जामस्तुल्यं गश्चाविणश्च दो
 षसमुच्छाः ॥ पीतसितमूत्रपुरीषवातवाहिनः कोष्ठस्थाः ॥ त एवौ नयतो नागव्रणमुखेषु सूर्यरक्तनिर्वाहिणः स्त्रीणाम
 सानौ च सर्वतोगतयस्त्वणुमुखा मांसबुद्धे दवंतः ॥ सशब्दे वातवाहिनस्य शिरः कंठस्थाः स्त्रीणामां सानौ च ॥ सूर्यरक्त
 निर्वाहिणो रोचका विपाकका सश्वा सोपद्रव्ययुक्ताः ॥ निचे वा शिरः कं पा ले यत्र मस्तुलिंगदर्शनं त्रिदोषलिंगादुत्तीव
 का सश्वा सो वायस्पेति ॥ नवंति चात्र ॥ वसामे दोषमज्जानं मस्तुलिंगं च यः श्रवेत ॥ आगंतुस्तु व्रणः सिध्येत् न सिध्येद्दो
 षसे नवः ॥ अममो पाहिते देशे शिरसं ध्ये स्थि वर्जिते ॥ विकारो यो नुपर्येति ॥ तदसाध्यं सलक्षणं ॥ २ ॥ क्रमेणोपच

मस्तुलिंगं

३

५५

विशेषान्प्राप्नोति। प्राणवतो वेदना निघाताहारयंत्रणादि निर्नग्नानि मुपैति ॥ रुतपद्यते ॥ सत्त्वतो दा रुणैरपि क्रि
या विशेषैर्नमथा नवति। तस्मादेतेषां सुखसाधनीयतमाः। आत्मवतां पुनर्मिताहारविहारादिर्विशेषैर्नन्य
यामतिः प्रवर्तते। त एव विपरीतगुणा वृद्धलशास्यप्राणनीरुषु दृष्टव्याः। अनात्मवस्तु च दृष्टव्याः। स्फिकपायुप्रज
नल्लाटगंडोष्टकर्णफलकोशोदरपृष्ठजंतुमुखान्यंतरसेस्थाः सुखरोपणीया व्रणाः। असिदेतनाशा योगश्च
नानि जठरसेवनी नितंबपार्श्वजसिवसकक्षास्तनसंधिजागताः। सफेनसूयरकानि लवाहिनी तशस्याश्च दुश्चि
किस्याः अधोनागाश्चोर्ध्वनागनिर्वाहिणो रोमांते पनखमर्मजंघास्थि सप्रिताश्च जगंदरमपि चांतर्मुखसेवनी
कटुकास्थि संप्रिते ॥ ७० ॥ ऊष्टिनां विषजुष्टानां शोषिणां मधुमेहिनां। व्रणाः लघ्वेण रसि द्यंति येषां चापि व्रणे व्रणाः।
याप्या अवपाटिकानि रुद्धप्रकाशसंनिरुद्धगुदजठरग्रंथिस्तलमिमयः प्रतिश्याजयः जाः। कोष्ठजाश्च त्वग्दोषिणां
प्रमेहिणां वापियेपरिस्थितेषु दृश्यंते। शर्करासिकतामेहिवातजं उलिकीकाष्टी क्षारमदंतशर्करोपज्जशर्करा
क्षकनिःक्षोषणद्रुषिताश्च देतवेष्टाः। ससर्पास्थिस्तोरुस्तत्राणग्रंथिप्रचृतयश्च याप्याः। साध्याप्याप्यत्वमा

सिद्धिर्गोपनी
सिद्धिर्गोपनी
सिद्धिर्गोपनी

सत्त्वगुणरस
सत्त्वगुणरस

वातलिपिपञ्चादि कुत्रापि तस्यैव वेगतीत्युक्त्यादि
उच्यते तस्यैव वेगतीत्युक्त्यादि
उच्यते तस्यैव वेगतीत्युक्त्यादि

उक्त्यादि विचार्यते
उक्त्यादि विचार्यते
उक्त्यादि विचार्यते

सर्गजाः। आकस्मिकाश्च स्वभावबलप्रवृत्ताये। सुविपासाजरा मृत्यु निद्राप्रवृत्तयः। तेपि द्विविधाः। कलत्वात्तत्रका
लत्वाच्च। तत्ररस एतत्ताकालत्वात्। अपरिरक्षणत्वात्। अकालत्वात्। एते आधिदैविकाः। अत्र सर्वव्याधूपरो
धः। सर्वेषां व्याधीनां वातपित्तश्लेष्माण एव मूलं। तद्विगतात्। दृष्टफलत्वादागमाच्च पश्यामः। यथा हि तत्सर्वं वि
कारजातं वैश्वरूपेणावस्थितं मध्यतिरिच्य वातपित्तश्लेष्माणैर्वर्तते। दोषधातुमसंसर्गादायतनविशेषान्। निमित्त
श्लेषां विकल्पाः नवंति। दोषद्वयेतेष्वत्यर्थधातुसंज्ञाक्रियते। रसयंशोलितजोयं मांसजोयं अस्थिजोयं मज्जोयं
शुक्रजोयं व्याधिरिति। तत्रानाश्रितारोचका विपाकां गमई च रूढा सानृत्तिगौरवहृत्पांडुग्रहणी रोगमार्गोपरोध
कारो वै रस्यांगसादाकालजवल्ली प्रलितदर्शनप्रवृत्तयोरसदोषजा विकाराः। कुष्ठविसर्पपिडिकाः मशकनीलि
काकोष्ठतिलकालकन्यैद्योगे द्रव्ये सस्त्रीहविद्रधिगुल्मवातशोणितारोचुर्दो गमदोऽसृग्दररक्तपित्तप्रवृत्तयोर
कदोषाः गुदमुखमेदुपाकाश्च धिमां सार्चुर्दोरोदि जिह्वापुंजो रोगश्चेति कालजी मांससंघातोऽष्टप्रकोपगलगंडमा
लाप्रवृत्तयो मांसरोपमा। यं पिष्टदिगलगंडार्चुर्दमेदो जोऽष्टप्रकोपमधुमेहातिस्त्रोत्पातिस्वेदप्रवृत्तयामेदोदोषाः।

परीक्षाका
परीक्षाका
परीक्षाका

परीक्षाका
परीक्षाका
परीक्षाका

यदप्युक्तं मे
यदप्युक्तं मे
यदप्युक्तं मे

नरल कुश

नरव दुष्ट ७
पेठता स्त्रीगणनाशक्तत्वे श्रुतं च व्यापदिक्षुणधेत्वादि श्रुत्योत्पादयः २

प्रदुत शिना काणा प्रवृत्ति एते इद्रिया तमगो लभत तत्र त्वा रोषाः ३

मेव कोपकृतम्

मेव कोपकृतम्

उष्णविशेषः २

जतिप्रसूतिविद्या
जतिप्रसूतिविद्या

सुभाषित
 सगोत्रभाषि
 रत्ननैवावि
 दुष्काधीना
 स्थिरताया
 पतिः तत्रैव
 धेनुवैराजा
 तस्यैवमुक्त
 सर्वकालेस्य
 देशो नवायु
 विद्वत्काम्य
 विद्वत्काम्य
 विद्वत्काम्य
 विद्वत्काम्य

५७

नीतानिचका
सुश्रुतादि
निरुपादि

कदाचिन्महोपासादिव्यानापराधसंवेधानां प्रयोजनं प्रत्येक
साक्षात्संवेधानां वेदितुं देशकालादीनां अवकाशादिनां संवेधानां
यज्वरेवातलिंगादिविधितानां प्रयोजनं प्रत्येक
साक्षात्संवेधानां वेदितुं देशकालादीनां अवकाशादिनां संवेधानां
यज्वरेवातलिंगादिविधितानां प्रयोजनं प्रत्येक

मेहसुखस्योक्तसद्योबाणिदयतजमधिस्थाविशोधति नतीरुतीति शोधनप्रसङ्गमत्रात जीहिता ॥३॥ कुदोगविशोध

श्लोपदंशः स्तनरोगो विदारिका ॥१२॥ शौषिरोग लशालूकं कंठकाः क्षमिदंतकः ॥ दंतवैष्टः सोपञ्जराः शीतलौदंत
मुष्णुदः ॥१३॥ पितासृक्कफजाश्वौष्माः सुद्रोगाश्च न्यूयसः ॥ सीव्यामेदः समुच्छाश्च निनासुलिखितागदाः ॥१४॥ सद्यो
ब्रणश्चायौर्वैचैव संधिव्यपाशिताः ॥ नसारानिविधैः सुष्टानवामारुतवाहिनः ॥१५॥ नांतालोहितशल्याश्चतेषुसम
कविशोधनपांशुरोमतरणादीनिचलमस्तिनवेचयत् ॥१६॥ अहतानियतौमुनिपाचयेयुर्नरां वरुणं रुजश्चविवि
धाः ऊर्ध्वः तस्मादेतान् विशोधयेत् ॥१७॥ ततो ब्रणसमुन्नम्यस्थापयित्वा यथास्थिते सीयेत सूक्ष्मेण सूत्रेण वल्के
नास्मैककस्य वा ॥१८॥ स एनसौमसूत्राभ्यां स्नायुवालेन वा पुनः ॥ मूर्वा गुडची तंतुतानैर्वा सीयेद्वैलितकंशनैः ॥१९॥
सीयेत् रोगैर्लिकांवापिसीयद्वा तु न सेवनी ॥ रुजुयेथिमथोवापियथायोगमथापि वा ॥२०॥ देशेभ्यमांसे संधौ च सू
चीवृतां गुलद्वयं ॥ आयातां च गुलतश्चामांसलेचापि प्रजिताः ॥२१॥ धनुर्वकाहिता मर्मफलकोशोदारापरि ॥ इत्यता
स्त्रिविधाः स्तुची स्नीहणायाः सुसमाहिताः ॥२२॥ कारायन्मावती पुष्पवृता यं परिमंडलाः ॥ नातिदूरे निच्छेवास्तु चैक
र्मलिपातयेत् ॥२३॥ दुरादुजो व्रणौ क्लृप्स सन्निच्छेव लुंबनं ॥ अथ सौमपि चुछन्नं सस्मृतं प्रति सारयेत् ॥२४॥ प्रियं

स्मनक
मेविदारिका
दोदकमो
मार्ग ॥
सीसीनुसा
येतयजदसु
दोदकास
वर्तमाना

अतान्प्रताप
वेदिनाम्ना
स्थाने

तुहितामिव ५ मत्तसिचक्रं सवाचीप्रतीपाति निश्चयानि ३

मन्त्रादिना संस्कारः ४

तत्रैतानि त्रयं ध्याना विषयानि ॥
तत्रैतानि त्रयं ध्याना विषयानि ॥

॥२४॥ अथातोष्टविधिशस्त्रकर्मोयमध्यायंव्याख्यास्यामः॥

छद्धानगदरायप्रथमकास्तलकालकः। प्रणवत्माकुदन्वराश्चमकाः। जोस्वमासगा। जोश्वजतुमाणिमा
 संसधातोगलसुडिका। स्नायुमांसशि राकोथोकैस्मीकंरातपौनवः॥१॥ यध्रुषश्चोपदेशश्चमांसकंदीधिमांसकैः
 नेद्याविद्धयो न्यत्रसर्वजाग्रथयस्त्रयः॥३॥ आदितोयेविसर्प्याश्चष्टैर्द्वयः सविदारिकाः। प्रमैहविडिकारोफस्तेन
 रोगां वमंथकाः॥४॥ ऊनीकांनुशयीनाद्याष्टद्वौपुष्परिकावनी। प्रायसः सुदरोगाश्चपुष्टतां बुदेतजौ॥५॥ उंडिकेरी
 गलायुश्चसर्वयेचप्रपाकिनः। वस्तिस्तथाशमरीहेतोर्मदोजायेतुकेचने॥६॥ लेख्याश्चतस्रोहोहिण्येकैर्बासुमुपनि
 द्विकाः। मेदोजोदंतैर्वेदन्त्येग्रंथिर्वर्माधिजिह्विकाः॥७॥ अंशोसिमंडलेमांसकंदीमांसोन्नतिस्तथा। वेध्याः शिरावङ्क
 विधाः। मूत्रवृद्धिदकोदरं॥८॥ एषानाद्यः सशल्याश्चब्रणान्मांर्गिणश्चये। आहार्यारक्षसास्तिस्त्रोदंतुकणमलाशमरी
 ९॥ शल्यानिमूढगर्जाश्चवर्चश्चनिचिदेगुदोश्चाव्याविद्धयः पंचनवेयुः सर्वजोदुते॥१०॥ ऊष्टानिवायुः सरुजः शोफो
 यश्चैकादेशजैः। पाक्ष्यामलाक्षीपदानि विषजुष्टं च शोणितं॥११॥ अर्बुदानि विसर्प्याश्चग्रंथयश्चादितस्तुषे। त्रयस्त्रय

[illegible]

तत्त्व
निर्वाण
वैशाली
द्विपत्र
व्रीहि
नाचषापो
वृत्तच
शरीरविवि
शरीरविवि

वेद्यः आतुरः स्यात् दीवपातनं कुर्वन् दृष्ट्वा यस्मिन् ५
 आत्मना येन स्यात्पि न वेद्यः आतुरः नपि
 तस्मिन् तस्मात्तुल्योऽपि न

यथा स्वामेता निविचावयेच्च विंगनिमर्मस्वनिताडितेषु। स्पर्शान्नजानातिविपांडुवर्णीयो मांसमर्मण्यनिताडितः
 स्यात् ॥३५॥ आत्मनमेवाप्यजघन्यकारीशास्त्रेण यो हेति हि कर्म ऊर्वन्। तमात्मवानात्महितं ऊर्वेद्यं विजर्जयेदायु
 रनिष्प्रेमान् ॥३६॥ तिर्यक् प्रणिहितेशास्त्रे दोषाः पूर्वमुदहेताः ॥ तस्मात्परिहरन् दोषान् कुर्यात् शब्दस्वनिपातनं
 ॥३७॥ मातरं पितरं पुत्रान् बांधवानपि चातुरः। अप्येताननिसंकेतवैद्ये विद्या समेति च ॥३८॥ विसृजेत्यात्मनात्म्या
 नंतचैनं परिरक्षते। तस्मात् पुत्रवदैवेन पालयेदातुरनिष्क ॥३९॥ कर्मणा कश्चिदेकेन द्वाभ्यां कश्चित्त्रिणि
 स्तथा। विकारं साध्यते कश्चित् चतुर्निरपि कर्मणि ॥४०॥ धर्माथोकीर्तिमत्यर्थं सतां ग्रहणमुत्तमं ॥ प्राप्नुयात्
 स्वर्गं वा संचहितमारन्यकर्मणा ॥४१॥ इति ॥ २५ ॥ ॥ अथातः प्रनष्टरास्यविज्ञानीयमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥ ॥
 राक्षसाश्च शुगलौगमनेधातुस्तस्य सखी मीतिरूपं। ततद्विविधं शारीरमागंतु च ॥ सर्वशरीराबाधकरं तदि
 होपदिष्येत इत्यतः ॥ राक्षसाश्च तत्र शारीरं शोभनं खादिधातवो नमला दोषाश्च दुष्टाः। आगंतुपिशारीरस्वल्प
 व्यतिरेकेण यावन्तो नावा दुःखमुत्पादयन्ति ॥ अधिकारो हि लोहवेणुदृक्षष्टंगास्त्रिमयेषु। तत्रापि विशेषतो लो

आदिशराक्षीरकादिषु सर्वेष्वपि
 सादृशः आत्मानां च शरीरादयः
 मलाक्षेदादयदोषावाप्यः
 ते च दुष्टाः आगंतुमपि शक्तिः ॥

तदेवेति तदेवकारादि प्रयुक्तं सत्त्वं ज्ञातं प्रयुक्तं गामभी दीनहीन्पात्रं वा प्राणानां शीतानां पतन्नात्ता नो मम प्रयुक्तं तत्त्वं तत्त्वं मम ज्ञातं
 विप्रमो गेलिग निप्रतिपाद्यत न सो व्यत्यसपाह ५

वृंजनयस्याद्वैतश्चैः समंततः सध्वकी फलस्यैर्वाक्षौ मध्यामेनवा पुनः ॥२५॥ ततो ब्रह्मण्यथा योगं बद्धाचारि
 कामादिशेत् एतदृष्टविधं कर्म समासेन प्रकीर्तितं ॥२६॥ विंचिकिर्सेषु कास्म्येन विस्तरस्तस्य वक्ष्यते हीनातिरिक्तं
 तिर्यकुगाढछेदनमात्मनः ॥२७॥ एताश्च तास्माद्विधे कर्मणि व्यापदस्मृताः ॥ अज्ञानलो नाहितवाक्ययोगैर्नैयं प्रमोहे
 रपरैश्च नावैः ॥ यदा प्रयुंजीत निषक कुरास्व तदा स शेषान् ऊरुते विकारान् ॥२८॥ तं सारं रास्त्रा नि निरोषधैश्च नूयौ
 नि युं जानम युक्ति युक्तं ॥ जिजीविषुर्दूरत एव वैद्यं विवर्जयेत् उग्रविषाहितुल्यं ॥२९॥ तदेव युक्तं त्वति मर्मसंवीरहि
 स्यात् शिरास्मायुतथा स्थि चैव ॥ मूर्खे प्रयुक्तं पुरुषे स्तुणेन प्राणैर्वियुं ज्यादय वा कथं चित् ॥३०॥ अमः प्रधापः पत
 नं प्रमोहा विवेचनं संक्षय नो ह्यता च ॥ तस्यां गत मूर्खं न मूर्खं वा त तीव्रा रुजो वा तत्त ताश्च तास्त्र ॥३१॥ मांसोदकानं
 रुधिरं च गच्छेत् सर्वेन्द्रियार्थोपरतिस्तथैवा ॥ दशाहं संख्ये धपि हि सिंतेषु मासान्यतो मर्म सुलिंगमुक्तं ॥३२॥ सुरेंद्रगो
 षप्रतिमं प्रहृतं रक्तं श्वेदं सतजश्च वायुः ॥ करोति रोगान् विविधान् यथोक्तान् छिन्नाशुनि नास्त्वथ वा सिरासु
 ३३ ॥ कौञ्चं शरीरावयवावसादः क्रियास्वशक्तिस्तु मे लो रुजश्च चिराद्दृणोरो हति यस्य चापि तं स्नायु विद्धं मनुजं व्यवसेत् ॥३४॥

हितं खे रने
 किंचि न्यूनं
 अतिरिक्तं
 ते रति यम
 गारद्वे
 वैद्य हलाह
 छेदने अज्ञा
 दिष्टं लो ज्ञ
 जवू शेषान
 व्याधी न्यथा
 शरीरं तस्य
 जानति यत्ना
 प्रमोहो लो
 मूर्खोपि लो
 उपता अहं
 तेषां

नमो भगवते वासुदेवाय

गते स्थि वच्चेष्टो परमश्च। कोष्ठगते त्वारोप आनाहौ सूत्र पुरीषाहारदर्शनं च त्रणमुखात् नवति। मर्मगते मर्मविद्ध
वाचेष्टते। अस्मगतिषु शाल्येष्टे तान्येव लस एनस्पष्टानि नवंति। महोत्पल्यानि वा शुद्धदेहानामनुलोमसन्निविष्टानि
रोहंति॥ विशेषतः कंठः श्रोतः शिरात्कूपे रयस्थि विवरेषु। दोषप्रकोपे व्यायामानिद्याता जीर्णेभ्यः प्रवर्तिता निपुनर्वा
धंते। तत्र त्वक्प्रणष्टे क्रिस्निग्धस्निग्धायां मन्माषयवगोक्षमगोमयमृदिनायां त्वचियत्र संरं नो वेदनावानवति तत्र शाल्यं
विजानीयात्। स्नानघृतमृच्चंदनकल्कैर्वा प्रदिग्धयां त्वचिशाल्योष्मणा सुविसरति॥ घृतमुपश्लिष्यतिवाले पोयत्र तत्र
शाल्यं विजानीयात्॥ मांसप्रनष्टे स्नेहस्वेदादिनिःक्रिया विशेषैरविरुद्धैरातुरमुपपादयेत्॥ कश्चित्स्थितु शिथिलीकृत
तमनववद्धं स्यमाणं यत्र संरं नो वेदनां वा जनयति। तत्र संशाल्यं विजानीयात्। कोष्ठास्थि संधिपेसी विवरेष्वस्थि
तमेव परिक्षेपत। शिराधमनी श्रोतः स्नायुप्रणष्टे खंडचक्रसंयुक्ते याने व्याधितमारोह्याशु विषमे धनिर्यायात्। यत्र सं
रं नो वेदना नवति। तत्र शाल्यं विजानीयात्। अस्थिप्रणष्टे स्नेहस्वेदोपपन्नान्यस्तीनिबंधनपीडनाभ्यो नृशमुपाचरे
त्। यत्र संरं नो वेदनावानवति। तत्र शाल्यं विजानीयात्। संधिप्रणष्टे स्नेहस्वेदोपपन्नान् संधीन् प्रसारणाञ्चन

विस्मयि सन्ने। हृष्टपि सुखं त्वं शरयि वाह
 अतिविश्रामं सपेता २
 शुद्धं त्वं सुखं करोता २
 तेषां निष्कामं शरीरायः

विविधं धर्मं ब्रवीत् ३
 कथं कति कति २
 अत्र कति २
 अत्रिचर्यं त्वं
 स्त्रिकाय २

इत्वा शरीरे किं ज्ञाते ९
 अथ चिन्ता ४
 महत्वादि ४ जेदा ४ मासगते ४ पेश्व ४

मया व्या
 लादि ३
 सदा ३

महात्मा ४
 धर्मजी ४
 मद्रा ४
 उग्र ४
 चिन्ता ४
 वमन ४

हे धेवा विषं शरं त्वं यो पुन नत्वा। लोहं स लोहानामपि दुर्वीरत्वादेणु मुखत्वात् दूरं प्रयोजनं करत्वाच्च। शरं
 वाधितं तः। स द्विविधः। केलीश्च स्त्रीश्च। तत्र प्रायेण विविधं वृक्षं पुष्पं फलं तुल्योत्तमं यो व्याख्याताः। व्यालमृगप
 क्षिवक्रसदृशश्च सर्वं शल्यानां तु महतामण्डितं वापं विधोगतिविशेषाः॥ ऊर्ध्वमधोवाचिनेयं स्तिर्यक् रुरुचुरिति।
 तानियदा वेगस्य या अतीया तादात्म्ये गादिषु व्रणवस्त्रुस्त्वनिष्ठं ते॥ धर्मनीश्रोतोऽस्ति तद्विवरपेशीषु वा शरीरप्रदोषे
 धृतत्रयस्य एवमुच्यमानं मुपधारय। श्यावैपि डिक्वाचितं शोकवेदनावं तं मुहं मुहं। शोणिताश्चाविण्णुद्वन्द्वं। मृ
 दुमांसं व्रणं जानीयात् स शल्यो यमिति। सामान्यमेतद्धृत्त एवमुक्तं। वैशेषिकं तु त्वगते विवर्णः शोको न वै त्यायतः। क
 षि नश्च मांसगतेशो नाफानि दृढिः रक्षमार्गं नृपसरोहः। पीडना सहिष्णुतां चोषवपाको च। पेश्वं तरस्त्रेप्येतदेव चोष
 शोषवर्जं पाकानावात् शिरागतेशिराध्मानं शिरासूत्रं शोकश्च॥ स्नायुगते स्नायुजा लोके पणं सुरं च शो ग्रा रुजः
 श्रोतोगते श्रोतसंस्वकर्मगुणहानिः। धर्मनीस्ते सफेनं रक्तं मीरयन्ननिलः स शो निर्गच्छत्वे गमदः। पिपासा हृक्षोस
 च। अस्ति गते विविधा वेदना प्रादुर्भावः। शोकश्च। अस्ति विवरगते अस्ति क्षणं ता अस्ति निस्तोदः संहर्षो बलवांश्च॥ संवि
 चीड विज्ञेय ९

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

पराधीन

बंधनपीडनेर्त्तुशमुपचेत्। यत्र सरं नो वेदनावानवति तत्र शल्यं विजानीयात्। मर्मप्रनष्टे त्वन्य नावान्मर्मण
 मुक्ते परीक्षणं नवति। सामान्यलक्षणमपि। हस्तिस्कंधाश्चष्टुष्टु पर्वतदुमारोह एधनुर्व्यायामदुतयानं निरुद्धिगम
 नलघनस्रवनप्रतरणव्यायामैर्त्तु नोद्गारकारसवद्युष्टीवनहसनप्राणायामैर्वीतमूत्रपुरीषशुक्रोसर्गैर्वा यत्र सरं
 नो वेदनावानवति तत्र शल्यं विजानीयात्। नवति च। यस्मिंस्तदादयो देशे सुसुतागुरुतापि च। वृद्धते व कुशो
 यत्र शूलयते रुज्यते पि च॥ अतुरश्चापियदेशे नीलैर्वा परिरक्षति। संवाद्यमानो बहुशः तत्र शल्यं विनिर्दिशेत्॥२॥
 अल्यबाधमश्नने च निरुजं निरुपद्रवं। प्रसन्नं मृदुपय्यं तं निरावृद्धमनुत्तमं॥३॥ तेषां सर्वतो यथा मार्गं विकिसकः
 प्रसाराञ्च नान्नूननिः शल्यमिति निर्दिशेत्॥४॥ अस्थ्यात्मकं न ज्यते तु शल्यमंतश्च शीर्यते। प्रायो निर्ज्यते सा
 र्गमायसंचेति निश्चयः॥५॥ वासं वै एव तार्णानि निद्रियं ते तु नो यदि। पचंति रक्तमांसं च क्षिप्रमेतानि देहिनां॥६॥
 कोचनं रजतं ताम्रं रैत्यैर्कैर्वा पुसीशकं। चिरस्थानाद्विधीयंते पित्ततेजः प्रतापनात्॥७॥ स्वभावशीता मृदुवो यवा
 न्ये पीडशामनाः॥ इवीकृता शरीरे स्मिन् एकत्वं याति धातुनि॥८॥ विषाणदं तैर्केशां स्थिर्वेणुदोरुपधानि च। रा

शीतल

वर्तमाना
पञ्चोक्तः

(गख)
के शपम्

तमुस्य प्रहारेण विचाल्य यथा मार्गे एव यंत्रेण विमृदित कर्णानि कर्णवत्पना बाधकर देशो उडितानि। पुरस्तादेव
जातुषे तु कंठसु कंठे नोडी प्रवेशयामित स्याच्च शलाकांतया वग्य शीतानि रद्भिः परिबिच्य स्थिरीकृतमुद्धरेत्।
अजातुषे तु जंतु मधु छिष्ट लिप्तया शिषा कया सर्व कल्पे नैत्येके। अस्थिशल्यमन्यद्वातिर्य्य कंठशक्तमवेक्ष्य के
शोदकं दृढैक स्तत्र बंधुं दुव नक्तोपहतं पाययेत्। आकंठात् सृणीकोष्ठं च वामयेत्। वृमनश्च शल्यैक देश सक्तं सा
त्वास्तत्र सह सात्वा स्तिपेत्॥ मृदुना वादं तधावन कूर्च केलाप हरेत्॥ प्रणुदेदो तं। सत कंठाय च। मधु सप्पिषीजे
दुप्रयच्छेत्। च फलाह्न एवामधु शर्करा मिश्रं उदके सृणीमिका छिर समवपीडयेधुनीयाद्वा मयेद्वान स्मरा शौवानि
षच्चेदा मुखात्। आस शल्ये तु कंठशक्ते निः शोक मन वबद्धं स्केधे मुष्टिना निह न्यात्॥ स्नेहं मधु पानीयं वा पाययेत्।
वा डुरु जालना पी शकं ठपीडना दायुः प्रज्जपितः। श्लेष्माणं को नयित्वा श्रोतो निरुणद्धि तदा ला लाश्रवं फेनागम
नं संज्ञानाशं चापादयति। तमन्यज्य संखेद्य शिरो विरेचनं तस्मै तीक्ष्णं विदध्यात्। रसे च वातघ्नं दद्यादिति॥ नवेति
चात्र॥ शल्यान्ततिवेशेषां च स्थानान्य वेक्ष्य नेकधा तथा यंत्र पृथक् च क्षम्पकरा ल्यमथाहरेत्॥ कर्णवन्ति तु शल्या

नजलेतेनं ह्युदीते मलोचयेत् रसैरुद्येदस्ममो विभुः ॥
स्वापयेचते ५ तलः ५ ॥ अस्मिन् च तन्निजोक्त ५

सर्वशल्यानां तु महताम एतानां वा द्योवे वा हरण हेतु नवत प्रतिलोमो नुलोमश्च । तत्र प्रतिलोम मर्वाची न मानयेत् ।
अनुलोमं पराचीने । उत्तुंडितं छित्वा निर्वीतये छेदनीय सुखान्यपि च क्लृप्तं सावं स एपार्थकांतर पतितानि च । अ
नुत्तुंडितशल्यानि छेदनीय सुरबानि च ॥ अनिर्वीत्यानि विजानीयात् ॥ ह्यः छेदा नुबन्धतः ॥ हस्तशक्यं यथा मार्गेण हस्ते
नैवापहर्तुं मशको वि सशरास्त्रेण यंत्रेण पहरेत् ॥ शीतले तंत्रेण ल्पत्वा स्वेदार्हमग्निघृतप्रचृतिनिः संस्वेद्या वदत्य
प्रदित्वं सपिर्मधुन्यां बंधाचारिकुमादिरोत् ॥ शिरास्त्रा युविलघ्नशलाकादि निर्विभो ओपनयेत् । स्वयं शुभ्रस्व रंगम
वपीधे स्वयं शुद्धं ॥ बलवारं गं अंशो दिनिर्वंधा हृदयमनितो धर्तमानं शीतजलादि नि रुद्धे जितस्यो पहरेद्यथा मायं
दुस्पहारमन्यतो पराध्यमानं शीतजलादि नि पोटयित्वा हरेत् ॥ अस्थिविवरप्रविष्टमस्थिविदं चावगृह्णन् प्रादा-
पुरुषो यंत्रेण पहरेत् । अशक्यमेवं बलवद्भिः सुपरिगृहीतस्य यंत्रेण ग्राहयित्वा शल्यवारंगं प्रविष्टं स्वधनुर्गुलै
बंधे कतश्चास्वस्पर्शं चाग्राह्यं यतस्याऽश्चैतन् वक्रं कटके बंधीयात् ॥ अथैतं कशया ताडय यथोन्नमि शो यिरोवेगेन
शल्यमुद्धरति । दृढां वा वृक्षशालामवनस्पतस्यां च वद्धकोद्धरेत् ॥ अस्थिदोशा तुं डितमर्वा चान्ममुद्धरात्ता मन्य

सप्तमि ३

प्राप्ताणि विशेषेण
नष्टं च ॥

१. एतन्निर्गुणं त्रिंशत्तार्यतविधमात्रेण विवृ
फा. न. विवृ. कृतः ५
उ. ग्राह्यत्व ५

फा. न. पति पुष्प अति प्रति धर्म ज. ल. व. ए. पति म. ल. दे. वि. शि. व.
अति प्रति धर्म प. ध. त. त. य. श. ए. च. व. त. स. य. प. य. त. ३

अ. त. य. ५
अ. त. य. ५
अ. त. य. ५

निदुराहार्याणियानि च। आद दीत निषकृतस्मात्तानि युक्ता समाहिताः॥२॥ एतैः रुपायैः शब्दं तु नैव निय्यात्ते
यदि॥ मत्यानि पुण्यावैद्योयं त्रयोगे च निहरेत्॥३॥ इति०॥२०॥ अथातो विपरिचय एव विज्ञानीयम्
आयं व्याख्यास्यामः॥ फलाग्निजलवृष्टीनां पुष्पधृमां बुदायथा। रसोपयति न विषयत्वं तथारिष्टानि पंचता॥१॥
तानि शस्मात् प्रमोदीदीतथैवाशु व्यतिक्रमात्॥ गृह्यते नोक्तान्यसौ मुस्रुषीर्न त्वसंनवात्॥२॥ क्रवंतु मरणे रिष्टे श्री
सलैस्त किं लामलैः॥ रसायनतपो जाप तत्परे निवो निवो व्यते॥३॥ न सत्र पीडा बडु धायथा कालं विपुस्यते। तथै
वरिष्टपाकं तु श्रुवैते बहवो जनाः॥४॥ असिद्धिमाश्रुयाधोके प्रीति कुर्वन् गता युषः। अतो रिष्टानि युक्तेन लसयेत् अ
शलो निषत्॥५॥ गंधवर्ण रसादीनां विशेषाणां स्वभावतः। वैल्लंते यत्तदा चष्टे व्रणिनः पक्व लसणं॥६॥ कटु तीक्ष्ण
अविश्वं गंधस्तु पवनादिभिः॥ लोह गंधिस्तुरकेन व्यामिश्रः सानिपातिकः॥७॥ लाजातरी तैल समाः किं विद्विष्टा
अगंधतः॥ श्लेयाः प्रकृतिगंधास्तुरतो न्यजं धवैल्लंते॥८॥ मद्यो गंधो ज्यसुमनः पंच चंदन चंपकैः। सुगंधादिव्यं गंधाशु
मुस्रुषीणां प्रणाः स्मृताः॥९॥ स्ववाजिभूषिकंधी संप्रति वल्लूरमकुलैः। सगंधा पंच गंधाश्च भूमिगंधाश्च गर्हिताः॥१०॥

चि. नि. क्वा. नि
व्या. ला. क्रि. य. ते. ५
ने. ल.
अ. त. य. नि. य.
स्व. त. ल. र. त.
य. नि. ५

स्वान १ धो. ५ अ. स. क. ज. स. शु. मा. स. १ आ. क. र. १
म. शु. मा. स. चि. कि. त. स. क. र. व. न. ५
अ. त. स. क. र. व. न. ५ वि. प. री. त. गी. दि. ४

दी. य. नी. य. ५
क. वा. ती. शि. उ. ते. व. शि. आ. म. गी. ५
र. क्ते. न. लो. ह. गी. ५ उ. त. य. मि. श. ५ मी. का.
स. नि. पा. ते. न. ५

३५५

जलरोधे
 लीपावधे ३
 पश्चिम् नमः
 बर्ते मौर्ये
 धीनिष्ठ इत्यादि
 श्रीयद्वराने
 शुभवेत्तवः
 न वेष्टाने वन
 निगुनाम्
 प्रहृति॥

481

श्वेतोत्तररक्तनीलकण्ठः ॥ १ ॥
श्वेतोत्तररक्तनीलकण्ठः ॥ १ ॥
श्वेतोत्तररक्तनीलकण्ठः ॥ १ ॥
श्वेतोत्तररक्तनीलकण्ठः ॥ १ ॥

नैककार्योत्तरयकाः ॥ १ ॥ गृह्णोद्युत्तरयकाः ॥ १ ॥
नैककार्योत्तरयकाः ॥ १ ॥ गृह्णोद्युत्तरयकाः ॥ १ ॥
नैककार्योत्तरयकाः ॥ १ ॥ गृह्णोद्युत्तरयकाः ॥ १ ॥
नैककार्योत्तरयकाः ॥ १ ॥ गृह्णोद्युत्तरयकाः ॥ १ ॥

श्वेतोत्तररक्तनीलकण्ठः ॥ १ ॥
श्वेतोत्तररक्तनीलकण्ठः ॥ १ ॥
श्वेतोत्तररक्तनीलकण्ठः ॥ १ ॥
श्वेतोत्तररक्तनीलकण्ठः ॥ १ ॥

मिथ्यादिजज्ञिरवतीतिस्मर्यन्मन्यस्मवा
कारहारप्रतिनय्यद्वारेवीचारलीये २

पतनरुण्डि १

प्रतिषिद्धं तथा जगत्सुतस्त्रावितमाहितं। दौर्मनस्यैव वैद्यस्य यात्रा यो न प्रशस्यते ॥ ४४ ॥ प्रवेशोपेतदुद्देशाद्वे
स्य च तथातुरे ॥ प्रतिद्वारेण हे वास्य पुनरेन न प्रज्यते ॥ ४५ ॥ केशानस्मात्स्थिकाष्टारमतुषकृपासकंठका ॥ पदोर्ध्व
पादमध्याधोवसातैर्धृतिवास्तुणं ॥ ४६ ॥ नपुसकव्यंगननननमुं— इतपश्चिनः। प्रस्थानेवाप्रवेशवानप्येतेदर्शनंगताः
४७ ॥ नांडानां संकरस्थानां स्थानां संवरणं तथा। निरुगतोत्पादनैर्नंगः पतने निर्गुप्तस्तथा ॥ ४८ ॥ वैद्यासनावसादोवारो
गीवास्यादधोमुखः ॥ ४९ ॥ वैद्यं संजापमाणं गं कुं धीमास्तरणानिवा ॥ ५० ॥ प्रमृष्टाधुनीयादाकरौष्टं शिरस्तथा ॥
हस्तेवाल्गव्यवैद्यस्य न्यस्येत् शिरशिचोरसि ॥ ५१ ॥ यो वैद्यमुन्मुखः पृष्ठे तं वा स्वागमातुरः। न सिध्यति वैद्यो वा गृहे य
स्य नैद्यते ॥ ५२ ॥ न वने प्रज्यते वापि यस्य वैद्यः स सिध्यति ॥ शुनं शुनेषु दूतादिषु शुनं ह्यशुनेषु च ॥ ५३ ॥ आतुरस्य ध
वंतस्मात्तदूतादीन् लक्षयेद्भिषक्। स्वमानतः प्रवक्ष्यामिरणानियं शुजाय च ॥ ५४ ॥ सुहृदायां स्तुपश्येति व्याधितो वा
स्वयंतथा। स्नेवान्यक्तं रारीरस्तु कं न व्यालकं देनैः ॥ ५५ ॥ वराहैर्माहिषैवापियो यो यादक्षिणा मुखः ॥ रक्तो वरधरा च
स्माह संतीमुक्तमूर्धजाः ॥ ५६ ॥ यं वा कर्षति वध्वास्त्री नृत्यंति दक्षणा मुखं। अंतोर्वसायि नियो वा स्यते दक्षिणा मुखः ॥ ५७ ॥

पतनरुण्डि ३

प्राप्ति ६

हृदयप्रियकारी

यायिनः श्रेष्ठाः वाचश्च हृदयंगमः ॥ पुष्पपत्र फलोपेतान् सस्त्रीगान् निरुजोर्ब्रूमान् ॥ ३० ॥ आश्रितावान् नोवेश्मध्वजतो
 रणवेदिकाः ॥ दिक्षु रीताश्च वक्ता रोमधुरं पृष्टतो नुगाः ॥ ३१ ॥ वामावादस्त्रिणावापिशक्रनाः कर्म्म सिद्धये ॥ शुक्लेशनि ३
 हते पात्रे वक्षीन द्वे सकंठकोः ॥ ३२ ॥ वृक्षे वा रमन्तस्मास्ति विदुषां गारपां शुभु ॥ चैत्यवल्मीकविषमस्त्रितादीप्तख
 रस्वराः ॥ ३३ ॥ पुरतो दिक्षु दीप्तास्त्रुवकारो नर्थसाधकाः ॥ पुन्नामानः स्वगावामाः स्त्रीसंज्ञादस्त्रिणाशुगाः ॥ ३४ ॥ रुहाशु गोधा ४
 कारिका चैव पौदकं गिलाशिवा ॥ वामावृताः प्रशस्यन्ते स्त्रियो ॥ ३५ ॥ नौ सौ कौशिकयोश्चैव न प्रशस्यं किलो नयं ॥ दर्श
 नं वारुतं वापिन गोधाळकलाशयोः ॥ ३६ ॥ दूतेरनिष्टैस्त्रुप्यानां अशस्तं दशनं नृणां ॥ नञ्जलछतिलकर्पासतुषपाणन
 स्मनां ॥ ३७ ॥ पात्रं नेष्टं तथांगारतैलकर्म मष्टां तुरितं ॥ प्रसन्नेतरमद्यानां पूर्णवारक्तसर्वपैः ॥ ३८ ॥ शिवकाष्टपला
 शानां शुष्काणां पथिसंगमाः ॥ नेष्टैते पतितां तैस्तुः दीनां धरिपवस्तथा ॥ ३९ ॥ मृदुः शीलो नु कूलश्च सुगंधिश्चानिधाः ॥ श्री ४४
 शुभं नः ॥ परोक्षे निष्टगंधिश्च प्रतिलोमश्च गहितः ॥ ४० ॥ ग्रैथ्यर्बुदादिषु सदा छेद्यं राक्षसु सजितः ॥ विद्वद्भरुत्तमे ति ३
 पुनेदशब्दस्तथैव च ॥ ४१ ॥ रक्तपित्तातिसारेषु रुद्धः राक्षः प्रशस्यते ॥ एवं व्याधि विशेषेण निमित्तमुपधारयेत् ॥ ४२ ॥

एते व्याधि विशेषवचनं २

शिरोरुजि ॥६९॥ शुक्लीनक्षत्रं छर्द्यामध्वास्वासपिपाषसयोः । हारिदं नोजनं चापियस्यस्यातां दुरोगिण ॥७०॥ रक्तपि
 तीपिवेद्यश्च शोणितं सविनश्यति । स्वप्नानेव विधान् दृष्ट्वा प्राते रुच्छाय नतः ॥७१॥ दद्यामाणास्तेनान् लोहिं विप्रेभ्यः
 कांचने तथा । जपेच्च पिशुनान् मंत्रान् गायत्रीं त्रिपदां तथा ॥७२॥ दृष्ट्वा तु मथ मेयामे सुष्याध्यात्वा पुनः शुनं । जपेद्वा न्य
 तमं वेदं ब्रह्मचारी ममाहितः ॥७३॥ न चाचक्षीत कस्मैचिद् दृष्ट्वा स्वप्नमशो नने । देवतायत्नने चैव वसेद्वा त्रित्रयं त
 था ॥७४॥ विप्रोश्च सजयेन्नित्यं दुःस्वप्नात्परिमुच्यते । अत ऊर्ध्वं प्रवक्ष्यामि प्रशस्ते स्वप्नदर्शनं ॥७५॥ देवान् द्विजागो वृ
 ष्णान् जीवनः सुहृदो नृपान् । समिद्धं येषां धैर्यमाय च । महाप्रासदस फलो वृक्षवराणामुनः ॥७६॥ मयि साधुं
 च निर्मला निजलानि च ॥७७॥ पश्येत्कल्याणलाजाय व्याधरपगमाय च । महाप्रासादस फलवृक्षवारणपर्वतम् ॥७८॥
 आरोहेद्व्यलाजाय व्याधैरपगमाय च ॥ नदीनदसमुद्रांश्च सुनितां कलुषोदिकान् ॥७९॥ तत्रैकल्याणलाजाय व्या
 धैरपगमाय च ॥ उरगोवाजलोको वज्रमरो व्यापियं दिशेत् ॥८०॥ आरोह्य निर्वृत्तं तस्य धनधानं च बुद्धिमान् ॥ एवं
 कृत्वा नृशुनान् स्वप्नानयः पश्येत्स्वप्नाधितो नरः ॥८१॥ सदीर्घायुरीति ज्ञेयः तस्मै कर्मसमाचरेत् ॥ इति ० ॥ २९ ॥

मन्त्रि साधुं स्थितिर्मा निजलानि च

परिजेरन्यंचापिप्रेताः प्रव्रजितास्तथा। मुकुटाधायतेयश्च स्वापदैर्विलताननैः॥५७॥ पिवेन्मधुचनैलेचयोवापंके
वसीदति। पंकप्रदिग्धगात्रोवाप्रनृत्येत्प्रहेसतथा॥५८॥ निरंबरश्चयोरक्तांधारयेत्शिरसिस्त्रजं। यस्यवेशोन
लोवापितालोवोरसिजायते॥५९॥ यवामसोयसेयोवाजननीप्रवेशेनरः॥ पर्वताग्रपर्यतेत्योवास्वैवातमसाह
ते॥६०॥ क्रियेतेश्रौतसायोवा ^{मवा}मवाश्रुयात्॥ पराजीयेतबध्येतकाकाद्यैर्वानिभूयते॥६१॥ पतनेतारकादी
नां प्रनाशंदीपचक्षुषोः॥ यः परपत्तदेवतानां वा प्रकंपमवनेस्तथा॥६२॥ यस्य छर्दिविरेकोवादशनाः प्रपतंतिवा।
शास्त्रलोकिशुकं संपवन्मीपारिचद्रकं॥६३॥ पुष्पाद्यंकोविदारं वा यो धिरोहिनिमानवः॥ कर्प्यासतिलपिण्याकालो
हानिलवणं तिलान्॥६४॥ लनेतास्नीतवापकं अन्नं यश्च पिवेत्सुरां स्वस्थः स लनते व्याधिव्याधितो मृत्युमिच्छति॥६५॥
यथा स्वः प्रवृत्तिस्वप्नो विस्मृतो विहतश्च यः॥ चिंतास्तुतो दिवा दृष्टो न वत्पफल एव सः॥६६॥ अकल्याणमपि स्वप्नं दृष्टे
तत्रैव यः पुनः॥ सौम्य परपत्तश्चुनाकारं तस्य विद्यात्शुचं फलं॥६७॥ चरितानां शुभां सख्यैकपिसख्यनुशो विना॥ उ
न्मादे राक्षसैः प्रैतैरपस्मारे प्रवर्त्तने॥६८॥ मेहाति सारिणो तोयपानं सेहं स्पृष्टिनां। गुप्ते तु स्थावरोत्पतिः कोष्टे मूर्ध्नि

आमको धा १२
 अमे धी ता इ उ व लु पा दि गु ह ति ३
 त धी तिनः ध नो न नी ल पी ता धी वी मा
 ना दि २

न च त्रा ति चै र सूर्य यो रा त्रौ दी वा प्र तर्णी
 अ नी ले र प धा रणि प रणा ति रू पा दी म त्र ३
 प र्वा ध मा दि छु छु जो क र म्पु ज न ए त श न
 अ न सौ ष्मा ह इ व व

नेर ह ति ना वा न न्या श्व यो न रः॥ दि वा ज्यो ती षि य श्वा पि ज्व लि ता नी व प र प ति ॥१३॥ रा त्रौ सूर्य ज्व लं तं च दि वा वा चै इ व
 चै सं अ मो धो प लु वे य श्व रा क चा प त डि ड्रु णा न् ॥१४॥ त डि त्वं तो सि ता न्यो वा नि र्म ले ग ग ने ध ना न् वि मा न या न प्रा सा
 दे र्य श्व सं ऊ ल म वे रं ॥१५॥ य स्या नि ले सृ ति मं तं अं त रि क्षे च प र प ति धू म नि हा र वा सो पि नि रा ह तौ मि व मे दि नी ॥१६॥
 प्र दी प मि व लो कं च यो वा ह्यु त मि वा न सा अ मि म ह्यौ प दा का रां ले खा नि र्य श्व प र प ति ॥१७॥ न प र प ति स न स त्रो य श्व
 दे वी म रु ध तौ ध्रु व मा को रा गं गां चा तं वे दे ति ग ता यु वं ॥१८॥ यो आ द सो ष्म तो ये षु छा यो य श्व न प र प ति प र प त्ये को
 ग ह्नी नो वा वि लु ता न्य स त्व जं ॥१९॥ श्वा क क कं क र ध्रा णो मे ता नां य स रा स सां पि शा चो रु ग नू ता नां नू ता नां वि लु ता म पि
 ॥२०॥ यो वा म ह्य रं कं ठा नं वि धू मं व कि मि स्य ते आ तु र स्य ना वे नृ त्कः स्व स्तो व्या धि म वा ह्यु या त् ॥२१॥ इ ति ॥३०॥
 अथा तः छा या वि प्र ति प ति म ध्या यं आ र व्या स्या मः ॥ ॥ श्या मा लो हि ति का नी ला पी ति का वा पि मा न वं अ नि इ वं ति यं
 छा या स प रा सु र सं रा यं ॥१॥ द्वा श्री यो न र प तो य स्य ते ज तु जः स्मृ तिः प्र ना अ क स्मा त् यं न जं ते वा स ग ता सु र सं रा यं
 ॥२॥ य स्या धा रो ह्य प ति तैः क्षि प्र श्चो र्दं त यो त रः ॥ उ नो वा जो व वा ना सो दु र्ध नं त स्य जी वि तं ॥३॥ आ र त्का द रा नो य स्य

प्रा क्त ४८
 की गा न त्स
 न प्र वा ह कि
 पा च न प र प
 ति ५ न त्स
 ना न्म पि शी दि
 र ति ता ६
 जी ल तो म ल्य
 श्व लो ल रा
 मु ह्ती प र्वा
 दि श री र जे व

अ यु क्त न ज्मा प अ ५
 व ति नि ना श्वा ना ज ह्ता न्ने द क थ ने ३ ध र्म व ना नो ही त का अ व स्र व र्ण नी ज व र्ण नि र त्र व र्ण नि पी ति अ ह रि ता व र्ण नि इ ति व न व यो
 प रा सु रा स पं च त्व मी त्म रः २ न ज्मा प्र ना सो र्य मि ति या व र् २ ते ज प्र ना श र्ज ज व लः सृ ति प्र ना जो र व र्ण नि ह वा क सि कि अ क्त मी व र्ण नि
 प रा य मी तः १ उ र्य मे व ग तः १

५३॥ ३

॥ १ ॥
 अथ दशविंशति पञ्चदश्यादि नि
 चरति ॥ १ ॥
 अथ दशविंशति पञ्चदश्यादि नि

अथ दशविंशति पञ्चदश्यादि नि
 चरति ॥ १ ॥
 अथ दशविंशति पञ्चदश्यादि नि

अथातः पंचेद्विंशति पञ्चमध्यायं व्याख्यास्यामः ॥ ॥ शरीरं शीलं यो र्पस्य प्रवृत्तेर्विच्छते न वेत् ॥ तत्तुरि
 षं समासेन व्यासते तस्य निबोध मे ॥ १ ॥ शृणोति विविधान् शैथिल्योदियानाम नावनः ॥ समुद्रपुरमेवानाम संपत्तोच नि
 स्वनाम् ॥ २ ॥ तान् स्वनाम्ना वदन् ह्लाति मन्यते चान्यथा वदन् ॥ ग्राम्यारण्ये च नश्चापि विपरितान् शृणोति च ॥ ३ ॥ द्विषत्
 शब्दे पुरमते ॥ सुहृत् शब्दे पुञ्ज्यते ॥ न शृणोति च यो कस्मात् तं ब्रुवंति गता युषं ॥ ४ ॥ यस्मात्समिव गृह्णाति शीतमु
 स्मं च शीतवत् ॥ संजात शीतं पिडिको यश्च दाहेन पीड्यते ॥ ५ ॥ उष्णगात्रोति मात्रं च युः शीतेन प्रवेपते ॥ प्रहारान्नाति
 जानाति यो गच्छेदमथापि वा ॥ ६ ॥ पांशुने वा वकीर्णं नियस्य गात्राणि नायते ॥ वलान्य तावो राज्ञो वा यस्य गात्रे न वेति च
 ॥ ७ ॥ स्नातान् दुषिष्ठं यं चापि न जैते नीलमसिकाः ॥ सुगंधिर्वातियोऽकस्मात्तं ब्रुवंति गता युषं ॥ ८ ॥ विपरीतेन गृह्णाति स
 न्यश्चोपयोजितान् ॥ उपयुक्ता क्रमाद्यस्परसादोषा निवृद्धये ॥ ९ ॥ यस्य दोषाग्रिसाम्यं च ऊरुर्मिथोपयोजिताः ॥ यो वा
 रसान्नसंवेत्ति गतासु तं प्रवक्ष्यते ॥ १० ॥ सुगंधं वेति दौर्गंध्यं दुर्गंधस्य सुगंधतां ॥ गृह्णीते यो न्यथा गंधं शांते दीपे च नी
 रुजः ॥ ११ ॥ यो वा गंधं विजानाति गतासु तं विनिर्दिशेत् ॥ दंडो न्युष्महिमादीनिका वा वस्त्रादिशस्तथा ॥ १२ ॥ विपरीते

वधने

नीलमसिका विच्छिन्नं विच्छि
 सुगंधं वेति दौर्गंध्यं दुर्गंधस्य सुगंधतां
 गृह्णीते यो न्यथा गंधं शांते दीपे च नी
 रुजः ॥ ११ ॥ यो वा गंधं विजानाति गतासु तं विनिर्दिशेत् ॥ दंडो न्युष्महिमादीनिका वा वस्त्रादिशस्तथा ॥ १२ ॥ विपरीते

पश्य पुरुषं पादाप्रसृतशोभः ^{अतीसारं धुपरवासी हो} ^{वार्मशरीरसंनयनं} ^{वत्तवत्त्वे दादिमूर्ति}
 स्त्रियोवाभ्रवात्प्रसृतः ^{मजीवति २} ^{पूरलोवे} ^{वत्तवत्त्वे दादिमूर्ति}
 इतयोप्रसृतः स्वतंत्रमादिश्वेतो ^{मशनिः किमांश ४} ^{दसामय ४} ^{मशनिः किमांश ४} ^{मशनिः किमांश ४} ^{मशनिः किमांश ४}
 वल्लतशोकपादसमुच्चितः ॥ पुरुषं हंति नारी तु मुखजो गुह्यजो द्वयं ॥ १७ ॥ अतीसारो ह्यारोहिष्काश्चर्हिः श्रनोडमेद्रा
 ता ॥ कासिनः स्वासिनो वापि यस्य तं स्त्री एमादिशोत् ॥ १८ ॥ स्वेदो ददाहश्च बलवान् हिष्काश्चास्यमानवं ॥ बलवं त
 मपि प्राणैः वियुजंते न संशयं ॥ १९ ॥ रूपावा जिह्वा न वेद्यस्य सयं चाक्षिनि मज्जति ॥ मुखं च जायते हृत्तियस्य तं पति
 वर्जयेत् ॥ २० ॥ वक्रमाद्यर्प्यते श्रुणां विद्यते श्वरणां नो ॥ चक्षुश्चाञ्जलतां यातियमराष्ट्रिगमिष्यत ॥ २१ ॥ अतिमा
 ८ त्रं लघुनि स्युर्गन्तानि गुरुक्रीणि वा ॥ यस्याकस्मात्सविज्ञो यागं तावैव स्वतालयं ॥ २२ ॥ पंकमस्य वृक्षातैर्लघुतग
 धास्तु ये नराः ॥ मिष्टानगंधाश्च ये वाति गंतारस्ते यमा लये ॥ २३ ॥ सूका ललाटमायां तिवलिना अतिवायसा ॥ ये
 वांचापिरतिर्नो स्तियातारस्ते यमा लये ॥ २४ ॥ क्षरातीसारशोफाः स्फुः यस्यान्योन्यावसादिनाः प्रक्षीणबलमांस
 स्यनसरा कश्चि किमिदं ॥ २५ ॥ स्त्री एष्य यस्य सुतरहमेहद्वैर्मिष्टैर्हितैस्तथा ॥ नशाम्यते न पानश्च तस्य मृत्यु
 रूपागतः ॥ २६ ॥ प्रवाहिकारिरः श्लेकोष्ठश्च लस्यदारुणः ॥ पिपासा बलहानिश्च तस्य मृत्यु उपागतः ॥ २७ ॥ वि
 षमैणो प्रकारेण कर्मनिश्च पुरा लुते ॥ अनित्यत्वाच्च जंतूनां जीवितं निधनं व्रजेत् ॥ २८ ॥ प्रेता हताः पिशाचाश्च

तस्यागति
 पुरुषो जवति
 ते विविध

अपत्तसु

अतिताचारशीलेन १ अतिताचारशीलेन १ अतिताचारशीलेन १
 अनित्यानिशरीराणि २ अनित्यानिशरीराणि २ अनित्यानिशरीराणि २

आपुः पून्यो नयत्तयात्

तत्तादृशस्य स्थलं च तानि चैव तादात्म्या सवर्षपर्यन्तं जिवितं
अथ स्वस्थं लक्षणा निवेद्य तादात्म्यं साहाय्य पर्यन्तं जिवितं श्वेतं सर्वं य
मरीचकं

शाब्दपत्रा
दीवत् ३

[illegible][illegible]

शरायते
विद्युत्वर
मन्त्रतरे
ता
नगाली
मन्त्रितो
नधारयति
मानमकु
यतिप
दीनद्वयवर्ष
मृदाप्रपू
तिर्ग

दीवाप्रेतसंज्ञाया ॥२॥

गन्तव्यः ५
गुणोवाशतपपूर्वकः
हृदयेतिष्ठति

काशपूर्णकृत्वा स्तःस्तः
सत्यं
इति एवमः सात्मरो मकुपेन्यः

उपलब्धोऽहं च उग्ररश्मिणा शूलोकादि
मन्त्रोपक्रमेति अपत्तिस्तारादनायेकपदका
तदुक्तौ न न गतिः पश्येत् उदासीनाङ्गौ
नौ च उपलब्धौ लो न न गतिः

स्वरेनादिनशहीनत्वामयः १

शतपथ ४

दतादीषुप्रदुर्भावः प्रेक्षेदेषी जगती सारेण पी प्रते ३ कशीनः दु कारस्तातस्यैव दुः प्रकवी ३

पार

वी। नष्टहीनविकलविलसतस्वरताविवर्णता। पुष्पप्रादुर्भावोवा। देतनखसुखशरीरेषु। यस्य चाप्सुकफमूत्र
पुरीषरेतासि। निमज्जति॥ यस्य वाट्टुमंडले निनविलसतानिरूपौ एषा लोच्यंते। स्नेहान्मक्तके सौगे इव च योना
ति। यस्य दुर्बलो नक्तदेषाति सारा न्यां पीद्यते। कासमानचक्षुष्टुष्मानि नृतः। सीराः छर्दिनक्तदेषयुक्तः। स
केन सयसुधिरो दामाहतस्वरः। श्लानिपन्नश्च मनुष्यः सूनुदुरचरणवदनः सीलो नष्टेषी पिंडी स्पर्पिडिके
रापाणि पादौ द्युसः। यस्य सर्वाङ्गे नुक्तमपराङ्गे छर्दयत्यविदग्धमति सार्थ्यते। वाज्वरकासा नृतः सश्वासा म्रिय
ते॥ बलिवद्विषयश्च वद्रुमोपतति। स्तनमुष्कस्तर्बमेढ्रो न नयीवः। प्रनष्टमेहनश्च मनुष्यः। प्राविशुष्पमानह
दयेः। आर्द्रशरीरो यस्य। लोष्टे लोष्टेना निहंति। काष्ठं वाष्टेन वा। छिन्नतपधरोष्टं वा दशति ऊर्ध्वं। बालेदि। आलुंच
ति। वाकलौ केशाश्च। देवद्विजगुरुसुहृद्दैद्यांश्च दृष्टियश्च वक्रानुवृक्कगौयहागहितं॥ स्थानगता जन्मसर्वापी
डयंति॥ यथोक्ते रोनि न्यामनिहन्यते॥ हेरावागृहदाररायनारानयाने वाहनमणिरत्नोपकरणगहितनिमित्तप्रा
दुर्भावोवेति॥ नवंति चात्र। चिकिसमानसम्पक्यो विकारो यस्य वर्द्धते। प्रसीएव समांसस्य लक्षणं तागतायुषः।

रूपकेन सु
धीरे मेव

त्रोऽयति

शरीर
शत ४
अति
चा ४५

पञ्चास्वास्तन ५

अपु ३-ताशः ५ मे छमे हन ५ जीमामन्या
द्वे संक्रोति ३ ललानिष्टि-नाति
अपादीत्यादी गतवका ४

प्राक् विप्रफादयः
जेषे वा लादिता ४
सूत्रे पालि शास्त्रे ४

III

कुष्ठरूप उपरुद्धं प्रनिर्गच्छतागमित्यनेन वा लकुष्ठि-प्रकारा न त्रयं धर्षस्वरं पञ्चममिति नामनादि निपत्तित्य सा दुत्सा हि
 तेषां प्रसृतशोणितेनोक्तानः पीयते सुरैः शोणितं यमजवेः पातयः प्रतीतिं
 मेहस्योपरुद्धं यः ३ सुत्यादिना यमजवेः

श्री.
६०

प्रमेहो हन्ति मेहिनां प्रमित्रं प्रसृतं वापिरक्तं नेत्रहृतः स्वरं पंचकर्म ग्राहती तं कुष्ठं हती
 रुकुष्ठिनां च स्त्रीरोचकशूलान्नमति प्रश्रुत शोणितं शोफाती सारसं युक्तं मशोया
 धिविनाशयेत् वातपूत्रपुरीषाणां विक्कमांशुक्रमेव वा भगं हरात प्रश्रुतं वलियस्य
 तं परिवर्तयेत् प्रसूननाभिरुषाणं रुद्धं पूत्ररुगन्वितं अशमरी सपपत्या शुसिकता श
 करो धिक्ता गर्भकोशे परासंगौ मक्षलोपो निमवृत्तिः ॥ हनुः श्रिपं मूठगर्भे धियो यथो
 कौश्यापुपद्रवौ ॥ पार्श्वसंगात्र विद्वेषा शोफाती सारपीडितं पूर्वमासां विरिक्तं
 पंचवर्तयेत् उदरा न्वितं यस्तस्मिन् विमंशश्च शोतेति पतितोपि वा शीतादि तौ तं रुद्धं सद्य
 चरेण प्रियते नरः ॥ यो हृष्टो मारुता हो हृष्टि संघातशूलवान् नित्यवकुला बोद्धव्या
 तं च रोहन्ति मा ४ नवां हि क्वाश्वासप्रपिपासा तं मूठविभ्रांतलोचनं सिततोक्षसितं

वेदप्रसूयोर्मध्येति व
 लकुष्ठिनां गः रोगा
 र इति ३
 नातस्त्रयतीका
 म्रुष्टस्य प्रशव
 नवति तदसाध्य
 इति नमिदुरस्य
 पञ्चममिति ३

मरीपदुर्भेद
 राप
 नमिमायः जन्मोपायप्रसूतः
 मक्षनः सताया रुद्धा मोक्षति
 रुद्धमिनिमेवति मजरातः
 रोगा यथोक्तपदनाम्ना रोगा
 यः प्रहृष्टमभिपोपद्रवति ॥

गुला निद्रा विरक्तस्यापि लुनरुदरेष्वयते तं वज्रियेत् रुद्धं स रक्तानी
 श्री ३ सघातं शूलः पक्ष्मपरा वायुविजातः सरलः प्रजातः स लक्ष्यः २
 रोमान्वः २

राम.
६०

ॐ ध्यात्वा धर्मतत्त्वा ता माध्या जाताः पश्चात्पदवा इति तत्र न तत्ते उवाच दयः तैः सेला अपवाः ॥ १ ॥
 तं पाति - एता वा शवा रीताः ॥ तैः कित्सतो याति शवा तैः ॥ तैः असाध्याः स्नायनं यो गे स इति ॥ २ ॥
 तत्रापि धर्मः दुःखं प्रायोः निवर्तते ॥

॥ निवर्तते महाव्यधिः सहसा यस्य हेतुना नवाहारफलं पश्यते स विनश्यति ॥ ए
 तान्परिहरूपाणि सस्य कवुध्येत पंडितः ॥ साध्या साध्यपरीक्षयां सराजः संमतो भवे
 त् ॥ ॥ इति स्वभावविप्रतिपत्तिर्द्वाविंशोऽध्यायः ॥ ॥ अथातो वारणीयमध्यायं
 व्याख्यास्यामः ॥ उपद्रवे सुयेनुष्टाव्याधयोपांत्यवायेतां ॥ सायनादिनावसता नृशृगौ
 कमनाममावातव्याधिः प्रमेहश्चकुष्ठमशोभिगांहरां अश्मरी मूलाश्च तथा चोदरम
 एषां अष्टावेते प्रकृत्यैव उश्चिकिष्यामहागाराः ॥ प्राणामांससहपश्चासश्चासत्रहमा
 शोयवमीज्वरैः ॥ मूर्च्छा तिसारद्विक्काभिः पुनश्चैते रूपदुताः ॥ वर्जनीया विशेषेणानि
 षत्तासिद्धिमिच्छताः ॥ शूनं सुप्तत्वं च प्रकंपा ध्याननिपीडितं ॥ नरं रुजातिं संतश्चावा
 तव्याधिविनाशयेत् ॥ यथाक्तोपद्रवा विहसति प्रकृतमेव वापि उका विचितं गाढं

ॐ पञ्चाक्षरं
 मधुमेहः
 अत्रैवाहं
 सहजा निर
 ताः शिथिली
 नगदं शतये
 नमः शत्रुका
 ताः स्थि मरु
 सिद्धिगताः
 सते पिठयु
 कोः ॥ तदुचि
 कित्सतोऽपत
 वमहागदाः

ॐ ध्यात्वा
 ॐ ध्यात्वा

शोय २ गात्रशून्यता

प्रमेहमिह्यादि प्रमेहस्य उपद्रवमाह २
 यद्येति अति प्रमेहप्रकारं उक्तं ॥ १ ॥
 मरुता २ ॥ २ ॥

प्राणाः आग्निमोक्षेत्यादि प्रतीतिः ॥ ३ ॥
 प्रादितः जलेवा मासे अनयो
 १ वैभाषः ॥ रुतेन मरुता ॥ ४ ॥
 अत्रोपद्रवा न मुक्तिं वापि पिली ॥ ५ ॥

ॐ ध्यात्वा
 ॐ ध्यात्वा

सेनानि रक्षा
विधाता रत्नदीपात्

४. विनाशयेत् ॥ इति त्रयविंशोऽध्यायः ॥ अथोयुक्तसेनीयमध्यायं व्याख्यासः ॥
 ५. युक्तसेनस्य वृषते परानधितिगीषतः ॥ मिषतारहाणां कार्यं यथा तदुपदेह्यते ॥ विजिगीषुः
 ६. महामात्यैर्यात्रायुक्तः प्रयत्नतः ॥ मिषतारहाणां कार्यं यथा तदुपदेह्यते ॥ विजिगीषुः स
 ७. हामात्यैर्यात्रायुक्तः प्रयत्नतः ॥ रक्षितव्यो विशेषेण विषादेव न राधिपः ॥ यथा न मुहकं क्री
 ८. यां भक्तं पवसमिधुनीं इषयत्परयस्तस्मात्तानीयाधो ॥ धयेद्विषकः ॥ तस्य लिङ्गं विक्रिमाव
 ९. कल्पस्थाने प्रवक्षते ॥ तत्रैकं कालं संयुक्तैः शेषाश्चागंतवः स्मृताः ॥ विषकवातादिमिध
 १०. द्दहीपतैर्नादिसंपुतः ॥ निर्वीत्यारहाणादेहीतथैवागंतुमृत्सुभिरितिकश्चित्पठंति ॥ शेष
 ११. गंतुमृत्सुभ्योरसमृत्सुविशारदो ॥ रक्षेतां वृषतिं नित्यं यत्ना द्वेघपुरोहितौ ॥ वृक्षावे
 १२. हांगमहांगमायुर्वेदमभाषत ॥ तस्मात्पुरोहितमतेवर्त्ततमिषगात्मवान् ॥ शंकर

पश्यान्ते नमि मध्येति मे
 प्रहृष्टं तिष्ठया वा वृष्टा दि
 देवो न तौ ध्यानादि न
 यवसिद्धाति इष्टने गा र्
 एतन्मिति गा र्नी यष्टा
 नितानि तु कल्पस्थानपु
 त्रिपादिते वा पिर
 हविना मरतिना सि
 द्धा ६ ५

रामायणः

二

नैशदिशागमनीक
नाका जे मियत मिति
यो वस्ति न्नु यो ते मा एव
ना व न्नु नाका जे सा
दिन न्नु यो वस्ति न्नु
दक्षिणोत्तर पूर्व पश्चिम
यति न्नु यो वस्ति न्नु
शेखर न्नु तदा न्नु
एव न्नु र न्नु यो वस्ति
मि दान्नु यो वस्ति

॥ अष्टांगसंख्ये ॥
॥ अष्टांगसंख्ये ॥

तैवस्तेषु न स्थितिर्भवति ॥ कावः शान्तवर्धदि प्रभापूरकः केशोपासामृतं च अन्तात्मनस्तत्त्वमिदं त्रयोपादीयारिपानिनातिजगद्भूमौ मलिनप्रकाश
त्रिरसाद्यन्नतत्रैकमा छन्दे अकाराक्षरलोचनीनाञ्च पीके होषाद्यवेष्टी मोहास्त्रादीना ममादिजातेह्यस्या पाविहीनेन गुरुतेन वृत्तिस्ततो
मोहात्मने प्रोक्तम् । न ह्यल्लक्षणमुपोषा दिवेशात्मानवात् साग्रतत्त्वतया चौरित्वेनात्मने प्रोक्तकामस्थितिविडिशूरातरपि प्रमाणजन्य
मौलेय जायते न रसात् । अपि तु व्याधिबोक्ता निहरी योजन उच्चारणरत्यन्तयो धुरी मानि पतन्त्य राज्ञी प्रादुर्बधमान इत्यादिव
अतिक्लान्ताल्लक्ष्यति रासता विज्ञापयेना ज्ञप्त्याणि सान्नापथ्यवेदमा कोक्तौ इदमेव यथा तेन वदेति ५

अविवेतिहंसा नियथासिन्नबलसुगति

अपुनरुपेक्षी २

निष्कृष्टकृष्टता ५

हीतांतरं ह्यपयतित्वरः। आवित्ताखं प्रनाम्पंतं निद्रायुक्तमतीव चाशीलाशोणितमा
संतनरं नाशयति ज्वरः। आसप्त्यनपिपासा तं हीतां ज्वरानि पीडितां विशेषेण नरं वृद्धं स
ति सारो विनाशयेत्। शुक्लाक्षमन्त्रे दृष्टारमूर्ध्नि आसति पीडितं कृच्छ्रावकुमे हंतं यद्दमा
हंतीह मानवं। आसप्त्यनपिपासा त्रविदेषग्रंथि मृष्टताः। नवति दुर्वलत्वं च गुल्मिनो
मृत्युमेव्यतः। आध्मानवस्ति हंति स्मिहं हि हिक्का नृजिह्वा तां रुजा आस समाविष्टं वि
द्विर्वाशयेन्नरं। पांडुहंतन रवोपश्चापांडुने वश्युयोनरः। पांडुसंघातदृशी वपांडुरोगी
विनश्यति। लोहितं कृद्घेघस्तु वकुशो लोहिते अगाः। रक्ता नां वदृशां दृष्टार कृपिता
विनश्यति। अवांशु वस्तु सुखो वा हीतामां सवलोनरः। जागरुको रसं देहमुन्मादेन
विनश्यति। वकुशापस्मरंतं तु प्रहीतां चलितं श्रवौ नैवां च विकृता मपस्मारे

अथोपमः। उद्धृष्टवः ३

रिश्

पांडुवर्ण पांडुसंघातः ४

सावेदोताहोती ॥ अथ यन्मसि सन्निवृत्तरेण ॥ अथ यन्मिना यद्युवे ह्येविना अधरे सोमया गादो व्ययः ॥ ननु ॥

8.

होती ॥ ६२

उहो रत्र ह्ना रोग यथा धर्पु विना धरे। वै घस्तु गुणा वा ने को स्ताये ह्येनं पिषका स्तव प्रति
 रै ही नं क र्णो धर श्वां मसि। तत्वा धिगत शास्त्रार्थो दृष्ट कर्म स्वयं कृती। लघु हस्त शुवि
 श्वाः सन्तो पस्कर भेषजः। प्रसुत्पन्न मति धी मा न्न व्यवसायी विशारदः। सत्य धर्म परो
 यश्च समिष क्वा इउ व्यतो आयुष्यार सत्त्व वा न्न मा धो द्रव्य वा न्नान्म वा न्न पि। आस्ति
 को वै घ वा क्य स्थो व्या धितः। पा इउ व्यते। प्रशस्त देश संभूतं प्रशस्ते ह निबो ह ती यु
 क्रमा त्र मन स्को तं गंध व र्ण रसान्चिनां हो ष घ्न मली निकरं म विकारी विपर्ययो ममी ह्य
 इतं कालेन भेषजं पा इउ व्यते। स्तिग्धे नु गु पुर्व ल वाः न्न व्या धित र हा र्णो वै घ वा क्य
 कृ इ श्रांतः पा इउ परि करः स्मृतः॥ ॥ इति चतुस्त्रिंशोऽध्यायः॥ ॥ अथातुरो पक्व
 मणी यम ध्यायं व्याख्यास्यामः॥ ॥ आतुरमुक्ते पक्वो रोगेन पिषता आयुरेवाहो

निधानं ॥ ३

विद्विषा ॥

नपा युष्मत्तः सांको ता जलः ॥ अमुपरी ॥
 सर्वं नो पक्वता ॥

न्यन्ते पापा दानां न्याये
 एवमावउगवान्नि
 षकुं मती धारामि
 तारे जे ॥

पारो पक्वारी सुत
 सुतावा न्नि विरुपा
 व्या धीत पा द उच्यते
 अणु यो नीत्या दित्र
 मवान्ना की पोष
 धपा द ता ह पुशस्त
 देश इति पेशी चर
 पुपा द मा ह सुजी य
 इति चतुस्त्रिंशोऽध्यायः
 ताम एव नु तः पक्व
 ६२ पाठः

अथ श्रीमद्योगादिप्रसंगेन तस्मान्नृपस्य वा सनेन सगर्जवति १
 अथ श्रीमद्योगादिप्रसंगेन तस्मान्नृपस्य वा सनेन सगर्जवति २
 अथ श्रीमद्योगादिप्रसंगेन तस्मान्नृपस्य वा सनेन सगर्जवति ३

हानिः १

की १

सर्ववर्णानां प्राणाशोधर्मकर्मणां प्रज्ञानामपि चोद्धिन्नं नृपस्य मनो नृतः ॥ पुरुषा
 तां नृपाणां च केवलं तुल्यं श्रुतिता ॥ आत्मा त्यागः समाधेयं विक्रमश्चाप्यमानुषः ॥ त
 स्मादेवमिवाभीक्ष्णं वा घनः कर्मभिः शुभैः ॥ चित्तं नृपतिर्वैद्यश्रेयांसीह न्विचक्षण
 ॥ स्कंधावारेचमहती राजगोहाहनंतरं ॥ भवेत्संनिहितो वैद्यः सर्वोपकरणान्वितः ॥ तत्र
 स्थमेन ध्वजवधशः ॥ व्याति स मुचितं ॥ उपसर्पत्य मोहो विषशान्पामया हितां चि
 त्तोत्र कुशलो न्येषु शास्त्रार्थेषु बहिष्कृतः ॥ वैद्यो ध्वज इवाहं वा नाति नृपस्य हि घृ
 तितः ॥ वैद्यो व्याधुपे स एव भेषजपरिवारकः ॥ एते पाशश्चिकित्सायाः कर्मसा
 धनहेतवः ॥ गुणावद्विभिः पादैश्चतुर्थो गुणवान्निषकः ॥ व्याधिमत्येन काले
 नमहांतमपि साधयेत् ॥ वैद्यो हि नास्त्रयः पाशश्चतुर्थो गुणावतोऽप्यपार्थक्यः ॥ उक्तं

अथ श्रीमद्योगादिप्रसंगेन तस्मान्नृपस्य वा सनेन सगर्जवति १
 अथ श्रीमद्योगादिप्रसंगेन तस्मान्नृपस्य वा सनेन सगर्जवति २

अथ श्रीमद्योगादिप्रसंगेन तस्मान्नृपस्य वा सनेन सगर्जवति ३

अथ श्रीमद्योगादिप्रसंगेन तस्मान्नृपस्य वा सनेन सगर्जवति ४

[illegible]

五

५३३

परीक्षेतासत्प्राप्यायुषी व्यावृत्तत्रिवयोद्देहवत्सत्त्वसात्म्यप्रकृतिमेषजं देशानुप-
रीक्षेतातत्र महापापी पाश्चात्त्यं दृष्ट्वा तनाग्रं दृष्ट्वा नृवहनस्कंधललाटपर्वगुलिपर्व-
धामप्रेक्षावाङ्मविस्तीर्णक्रस्तनांतरोरस्कंधं च जघामेकं श्रीवांगं मोरसत्त्वस्त्रानामि-
मनुस्रैर्वदस्तनमुपरितमहोरामसकर्ता पश्चान्मसिष्कं स्त्रानां उलिप्रसूदं तु प्रव्याविशु-
क्लमाणां हृदये शरीरं यश्चाकुप्यमाणो हृदये पुरुषं ज्ञानीषादीर्घायुः खल्वपमिति ।
तमेकीति नोपक्रमेत् । एभिः त्रैलोक्यैर्विपरीतैरल्पायुमिश्रितैर्मध्यमायुरिति नूवति वा-
चः । गूढसंधिशिरास्त्रायुः संहितंगः स्थिरोद्दिपः । शरीरज्ञानविज्ञानैः सदीर्घायुः समा-
मतः । मध्यमस्यायुषो ज्ञानमत ऊर्ध्वनिबोधमे । अधस्ताद्वैषोर्ध्वस्य तेषां स्युः व्यक्त-
प्रायताः । देवातिस्त्रोदिकावापि पादौ कलौ विमीसलौ । नासाग्रसूई च पवेदूदं तेषां

सद्यःमात्रायु

उत्तरोत्तरसूक्ष्मे शीयः द्वितीयपाठः ३
वस्त्राको हस्त्योर

अथ पत

४.
६३

अष्टतः। पस्पसुप्तस्य परममायुर्मवति सप्ततिः। तद्यन्यस्यायुषो ज्ञानमत ऊर्ध्वनि
बोधसोह स्वांनियस्य पर्वोऽणि सुमहद्वापि मेहनं तथोरस्य वती ठानि नवस्योत्पष्ट
मायती ऊर्ध्ववश्रवणोऽनीनाशा बोधाशरीरिणः। हसतो जमेतो वापि संतमां संप्रदर्श
तो प्रेक्षमेयश्च विश्रांतं सती वेतपंचविंशतिं। अथ पुनरायुषो विज्ञानार्थं मंगप्रत्ये
गप्रमाणा सारानुपदेश्या म४॥ तात्रांगान्यंतरास्य तेराधि शब्धिं वा ऊशि रांसितस्व
यवाः प्रत्यंगानीति। तत्र स्वेरंगुलोः पादगुष्ठप्रदेशिन्योऽद्यंगुलापते। प्रदेशिन्यास्तु म
ध्यानामिका कनिष्ठिका यथोन्नतं पंचमभागहीना। चतुरंगुलायते पंचांगुल
विस्तृते प्रपश्येत् तले पंचवतुरंगुलायतं विस्तृतोपास्मिः॥ वतुर्दशांगुलपरीणा हा
निपादगुल्युजं ध्यानि अष्टादशांगुला जंघानात्र परिष्ठाक्षत्रिंशोऽंगुलं एवं प

नादाक्षिप्रपदप्रोक्तं

२६३ नखविहाय ३

अष्टाजता २

अमर २.
रहना-तारलेषां स्थितिः। त्रिअथवापि लिहानि २
जलतो वीमि ३ चिन्ति-रामानस्य रोगवृद्धो गतायुषः २

नद ५

नखविहाय ५

राम.

६३

वाङ्मयः ४ को. हि. ४

८ गिर

विस्तार

३

चाशतनयापामसमावृत्तं गुलानि वृषणाविकुकरशाननाशापुटमागकर्तमूलन
 नयननयनांतराणि चतुरंगुलानि मेहनवदनांतरनामाकर्तललायकोक्तायपदेषु
 तराणि द्वादशगुलानि भविस्तारो मेहननामिहस्तनांतरमुखायासमागिवंधप्रकोष्ठस्थे
 ल्यानि। इंदुवर्षिपरिणासमपीठकूर्प्यंतरायासः षोडशगुलः। चतुर्विंशत्यगुलानि हस्त
 द्वाविंशत्यगुलानि हावुरुमगिवंधवृषणतरांतरं षोडशगुलानि तल्लेखे चतुरंगायामविस्तार
 रात्र्यगुलमूलप्रदेशिनी श्रवणाषां गंतरमध्यमंगुलिनपंचगुलैश्चैव पंचगुले प्रदेशि
 न्यनामिके साहचर्यगुलौ कनिष्ठागुलौ चतुर्विंशतिविस्तारपरिणासं मुखश्रीवाविभा
 गागुलिविस्तारानसापुटमयीशनपनवित्तापरिणासतारकोनवमहस्तारकांशो द्वा
 दशिकेशांतरमस्तकांतरमेकादशगुलमस्तकाहर्वके शोतोदशगुलः। कर्णावैष्वा

गुलान

हस्तमूलप्रति
चतुर्विंशत्यगुल
तुल्यगुलप्रति

हस्तमूल

कनिष्ठा
कोनमिश्रा. १

शषालजो नाशावास
रहता

जेनाप्रान्त ४

अवृत्ते
वा ३३

सामानानेन गुणि
उत्तागः २

अवृत्तनापंचगुलमति ५

कनिष्ठावैष्वा
कोनमिश्रा. १

प्रदेशिनामध्यामानामिका ७ निष्टिका
धययोतरेपेवमनागहीना २४

४

६४

वलय

चतुर्दशांगुलपुरुषोऽप्रपाणाविस्तीर्णास्त्रीश्रोणिः। अष्टादशांगुलविस्तीर्णावुरस्ततप्रमा
णापुरुषस्य कटीमविंशमंगुलशतं पुरुषायामिति। भवन्ति वात्रादेहध्वैरंगुलेरेष यथा
वत्परीकीर्तितः। युक्तः प्रमाणो नानेन पुमान्वायदिवंगना। दीर्घमापुरवा प्रोतिवित्तं वम
रुदृक्कृति। मध्यमं मध्यमोऽपुर्वित्तहीनैस्तथापरं। अथ साराः स्मृतिरुक्तिं प्रज्ञाशोचं सौर्यो
वैर्विकल्पाणां सिद्धिर्वेशं सत्त्वं सारं विद्यात्। सिग्धं संहतश्चेतास्थिरं तनवं वक्रतकाम
प्रज्ञं युक्तेराकृशमुत्तमवत्तं सिग्धं गंभीरस्वरं सौभाग्योपपन्नमहानेवं वसुधामसि
शिरःस्वं धृष्टं हंतं हन्वस्थितं स्थितिः। सिग्धं सूत्रं स्थिरं स्वरं रुदृक्कृतिरमायासोऽसि
मेहसा अक्षिदं गात्रं शूलस्थि संधिप्रांसोपवित्तं वप्रांसं सिग्धतां प्रनवनयनता लुजिह्व
वृषाणि पादतनुरत्नेन सुप्रसन्नमृदुत्वगोमणां च कसारं विद्यादित्येषां पूर्वप्रधानमायुः ६४

!सौभाग्यप्रदोरिति। नवतिचात्र॥ सामान्यतोऽप्रत्यंगप्रमाणादथसारतः। परीक्षायाः सनिपु
 रांभिषकसिध्यातिकर्मसु॥ व्याधिविशेषास्तुप्रागभिहिताः॥ सर्वएवेतेत्रिविधाः साध्याय
 प्याप्रत्पारव्येपाश्चातवैतानक्षयश्चिकीपरीक्षेताकिमयंसोपसर्गिकिप्राक्षेवलोन्यलक्षणा
 शति। तत्रोपसर्गिकीपूर्वोत्पन्नव्याधिं जघन्यकारिजातो व्याधिरूपसंज्ञति। सतन्मूलनएवो
 पदवसंज्ञः। प्राक्षेवलनोपुः प्रागेवोत्पन्नो व्याधिरपूर्वोऽनुपदवश्चअन्यलक्षणां योभवि
 व्यध्याधिरव्यापकः॥ सपूर्वरूपसंज्ञः तत्रसोपदवेप्रन्योन्याविरोधेनोपक्रमेतावलनवत्तमु
 पदवंवा। प्राक्षेवलनंयथास्वाअन्यलक्षणांत्वादिव्याधौप्रयतेताभवतिचात्रः। नास्तिरोगो
 विनाहोषेयस्मात्तस्माद्विचक्षणा॥ अनुक्तमपिहोषाणांलिङ्गैर्व्याधिमुपाचरेत्। प्रागभिहि
 तान्कृतवः॥ शीतेशीतप्रतीकारमुक्तेचोष्णनिवारणं कृत्वाकुर्यात्तक्रियांप्राप्ताक्रियाका

तद्येतन्

नहापयेत्। अत्रापेवाक्रियाकात्नेप्राप्तेवानकृताक्रियाक्रियाहीनातिरिक्तावासाधोष
 पिनासिद्धाति। यद्युदीयं ताशमयति नान्यं व्याधिकरोति वै। साक्रियाननुपाव्याधिहस्त्य
 नमुदीरयेत्। प्रागभिहितो गिरन्नस्य पावकः। सवतुर्विकेनवति। दोषानभिपन्नकोवि
 क्रियामापन्नस्त्रिविकेनवतिविषमोवातेनतीक्तः पितेनमंदः श्लेष्मणा। समीसर्वसा
 म्यादिति। तत्रयोयथाकालमन्नमुपयुक्तं सम्यक्पवतिसमं। याकहावित्सम्यक्
 पवतिकहाविहाध्यानशूलोहवर्त्तीतीमारजठरगौरवांत्रकृजंनप्रवाहगानि। कृत्या
 सविषमः। यः प्रभूतमप्युपयुक्तमाशुपवतिसतीक्तः। स एवाभिमानोत्पत्तिरित्यो
 साधतेमपुरुषुः प्रभूतमप्युपयुक्तमाशुतरं पवतिपाकाते एषगलतावोष्ट
 श्लेष्मदीहसतापात्रजनप्रतियः स्वान्यमप्युपयुक्तमुदरशिरोगौरवकासश्चासप्र

सेक कृद्दिगात्र साहता निहृत्वा मलता कालेन पवति समं ॥ विषमो वातजान रोगान् नृती हृत्पित्तनिमि
 त्तज्ञाशकरोत्यग्निस्तथामहोतिकारात्रकफसमवात्र ॥ तत्र समे प्ररीरक्षणां कुवीत विषमस्त्रिधनव
 लोः क्रिया विशेषेण प्रतिकुवीतातीक्ष्णमधुरस्त्रिधनोते विरेके श्वासी रक्षिसर्पिर्मिर्महक दुतिक क
 षाये र्वमनैश्चा एवमेवात्यग्रो विशेषेण माहिषे श्वासी रक्षिसर्पिर्मिर्महक दुतिक कषाये र्वमनैश्चा ॥ ज्ञा
 ठरो मगवान् अग्निश्वरो न स्पपाचकः ॥ सौ ह्मपादसाना दशनो विवेकुं नैव शक्यतां प्राणापानसमाने
 स्तुमर्वतः पवने स्त्रिभिः ॥ ध्यापते पात्यते धापिस्वे स्वे स्थाने व्यवस्थिते ॥ वयस्तु त्रिविधं वातं स्रमध्य
 वृद्धमिति ॥ तत्रो न षोडशवर्षा वान्ना ॥ ते त्रिविधाः क्षीरपाः क्षीरात्राश्च सुत्राहा इति ॥ तेषु संवसरपाः क्षीर
 पाः ॥ द्विसंवसरपाः क्षीरात्राः परतोत्रा इति ॥ षोडशमश्वोरेतौ मध्यवयः तस्य विकृत्यो वृद्धिर्पैव
 ने संपूर्णा ताहानि ॥ तत्राविंशते र्वद्विरात्रिंशौ चो वनमाचत्वारिंशः तः सर्वकालेन्द्रियवत्नवीर्यसंप्र

तेश्वयो

जोर कोव

४

६६

लीता। अत ऊर्ध्वमीषतपरीक्षानिर्धोवत समति। समने हूं ही यमाणा कत्वी दियवलवीयो आह महन्य
 हनि वली पलितवाली त्यनुष्ठं कामश्चा मप्रभृतिभिः प्रयमान सर्व क्रिया स्वसमर्थं जीर्णगारमिवाभिवृष्ट
 मवसी हंत वृद्धमाचक्षते। तत्रोत्तरोत्तरा सुवयो वस्था सूत्रोत्तरा मेषजमात्रा विशेषाः। कृतेव परिहाने
 सत्रमापेक्षनया प्रतिजुवीत। भवति वात्र॥ वात्ये विवर्द्धते श्रेष्ठा मध्यमेपि तमेव तु। भूयिष्ठं वर्द्धते
 वायुवृद्धे तद्विषयो जयेत। अग्निहारविरेके सुवालनवृद्धौ विवर्जयेत। तस्माद्येषु विकारेषु भृष्टी कुप्य
 तक्रियां शनैः॥ देहः स्थूलरूपा मध्य इति प्रागुपरिष्टः। कर्षयेद्देहये चापि सशस्थूलरूपा नरो रसतां
 चैव मध्यम्यकुवीत सततं मिषकावलमभिहितगुणं। होर्बल्यनुस्वना वदोषजगद्विनिर्गोहितं वायसा
 हलवैवता सर्वक्रिया प्रवृत्तिः। तस्माद्वलमेव प्रध्वनमाधिकारणानां। केचित्कुरंशाः प्राणवतः स्थ
 लाश्चात्यवलातराः। तस्मात्स्थिरत्वव्यापामैर्वलं वैद्यः प्रतर्कयेत्। सत्त्वं तु व्यसनाभ्युदयक्रिया

राम

६६

हे स २ जी धा ३ जी धा ४ ५ ६ ७ ८ ९ १० ११ १२
१३ १४ १५ १६ १७ १८ १९ २० २१ २२ २३ २४ २५ २६ २७ २८ २९ ३० ३१ ३२ ३३ ३४ ३५ ३६ ३७ ३८ ३९ ४० ४१ ४२ ४३ ४४ ४५ ४६ ४७ ४८ ४९ ५० ५१ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १००

५१ ५२ ५३ ५४ ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ ८५ ८६ ८७ ८८ ८९ ९० ९१ ९२ ९३ ९४ ९५ ९६ ९७ ९८ ९९ १००

प्रमरी ३

इति १००

मयकं वंदनं तथा शीतला शृंगणा सर्वप्रलेपः पित्तशोफहृत् आगंतुजेरुजने वएषएव विधिस्तत्विधिविधौ विषजे पित्तशोफिहि
तक्तया अजगं गायं गायकाली सरलया सह एषैषिका जप्यं गाय प्रशौलेप श्लेष्मशोफजित् एतेवर्गि अयोरो धूपश्चापि दित को
निवचनं तावेतिले पोयं शांतिपाति कशोफचुत् मिश्राल लवणैर्वीते कोलः शीतपयोपुतः पित्तउलः कफे सारमूत्राद्यं सस्यशां
तये मण्डल कवि पूरणं फलानि तिलसर्षपाः संक्रवः किं वृषत सी द्या सुष्मा निपावनः विरविल्वो मिको रंती वित्रको हयमारकः
कपोतक कटु आणो पुरीषाणि च दास्युणं सारद्व्याणि वा दानि सारो वा दाम्ये एंपरं प्रव्याणं पिच्छिलानां तुल्यं प्रस्तामिष पीडनैपुव
गोधूममाषाणं चूर्णं निवसमासतः शोषिलं कोटसुमनः करं वीरसुवर्चलाः शोचनानि कषायाणि वर्गस्वारम्भारिकः अजगया
जप्यं गायवा द्वालीनां गला कपा रंती कं विवकः पाठा विडुं गैला हरेणवः कटुत्रिकं पव सारो लवण निमनः शिला का सी संविचिता
रंती हरितालं सुराष्ट्रजो सोचनीनां ववर्त्तनां द्या एषेता निनिर्दिशोत् एतैरेवोष्यैः कुपील्लत्कानपिवशोचनानां कासी संकटु
रोहिणाः जाती कं हरिद्रयोः श्वेदिष्टेषु वा गेषु बुद्धि त्रैलपुता निवै अर्कोत्तमौ सुगन्धारं पिष्ट्वा सारो त्रयानपि जाती मूलं हरिद्रे
कासी संकटु रोहिणी श्वेदिष्टानि वा गानि ऊर्फी त्सं शोचने घृतं मधुरकोराज च तौ निवकी शात की तिलाः दृहती कं दृहकारी वर
रितालं मनः शिला शोचनानि वप्रयो ज्ञानितैल द्याणि शोचने कासी ससै चं कि एवैव वा योरजनी हयेशोचनां गेषु ववि मेषु चूर्णं कु
र्वी शोचनं शालसा रादि वर्गेषु परोलत्रि फला सुवैर स क्रिया विघात व्या शोचनी शोचनेषु च श्वेष्टके स र्जरसे सरले देवदा कृति सार

अनफल ३
५३
५४
५५
५६
५७
५८
५९
६०
६१
६२
६३
६४
६५
६६
६७
६८
६९
७०
७१
७२
७३
७४
७५
७६
७७
७८
७९
८०
८१
८२
८३
८४
८५
८६
८७
८८
८९
९०
९१
९२
९३
९४
९५
९६
९७
९८
९९
१००

अपामार्गः श्री फला ५ श्री १० ११ १२
सहस्र ५५

पृथ्वी आकाश रूपाः २
गते युक्ताः २

भस्म २

अतिमधुर शिथिल शित जनि या धीने एतेन शो वष्प्यते तत्र पृथिव्यं ज्ञोऽपि न भूयते

॥ मन्त्रेयानि ॥
॥ मन्त्रेयानि ॥
॥ मन्त्रेयानि ॥
॥ मन्त्रेयानि ॥
॥ मन्त्रेयानि ॥

॥ १ ॥

समायास्युण भूमिष्टाग्निश्चाशितलासत्रोद्धृताग्निग्नसस्यतुण कोमलहृत्तश्चापुक्तां बुगं एभूपिष्टा नाना वर्ण लघ्वम्ब
तीप्रतिरुलात्पवांडुवत्तप्ररोहाश्चिगुण भूमिष्टा रूक्षांसि सवर्ण निरुद्ध कोटरात्परसरत्त सप्रायाजिलगुण भूमिष्टा रूद्धी स
समाश्रयेती अयत्नरसजलासर्वतोऽसारवत्तामहापर्वतवत्त सप्रायाणामाकाशगुण भूमिष्टा तत्र के विराज्ये र्विर्गुः प्रादु
वर्षाशरद्वरक्षे संतव संतयीषे पुष्या संवत्स्रलपत्रत्व क्लीरसारफलात्पा रदीते तितनुनसम्पदं केस्मात्सोपाये यत्ताजगतसो
मनौ प्रचानि सोम्येष्टुष्टु हतानि सोमगुण भूमिष्टा यो भूमौ जातानि विरेवन प्रव्याणा रदीतं अग्निश्चाकाशगुण भूमिष्टा यो सं
शमनानि एवं वलवत्तराणि न वृत्ति सर्वाणि न वाप्यन्यत्र मयुष्टतुष्टु पिप्पली विडंगेनः सर्वा एव सत्तीराणि वीर्यवैतिते र्वानसं
प्रसावति क्रोतवत्संराणा रदीतं वृत्तिवात्र गेपालास्त्रापमावाया ये वा न्येवन वारिण मूला हाराश्च ये ते नो जेष जय क्रिरिष्यते स
वीर्यमवसायेषु प्रसावाल वणादिषु यवस्थितेन कालोस्ति तत्र सर्वे विधीयते वर्णं चरसोपेता षड्विधा भिरुच्यते तस्मान्
मिस्वनावेन वीजिनः षड्रसायुता अयत्नः किल तोयस्य रसो निश्चय निश्चितः रसम एव चायत्नो यत्नो भूमिरसात्तयेन वदयं पुराण
वाया ह्यमेवं विनिर्दिरोत् विडंगं पिप्पली सौं प्रसपिश्चाप्यतुष्टु हिते अन्यत्वनिन वंरो षष्ट ह्री पादोष वर्जितं गंगानो वयस्यो तार
करोष न खारयः क्षीरपूत्रपुरीषाणि जीर्णहारिषु संहरेत् क्षातमृज्जोऽकलक संकुचिन्यस्तत्रे ष जैत्रास्त्रायां दिशि शुबौ जेष जा
गारमिष्यते इति सुत्रस्थाने सप्तविंशोऽध्यायः ॥ ॥ अथातोऽव्यगण संग्रह एवमप्यायं व्याख्यास्यामः ॥ ॥ समासेन सप्तविं
शि ॥ विंशेनापराह पृथिवी पत्नी र

अनिष्टां तान्
पिष्टां यवमन
इत्यादि कुन
यत्त रूक्षाया
उच्यते तानि

सत्त्वानि ६

तस्मात्

मि ५ विंशेनापराह पृथिवी पत्नी र
सादिनिः

२ मरिचाने २

हस्तवदी २

मुरसकरी २

जोषर २

पतलन ३

७२ सरे ३

सायक जी ४

बीजे सार ५

सायक जी ३

स्यदन वृद्ध ५

सायक जी ५

शुभेय ५

कुफ ३

बेला ५

रक्तविदन ५ श्री सव ५

मृगवती २

रात्रद्वयगुणमवतिनघमावदारिगंधाविसारीविष्णुदेवासहदेवास्त्रंदष्टाष्टयकपर्णरातावरीमारिवाजीवकचाषभकौमहाम
 हासुपसहादहसौपुनर्नवाएरंउहंसदिरश्चिकालीअषनीवेतिविघातविरारिगंधायंगणः पित्रानिलापहः शोफुल्मोगम
 दधिनिवासकासाविनाशहत् आरग्वचमदनगोपघोटाकंजीमाणकिंकिपाटलासवीइयवसंसपएभिवकुसुंटेकंकदलीरासी
 गुडुवीवित्रकसाक्षिकंकरंजदयंपुटलाकराततिक्तकानिमुखवीवेतिआरग्वयादिरितेषुकाएशेषविषघापहंमैहकुएज्वर
 वमीकंहघोत्रणरोपणः सालसारोजकणीखदिरकंदरंजमुकभूजमेषभृंगीतिनिशवदनकुचंदनशिंशिपाशिरीषत्रशनच
 नाजुननकमालभूतीकंसकणीगरुणिकालीयकंवेतिशालसारादिरितेषुगणकुष्टविनाशनः मेहपांड्यामयहरकफमेरोवि
 शोषणः वरुणवृगलः शिष्टत्वकीरीमेषभृंगीरर्जहृतीद्वयंवेतिवरुणाद्रिगलेषकफमेरोविलापहविनिहंतिशिरः शूलगु
 ल्माभंतरविषधीरक्षीरतरुसहवरद्वयदर्मचूपादनीउंनानलंककुशाकाशास्मभेदकाश्रिमंथमोरटाकरारंमैत्रैककुंरंरिजेदीवरक
 पोतवंकाश्रुदेष्टावेतिवीरतर्कदिरितेषुगणोवातविकारनुतअम्परीशार्कराष्ट्रवृष्टायातरुजापहः। रोचसावररोधप
 लानाकुंरंनक्षत्राकंकटफलैलवैलुकंसलकीजिंगिणीकंडवाशालैकदलीवेति एषरोधारिरितुक्तोमेदः कफहुरोगणः योनि
 दोषहरसंमीवर्णविषविनाशनः अर्कलैकंकरंजद्वयनागदंतीवित्रकमयूरकभाईरास्माइंदुपुष्पीसुप्रश्नेतामहाश्चेताव
 शिकालीअलवणजेतिष्मतीतापसदृशश्चेति। अकरिकोगलेषकफहृत्कमिस्तरनः प्रतिष्ठायासविष्ठासकाराघोत्रण

दीपीचकट
सरे ३

बीजे सार ५

शोषन ५
श्वेतलोध २

राम

६

श्रीतीपक

सहीअन
ककुन
दीष्ट

वैलंनमशमी
पत्रवत्वापी

१४ सपरे ३

सूर्यवर्त ४

कंजी ३

छुरा नदा ५

दंती ३

पाषाणविद ५

चोदनी सर ५

वस्तुकेवसैर ३

वक्तुअ ५

वपाशगी ५

शोषन ३

नादेग ३

द्वितीयसंसार २

सायक जी ३

नोफर ३

मपरादिता ५

वाशालीकुपनी २

3 रागश्रीका २०११

मन्त्री ३

मन्त्री

जीरणी ४

आहुवर्धक

पञ्चमनागपुष्प नन्दनजीनने
सराणि ३

मजीठा ६ उरालजी ६ पा ६५
मि ४

तीरीपप्रकप्रपौंडरीकमृदीकातुद्धिद्विजीवंसोमधुकंवेति। काकोत्यादिरयंपित्तशोणितानिलनाशनः जीकोचं हणोदृष्यस्तस्य श्लेष्म
करस्तथा। उपकसैववशिलाजतुंगुलकासीसद्य हिंगुनितुत्यकंवेति। उपकादिकफं हंतिगणोमेदोविशोषणश्चम्परीशर्करामृचरु
गुल्मविनाशनः सारिवामककवेदनपप्रककाश्मरीफलमधूकपुष्पाणिउरीरंवेतिसारिवादिः पिपासाघ्नोरक्तपित्तहरो हृणः मृदंवेतिन
जनादिगणो घृषरक्तपित्तनिवहणः विषोपशमनोर्दहियाभ्यंतरतया। पक्षकप्रक्षोक्तफलराडिमराजादनकेतकफलशाकफलानिविफ
लावेतिपक्षकदिरिसेषगणोनिलविनाशनः सूत्ररोषहरोरुच्यः पिपासाघ्नोरुविषदः। शिथंयुवातकीपुत्रागनागपुष्पंवेदनकुवंदनमो
वरसरसोदुनकुंतीकाश्रोतोजनपप्रकेसरपोजनवल्लीदीर्घमूलवेति। अवष्टायातकीकुसुमेसमंगाकद्वेगमधुकावैत्वपेशिकारोचुरा
वररोचपलाशानेरीरुक्षपप्रकेसरालीति। गणैश्चियंयं वष्टादीपकातीसारनाशनौ। संधानीयैहितापित्तत्रणनांवापिरोषणोमयो
उवराश्रयसमश्रककुं नाशकोत्रोमजंरुक्षयपिपालमधुकरोहिणीविकूलकदेववदरीतिंदुकीसिलकीरोचुरावररोचमन्त्रातक
रुदिपिपासाराहनाशनः उत्तलकुं सुदीपलकुमुदसौगेधिककुवलपपुंडरीकाणिमधुकंवेतिउत्तलदिरयंदाहुरक्तपित्तविनाशनः
पासाविषहृद्गोर्दहिकुं हरेगणः सुप्ताहरिद्रादामहरिद्राहरातकामलकविनीतेककुष्टहैमवतीपाठाकदुरोहिणीशाईष्टातिविषा
प्रवस्तीमन्त्रातकीवित्रकश्चेतिषनुश्रादिकोनाश्रागणः श्लेष्मनिश्रदनः योनिरोषहरस्तन्यशौचनपावनस्तथा हरेतकामलकविनि
तकातिविफलाविफलावप्रपित्रघ्नीमेहजृष्टविनाशिमीवसृष्यादीपनावैवविषमज्वरनाशिनी। विषलीमरिवष्टंगवेराणिवि

जीरणी
मजीठा
नानाकेयूर
मोयने
पलाशदीप
वेति
राम
५०

बरापा ७
सुरमा ६
अवाडा
कमीतेन
३६

३३

उदनीनिम्वस्तुस्तुचरवीदनपप्रकवेतिरुषः सर्व वेतस ५ वचो ३ मजीठा ३
ज्वरान्तेतिउदुकादिस्तुदीपनः कुं ह्रिजासारोच
मश्रदिपिपासादाहनाशवः ४ कुट्टि

वेत्तर २

वेत्तर २

देवदा १०

कठु ३१ सो ३१

चन्द्रवर्ग २० यमा १९ (५५ सो ३१)

सप्तमि त जो के शिवा २ जो की १

सिती फकी शात की १

हृदय २५

इन्द्रा २०

द्वे १२

जो के शिवा २

५५ २

१५९

जाम

५५ २५

से ३३

अति ३

आख्यासुप्रामागमनकुटजजीभूतकेह्वोकुयामार्गविशेषतवेवनसर्पपिडंगपिपलीकरंजप्रमुत्रारकोविदारकुर्वारारिष्टाश्च
 गंवाविडुलवंचुजीवकश्चेतासंएणुष्पीविंवीववाभृगेवीरुवित्रामभूकविषाणिकाप्रियंगुलवणरसाजनीकेसुहीपयस्यावेसुर्धनाग
 हराणितत्रकोविदारपूर्वीणंपलानिकोविडारादीनामूलानिप्रियंगवादीनापुष्पपत्रनिर्मिसहीराणीतितृट्ठत्तपामादेतीअवंतीसप्तला
 शोखिनीविषाणिकागवाहीगिलात्रीशुक्रसुवर्णहीरीवित्रेककिणिहीकुशकाशशालितिल्वककंपिल्वकरम्पकपाटलाफगविपलान
 लिनीवमरंगुलैरंडरतीकमदावृक्षसप्तछराकेज्योतिर्वेसुचोनागहराणितत्रतिल्वकपूर्वीणमूलानितिल्वकादीनांपाटलानांतांत्व
 वःकंपिल्वकादीनांपलरजइतिपुगादीनामेरंडातानांपलानिस्तुतीकेरवचयोःपत्रंशेषाणंहीराणीकोशातकीसप्तलाशोखिनीदेवदा
 तीकारवेल्लिकानेसुमयतोनागहराणिपुष्पांस्वरसाइतिपिपलीविडंगपामार्गशिष्टसिद्धार्थकशिरीषमरिवकरवारविंवीगिरिकलि
 काकिणिहीक्याज्योतिष्मतीकरंजाकालकेलसुतातिविषाष्टंगवेरंतालीसप्तमालसुरसाजकेयुदीमेषष्टंगीमातुलंगीमुरंगीपीलुजा
 तीशालतालमधुकलाताहिंगुलवणमधुगोसंज्ञसमृज्वाणातिशिरोधरेवनानि। तत्रकरंपूर्वीणफलानिकरवारादीनामकंतिनां
 मूलानितालीसप्तमालिकेकेदाःतालीसादीनामर्जकांतानांपत्राणिइंगुदामेषष्टंगोःत्वचौमातुलंगीमुरंगीपीलुजातीनांपुष्पाणिशा
 लतालमधुकादीनांसाराःहिंगुलाक्षेनिर्मिसौलवणनिपार्थिवविशेषाः। मद्यान्यासवसंयोगाः। गोमूत्रसंज्ञसौमलाविनि। शशमना
 तउर्ध्वस्यामः। मधुहाराकुटहरिद्रावरुणमेषष्टंगीवलतिवलाकठुशत्रुगलसल्लिकिकुवेराहीवारतरुसहवराभिमंथवत्सारमे

सकु ३२

जपराहीता
सहीजन ५

राम

७९

३३९

आता नोरस

ज्याता १

रामलुरदी ५

काटा काटा १

चनवहन ३
गोधरु ५

पीतल २
शालघाति ५

कडुकं चूषणं कफमेरोघं मेहकुष्ठत्वगमयान् । निहन्वा दीपने गुल्मपीनशाग्न्यल्पतपसि आमलकं हरीतकी पिप्पली विनकश्चेति आ
मलकादि रितेषु गण सर्वज्वरापहः । वक्ष्यो दीपने रुच्यः ककारो वकनाशनः । वपुसी सनाम्नरजन रुसलो हस्तवर्णी रसो लोहमलाश्च
तिगणश्च दितेषु गरुमिहः परः । पिपासा विषहो गणो दुमे हर हेमपा लासार वतक कुटजाश्च मारक कडुपल हरिद्रा कुपुतिर्न
प्रखंडमाल तश्चि फलावेति गणः । कषायमयुरकफपित्ताग्निनाशनः । कुष्ठ रुमि हरश्चैष दुष्टत्रण विशेषनः । एभिर्लेषो वने लोश्च सपिप्पली च
पानकान् । क्षारान् यथा विकल्पाश्च क्षार पिचकारयेत् पंचमूलान्यत उध्वं च स्नायुते त्रिकेटको रुह तीक्ष्ण दृष्ट कपली विदारि गं जावेति
कनीष् । कषायनिर्गमयुरं कनीयः पंचमूलकं । वातपित्तोपशमने रुह एव लवर्धने । विन्वाग्निमंथ टिड्क पाटला काशमर्षा म हता सति कं
कफवातघ्नपाकेल घति दीपने मयुरान् । शिर्षो संवैव पंचमूलं म हस्म ते गणश्चास हरो ह्येष कफ पित्तानिलापहः । आमस्प पावनश्चैव सर्व
ज्वरविनाशनो विदारी सारिवा दय गुडु वी अजमं गार्विक रस ई त्रिकेटक सैरेय क रा ता वरी रु च तरवी इति केटक संतार कपित्तरु हरो ह्येतौ शो
फत्रय विनाशनौ सर्वमेह हरो वैवशु क्रोष विषापहौ कुराकाशन ल र्भ कांडे रुक इति नृण संज्ञः । मूत्र कोष विकारं वर कपित्त्रेत ये वैवश्च
त्यप्रयुक्तः तीरेण शीघ्रमेव विनाशयेत् त्रिवृत्तान्वितो परिवत्सामः । समासेन गणो ह्येत प्रोक्ता स्तेषां वविस्तरं ॥ किंकिस्ति तेषु वत्सामि स्ता
त्वा रोषवला वलं मवषा तिल के रे सर्वर्तुष्व न भितो ग्राहयित्वा ए हे वास्प विविधौषध सं ग्रहं समी ह्यरोष ये रां वगना यानि आन प्रयो
जयेत् एथ शिथ्या त समस्तान् वाग एवा व्यस्त सहतः । इति सौ अतस्त्र त्रय्या ने मृदुभि रो आयः ॥ ॥ अथातः शोधन रा मनीयम आयं

३१ वत्स ३

गुह्यविष्णुविफलारसेनमव्योषमूलकफजेपित्तेशात्रिवर्णकाश्रूषणयुक्तमेतत्तुडेनलिह्यात्प्रतिरुत्पन्नं प्रस्थेवतन्मूलरसैसा
 दत्वातन्मूलकल्कवरणप्रमाणं। कर्षेन्मितेसैयवनागस्त्रिपाद्यकल्की। हतमेतदद्यात्। तत्कल्कभागः समहोष्याईः ससैयवोमू
 त्रयुतश्चेपेयः समास्तृन्नागरकात्रमासुजागाईकंपूगफलंसुपुंविडंगसारोपरिवंसदार्ढ्ययोगः ससिंहजवमूत्रयुक्तः विरेचनद्रव्य
 भवंतुर्गुणैरसेनतेषामतिनक्षिष्टघातन्मूलसिद्धेनवसर्पिषाक्तंसेव्यतराज्येगुटिकीकृतंवा। गुडेनपाकाभिमुखेनिवायवर्णिकृतंम
 यमिद्विपाकंशीतंविजाताक्रमरोविमृद्ययोगावरुपावरकाप्रयोज्यारसेनतेषांपरिभाष्यसुजातद्रव्यः ससिंहजवसर्पिषिष्टः विरेचनोत्प
 रपिवैदलैः स्यादेवंविदयाहमनौषधैश्च। द्विचेत्तोः परिलिप्यकल्केत्रिभंडिजातैः प्रतिवध्यपक्वापक्वेवसम्पुष्टपुटपाकमुक्तात्वादेतत्तं
 पित्रगदीसुशीतं। सिताजगेचायकजीरीमिरीविचितासमाः। लिह्यात्तुतमधुम्यातुतदहज्वरशांतयेचार्कुराहौप्रसंपुंकेतुदृ
 णिवर्णितं सुकुमारारणं। त्रिकुपलेपरिवांशिकं। पवेत्तेहंसिताहौप्रपलाईकुडुवावितां। तद्वर्णयुतंशीतंपित्रघृतंविरेचनं। तद्व
 त्ररपामाक्षारधुठपिप्पलीमधुनासह। सर्वश्लेष्मविकाराणांश्रेष्ठमेतद्विरेचनं। वीजाद्यपय्याकाशमयंयात्रीदाडिमकोलजाततै
 लध्रष्टारुमानसफलैः सकृत्सैयवेत्। घनीभूतंतुसौगंयविचिह्नसौप्रसमन्वितंलेह्यमेतत्कफशयैः सुकुमारैर्विरेचनं। नीलीतुल्ये राम
 त्वगेलेवतैस्तृत्सहितोपलाहृणंसंतर्पणं। सौप्रपलाहंसत्रिपातजित्। तद्वत्तस्यामासिताहृणाविफलामाक्षिकैः समैः। मोदका
 सत्रिपातोर्ध्वरुपित्तज्वरापहातदृभागेध्रुवः प्रोक्तातफलातत्समातथा। क्षारहृणाविडंगानिसंयुक्तंमधुसर्पिषालिह्यागुडे

गोस्तन

तद्वत्तं
 पत्रे
 रेचनं
 नवाक्षरं

बीजपरादि
 सि ३२

मधुसर्पिषाकाश्रूषणयुक्तमेतत्तुडेनलिह्यात्

७७
 १०५

चक्रवर्तिनः

कुरुक्षेत्रे १

कुरुक्षेत्रे २

निष्पन्नस्तान् ज्ञेयान् मार्गान्

सुमूर्णं वा पूर्ववदेव क्षीरेण निवृत्तेषु क्षीरयवागूंरोमं रोषु संतानिकादयुतं रं हरितपांडुषु तक्ष्णाय संसृष्टं वा सुरां ककारो
बककासश्चासपां रोगयस्मसु पकीगतेषु मदनफलमज्जत्त उपयोगः तथा कुरुक्षेत्रफलविज्ञानं कृतं वेचनौ नाम येष एव कृत्यः
विशेषतस्तु पित्रोश्च एणिकुटजफलमुक्तेः इत्वाकुसुममूर्णं वा पूर्ववदेव क्षीरेण कासश्चासपां रोगेषु प्रयो ज्योर्गर्भव
स्यापि मदनफलमज्जत्त उपयोगः विशेषतस्तु गरुत्मा मये वा यो वा कफस्या न गते कृतं वेचनं पिप्पलीनां वमनद्रव्य कषाय परिपी
तानां वक्राः मूर्णं च सुखादिषु द्रव्यमा घ्राते वा मय निर्दोषेषु यवागूं मा कंठात्पीतवत्सु वा विद्व्या रवमन विरेचन क्षीरो विरेचन द्रव्या
णि प्रधानतमानि भवन्ति च वमनद्रव्ययोगा एणं दिगियं सप्रकीर्तिता ताम विष्य यथाधिकाल निश्चयशक्तिः यत्र गत्येव सुप्तस्य
रोषस्य सधु क्षीरेण को हि संवोचयेत्सु त्रं सिंहं किरिगु हाशयं तस्मात्संशोचनं स्वस्थकायेन परिवर्जयेत् हिने रोष प्रकोपेन किं वित्तं
शोचनेन च एणमासात्कुरुते यस्तु वमनं स विरेचनं न तस्मात्क्रमते आधिः सर्वरोगैः प्रमुच्यते कषायेः स्वरसैकल्यैः दुर्लभं विबुद्धि
मारपेय लेत्वादि योज्येषु वमना सुप कल्पयेत् ॥ इति सौम्यते सूत्रस्याने विवत्वारिंशोऽध्यायः ॥ अथातो विरेचनद्रव्य विज्ञानं
यमग्राये व्याख्यास्यामः ॥ अरुणमंत्रि वृत्तले श्रेष्ठं मूला वरेचने प्रधानतित्वं कः तस्य कफे घलेष्वपि हरीतकी तैले चैरंजं तैले
स्वरसैकारवेक्षिका सुचापयः पयस्कं इति प्राच्यसंग्रहः तेषां विज्ञानं च ह्यामियथा वदतु पूर्वशः वैरेचनद्रव्य रसानुपीतं मूलं म
हचैव तमसो रोषं मूर्णं कृतं सैव नागराद्यं मलैः विवेत्तमा रूत रोगजं ॥ इति र्षिकारै मयुरै रसै सुपैत्रे गदे क्षीरयुतं विवेद्या

तत्त्वमयव
रूप
न जीति

जोशितकी
लेक उपार
कृतवेचनीया
जोशितकी

धुनरहीति सं ५५५

मी १११५

नारु लोचः ८५ गीता मध्यम ३

पर्व १० अष्टादश
 वज्रसूत्रस्य कोपयुक्तानि मधुरलवणयुक्तानि पानितानि च तत्र शलाकुद्वयं विज्ञातं
 पर्व ३

अष्टाफल

राष्ट्रपति
 मदनकल्याण
 जी ३

कृष्णपुष्पप्रत्यङ्गपुष्पीनि कृष्णयाणामन्यतमेनोत्पन्नालोऽमधुमैश्च वपुःकां मात्रां पाययित्वा वामयेत् मदनशलाकुद्वयं
 कृष्णवर्तिलतुल्यवाहूनिर्दृष्ट्वा नानातिहरितपांशूनां कुरासूलावद्धमृजो मयप्रलिप्तानां यवतुषमाषशालादियान्यशोव
 एरात्रोषितं क्लिन्नमिन्नानां मूलानां पुलां पिप्पली रुच्यतातयेनोषयेत् तत्तासां रश्मिभुमुदिता तपश्चक्राणं सुभाजनस्थानां तत्त
 तमुष्णीमुष्णयष्टीमधुकषाये कोविदारानीनामन्यतमे वा कषाये विमृज्य रात्रिपुष्पितं मधुसैच वपुःकां मात्रीभिरभिनेदितं मुद
 मुखः प्राप्नुयं मातुरं बाधयेत् भूतसंघोऽथ अनेन मंत्रेण भिमं अ। वसुदेवाश्चिरुदेवभूतं प्राकृतिलातलाः रुषयः सौषधीयामा
 भूतसंघाद्युपांतुवः रसायनमिव धीणि ममराणां मिवा मृतं सुधेवो नमनागानां नैषज्यमिदं सुते विरोधेण श्रेष्ठज्वरप्रतिरूपायां
 तद्विद्विषं वृत्रमानेव रोषे पिप्पली वकागौरसर्षपकल्को निमेषे सलवलेः उक्षां बुधिः पुनरप्रवृत्ते येन यदा सम्पत्तां तलक्षणः म
 दनफलमूर्त्तितत्कायपरिभाषितं वमनं द्वयकषायेण मदनफलमज्जसिद्धस्य वापयसंतांनिकां सौद्रमुक्ताय वा शंभुयोगागस्त
 कृपितरुद्धाहयोः मदनफलमज्जसिद्धस्य वापयसिद्धिना वपुःपगतस्य द्युत्रे रश्मिवाक्कलप्रसेकं यदि मूर्त्तमकेषु मदन
 फलमज्जसिद्धसंघे हंवा नष्टात कवत्सेहमादाय कालिनीं तले हयेत् आतपपरिष्कृष्टं वा मदनफलमज्जसिद्धं जीवती कषा
 येण वित्रेकफस्थानं गते मदनफलमज्जसिद्धं कषायेण विप्रतीवापे कषायपोरन्तरेण संतर्पणकार्यं कफसर्वव्याधिहरं म
 दनफलमज्जसिद्धं वा मधुकपुष्पद्राक्षाकाशमर्दकषायेण कफस्यावगते। अयोगमेन रक्तपित्रे मदनफलविधानमुक्तां जीवतु

साठि ५

राम

७६

देवदीपि

तस्य स्नेहनिष्कासने ३ कनारी धनि ७ अतीवाम्ब साठि ४
 एतत्तर्पणनिबन्धकोरुति २

११
कृष्ण
चति
मदुम्भी
सप्त-जाना
बंटादिपत्नी
निश

पुनश्च ४
अथादिनिपमरहितः १ तीत्ते ३ शक्तु ४ ५

पुनश्च ४
वीर २

५७५

वसुसेता ज्ञात्वा जातर सवापितनुषो दकमादि रोतनुषां वुसौ वीरकं यो विधिरेष प्रकीर्तितः पद्मरात्रात्समरात्राच्च ते वये ये प्रकी
 र्तिने वैरे वनेषु प्रवेष्टुत वृन्मूल विधिस्ततः दंती प्रवंसोः मूलानि विनोषांत मृत्कुरांतै रपिपली सौप्रयुक्ता निधि त्रान्मुद्रसरो
 पये तैततश्चिद्विद्यातेन योजयेत् श्रेष्ठपितयोः कल्क कषायाम्मां वक्रै तैलं विपात्रु मे सपिश्चपक्षे विसर्पिकठ ह्यहस्तज्जी जमेत
 मेहगुल्मानिल श्रेष्ठ विवंचा सैल मेव वा। चतुः सैरे सक्तु शुक्रवात संरोच जा रुज दती प्रवंती मरिचक नका कपे वासकैः विष्णुने
 षजं मृदा कावित्र कै मूत्र नाधिते। सप्ताहं सपिष्ठा दूर्ण योज्यमेतद्विरे वने। निर्ले संतर्पणं सौप्रपित्र श्रेष्ठ रुजाप हं अजिर्ले पाश्चर
 कपांडु स्त्री होर निवहण। गुड स्याष्ट पलं पय्या विंशतिः स्यात्पलं पलं दती वित्रकयोः कर्षौ विष्पली विरु तो र्दरा। कृतै ताप्रमोदका
 ने कं रश मे हनि ततः। कारे तु दुस्तो यसे वी निधं त्र एल्लि मे। रोष प्राग्रहणी पांडुरोगार्थीः कुष्ट नाशनाः। व्योषं विजात के मुक्त विंशत मल के
 तथा। नवै ता निम मां शा निवित्र १४ गुण मे वेत्तु मुमु स्म दूर्लिता नीह दंती माग द्यं तथा षड्विंश स र्करा मागे इष सै च व मासिकैः। विंशति
 मस्तपित्वा तु ततः शीतां वु पाययेत्। वल्लिरुक्ल्वर वृद्ध र्दरा शोष पांडु भ्रमाप हं। निर्यंत्रण मिदं सार्व विषघ्न तु विरे वने विरु १४ क सं
 तोयं प्रशस्नः पित्त रोगिणो। मस्त सीरा नु पा नैर्विपित्र श्रेष्ठा तु रै नरैः। मस्त रुप स य मत्वा त् अघे चैव विधीयते। तित्व कस्य त्व वं वा हा
 मंत वल्क विवर्जितां। दूर्ण पित्वा तु तो नागौ तत्कषा येण गालयेत् तृतीयं पाविने तेन नागं शुद्धु नाविने। दशमूली कषा येण तद
 दत्तं प्रयोजयेत्। हरीतकाः फलं त्वस्थि विषु कं रोष वर्जिते योज्ये विरुद्विद्यानेन सर्व व्याधि निवहं रसायने परं से वं दुष्टां त्वल

५७४

राम
७८

मार्गव्यादि ६

नगुटिकास्तत्वावाप्यथ नृत्तयेत कफवातगुल्मान्नीहोदरहलीमकान्तरं सन्या नपिवाप्येत त्रिषु पायं विरेचनं चूर्णं रिपा मातृ हृदि
 लोकडीमुस्तदुरालमा चयेद्वीजत्रिफलासपिर्मसिरसां बुभिः पीते विरेचनं तद्विरुत्ताणमपि रास्पते विरेचनिक निक्कायमागच्छी
 ताश्च यो मताः दौ फलितस्य तच्च पिप्लवयावधिश्च येत तं स्नायु सिद्धं विज्ञायरीते हत्वा निचापयेत् कलसे हत संस्कारे विनज्पतु हि माहि
 मौमासाहर्षं जातरसंमासवेमद्युगं धिक् पिप्लवसावेव विधि सारमूत्रासवे च पिप्लवे विरेचनिक मूलानां काये माषात्सुमा वितात्सु यौ नास्व
 कषायेण शालीनां वापितं दुलात् अवस्तु धैकतः पिंडात् सुत्वा शुष्कान् सुहृत्तात् शालितं दुलवृत्तं तत्कषायेण साधितं तस्य पि
 प्लवभागा नृत्ती नृत्ती एव नागविमिश्रितानां मंडोदकार्ये क्कायं वदुघातत्सर्वमेकतः निदयात्कलरोतां संजातां सुसुरां पिबेत् एष
 वसुराकल्पो वमने च पिक्कितः मूलानि विवृतादीनां प्रथमस्य गणस्य च महतः पंठमूलस्य मूर्वाचा ईष्टयो रपि सुनां हेमवतं
 वैवत्रिफलादिभिश्चैव वासं हसैता निनागौ दौ कारयेदकमेतयोः कुर्यात्त्रिक्कायमेकस्मिन्नेव स्मिन् चूर्णे मेव तु हृत्ताणं स्मिन् सुनि
 क्काये प्रावयेत् वज्ररोमवान्मुक्काणामृदभृष्टानां तेषां नागाश्च यो मताः वनर्थं नागमावाप्य चूर्णं नाम त्रिक्कितं प्रक्षिप्य कलरो
 मस्य कसमस्तं तदनेतरं तेषां मेव कषायेण शीतलेन प्रयोजितं पूर्ववत्संविदया सते यंसौ वारकं हितं पूर्वोक्तं वर्गमाह सदि याव
 त्वैकमेतयोः भागं संसृज्य संघृष्य यवान्स्यात्मानविश्रयेत् अज्जुष्टं ग्पा कषायेण तमभिधिं च साधयेत् सुसिद्धं आवतयेत् तादौष
 द्वाभ्यां विवेचयेत् विमर्दसनुषात्सम्यक् ततस्तान् पूर्ववत् मितात् पूर्वोक्तौ घघभागे चूर्णं रित्वा तु पूर्ववत् तेनैव सह पूषणं पूर्वोक्तं

नदुलो
कचरो

नजीर

नीलमहीर तवान

मार्गव्यादि ६

असौ पीरका मुद्र
कांजी वर

तदंगारैर्विजोषितं अस्मादिभिः सर्ववर्णैः कालसंमितं महावृक्षपयः पीतैयवास्तुलैकता पीता विरेचयसां गुग्गुलीका
 रिका कृतानि होवासाधितः सम्यक् सुही क्षीरसितधृतैः भावितास्तुही क्षीरे पिप्पल्यो मरिचा चिताः दूर्णैः कपिलैः कंवापि तत्पीतं गुग्गु
 का द्रुते सप्रलाशं विनीदंती तद्वृक्षारग्वयोगवो मूत्रेण आत्मसमाहं सुही क्षीरे ततः परं कीर्णं तेनैव दूर्णैः नमाल्यं वससमेव वा ॥
 आघ्राया दृष्टसिं मय कृमि उकोष्टो विरीयते क्षीरत्वक्फलमूलानां विद्यानैः परिकीर्तितैः लिप्ता देरंड तैलेन कुष्ठं त्रिकटुकं मुतं
 सुखोदकं वापि वेयोगो विरेचयेत् अवेक्ष्य सम्यग्योगा दीन्यथा वदुपपन्नयेत् सिताजगं चाक्षुक्षीरी विदारी विरता समाप्रलि
 स्नात्तु सर्पिः च तद्दाहज्वरशान्तये च कर्कराक्षौ संपुक्तं तद्वृक्षैः विरुणितं गोघनं सुकुमाराणं त्वक्पत्रमरिचं च कंथवेलेहं
 सराक्षौ च पलायकडुकान्वितं तद्वृक्षैः पुतं शीतं पित्रघ्नं तद्विरेचनं तद्वृक्षैः चामासिता लिप्ताः वतसः त्रिफला त्वचं विडंगं पिप्पली
 क्षारं शाणं लिप्ताश्च विरुणितः लिप्तास्तर्पिर्मिचुन्यां वमोदकं वा गुडे नव भक्षयेत् परिहारं नेतत्तद्वृक्षैः विरेचनं गुल्मक्षी होष्टकं
 संहली मकमरो वक्तं कफवातक्षतश्चाभ्या रवाधीने तद्यो हति धृतेषु तैलेषु पयस्सु वापि मघेषु मूत्रेषु तथा रसेषु भक्ष्यात्र पाने
 शुब्रतेषु तेषु विरेचनासु ग्रामनिर्विद्वान् क्षीरं संकल्कमथो कृष्याप्यं तं वशीतं च तथैव दूर्णैः कल्पाः षडेते खलु नेषजानां यथो
 त्रं तेनैव च परिष्टाः ॥ इति सौश्रुते सूत्रस्थाने वतः वत्सारिणोऽध्यायः ॥ अथातोऽवप्रव्यविद्यानं ध्येयमध्याप्ये व्याख्यासा
 मः ॥ पानायमोतरिक्षमनिर्द्वपरसेममृते जीवनं तर्पणं शरणमाश्वासजनने अमकमपि पासावदमूर्च्छितं दानिद्रा दारुप

सि. सी. चान

राम
७६

शोचनं। हरीतकी विडंगानि सैव नागरं विरुतमरिवाणि वात्सर्वगो मूत्रेण विरेचनं। हरीतकी मूत्रादुक्तं युगफलं तथा सैव
 वंशुंगवेरं वगो मूत्रेण विरेचयेत्॥ नीलिनी फलं नूतनं नागरा मूत्रोक्तं पालीकृष्टं गुडेन मलिलेपय्यादु संपिबेत्तरः। पिप्पल्यादि
 कषायेण पिवेत् पिप्पला हरीतकी सैवोपहितः सर्वेषु योगो विरिच्यते हरीतकी मूत्रमाणा नागरेण गुडेन वा सैवोपहिता वपि
 भवत्तेषां मिदं पनी। वातातुलो मनीष्या वैदियाणां प्रसादिनी। संतर्पणं कृतं नागान् प्रायो हत्या हरीतकी शीतमा मल केरु संपि
 तमेरुः कृष्णपहं विनीतक मन्त्रं सैव कफपित्तनिवर्हणं। त्रीण्यप्यस्त्रकषायाणि सति क्लमधुराणि त्रिफला सर्वरोगघ्नी विनामघृ
 तमूर्च्छिता वयसः स्थापनं वापि कुर्वीत स्वतः सेविता। हरीतकी विद्याने नूफलामेवं प्रयोजयेत् विरेचनीयानि सर्वाणि विरोषा सुतरं
 गुलान् फलं काले समुच्य सिकतां यानि योपयेत्। सप्ताहिमानये शुष्कततो मज्जासुद्धरेत्। तैलेन याद्यं जले पक्व तिलवर्षेण प्रो
 वातस्योपयोगे बालानां यावद्वर्षाणि द्वादशानि ह्येवं उतैलेन कुष्टं त्रिकडुका चिते। सुखोदकं वा नृपिवे देशयोगो विरेचयेत्। परं
 उतैले त्रिफला क्वाथेन द्विगुणेन तु मुत्रं पीतं मया क्षीररसाभ्यां तु विरेचयेत्। बालवृद्धस्ततः सीए सुकुमारेषु योजितं। फलानां दि
 क्षिरदिष्टक्षीराणां मृणुषु श्रुतं। विरेचनानां क्षीराणां पयस्यो ह्यपरे स्मृतं। मृदुकोष्ठे शिथौ च न क्षीराणां नियोजयो योजयेद्
 ररे गुल्मे शोफां वामये गरेषु पुंजीत सुवाक्षीरं पूये मंसर सैव तं। अतः समुत्रे तद्वंति विषवत्कर्म विप्रमार्तं विजानता प्रमुक्तं तं
 महोत्तममि संचये। भिन्नसाक्षे विरोषाणां रोगान् रुतिव दुक्तान्। महत्याः पंचमूल्यास्तु च हयोश्चैकराः १५३। १५३ कषायमागव

मेत्वीर
 अस्वर्ष

वेतिकीटमूत्रपुरीषांडशवकोयप्रदूषितं। तृणपर्णैर्लिकरयुतंकलुषं विषसंयुतं। योवगाहतिवर्षसिपिवेद्वापि न वंजलं। सुवास्यामं
 तरान् रोगान् नृपाभ्यामृतं प्रमेवतु। तत्रपत्वेकरौवलकृत्तृणपत्रप्रभृतिभिश्च शशिसूर्यानि लैर्नभिस्तुष्टं गंधवर्णरसोपस
 ष्टं। तद्यापन्नविघातं। तुल्यस्पर्शरसरूपगंधविषयविषाकरोषः। षट्संज्ञं वेति तत्रवरतापैदित्यंमोक्षं रंतयाहितावस्पर्शरोषः। पंक
 सिकताशैवलवंतं वर्णितारूपरोषः। अनिष्टं गंधतागंधरोषः। अक्रूरसतासरोषः। यदुपपुक्तं तस्मात्तौ रवभूलकफप्रसेकानुपादयति स
 वीर्यरोषः। यदुपपुक्तं विराद्विषयनेविष्टं नयति वासविषाकरोषः। एते आंतरिते न संति व्यापन्नमुदकेयस्तुपिवती सप्रसाधितेश्वयपु
 पांडुरोगवत्तरोषमविपाकिताश्वासकासप्रतिश्यापशूलगुल्मोदराणि वचन्यातेन विद्याजोगव्याधुपादविरेणसः। सदा कलुषप्रसा
 धनाभितपयाकृतं कंगोमेदं कविसंयं पिमूलं सेवालवश्चाणि पुक्तामणिश्चेति। यैव विरेणं न वेति। तद्यथा फले कश्च एकसंज्ञं
 दकं मेदिकाशिकं वेतिसमं शतकराणि न वेति तद्यथा प्रवृत्तस्यापनमुदकविरेणं यद्विकृतामणं येन न वस्त्रोदराणं वालुकप्रसे
 पणं तं प्रायः पिंडसिकतालोष्टां वा निर्वीपणं प्रसारनं वकर्त्तव्यं नागवेयं त्रोटलपाटलापुष्पप्रभृतिभिश्चाधिकसंनंमिति व्यापन्नं व
 ज्यैस्सर्वं तोयं। यथाप्यनार्त्तवत्तरोषसंजननं यत्तत्तादरीताहितं हितं। निगंधयक्त्तरोषसंज्ञां सुविज्ञातलं अक्षं लघुवहं वतो
 यंगुणवदुच्यते तत्र नद्यः पश्चिमाभिमुखपण्याः लघूदकत्वान्। हवीभिमुखान् प्रशासंते। गुरुदकत्वान् दक्षिणानातिरोषलाः। माया
 रणत्वात् तत्र सप्तप्रवाः कुष्टं विषप्रमवाः कुष्टपांडुरोगं नमलयः प्रमवाः सीन्महेऽप्रमवाः क्षीपरोदराणि हिमवत्प्रमवाः हरे

वेदिका

विजिह्वि
मृनाल
श्री ५

अक्षतपीसा
जाशतहा

शिक्षावर्जितं वेति व्यापन्नं न स्पष्टं च त्रिंशत् यत्तत्स्पर्शतपतापनं चोक्तं
लो ५
मृत्तुका ५
मृत्तुका ५

वयो ५
अप्रग ५३

मृत्तुका
कलपु
लका
पटि
प्राप्तमलीका
राम
८०
यष्टमंड ३३
सिवांगः ५

प्यासी २ जङ्गी २ स्थित २

अथ यथाशक्तं वर्तते ॥

5752

अरसा १

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

शामनं एकांततः स्थितं तमेवा तदेवावनिपतितमन्यतररसमुपललभते। स्थानविशेषात् प्रादीनदसरस्तडा जवापी रूपवौ अप्र
प्रवर्णेन्द्रिदैर्कैरेदारपत्वंलादिषु अवस्थितमिति। तत्रलोकितकपिलपांडुनीलपीतश्च क्लेशवर्णिप्रदेशेषु मधुरामूलवर्णक
दुकृतिक्लृकषायणियथा संख्यमुदकानि न वंते केनापेते। तत्रूनसम्पन्न। कस्मात्। शथिव्यादीनामन्योन्यानुप्रवेशकृतः सलिल
रसो न वन्मुत्कर्षपि कर्षणं (कषायं व) तत्रगुणभूयिष्यमांश्च स्नेहवर्णं वंश्चुगुणभूयिष्यामांश्च मधुरं। तेजोगुणभूयिष्यामांश्च दुर्बलं
वायुगुणविशिष्टायां कषायं वंश्च काशगुणभूयिष्यामांश्च करसंतमस्तत्प्रधाने। आंतरिक्षालाभेतत्तेयं। तत्वांतरिक्षं वत्तुविशं। धा
रंकारेतौ धारं हेममिति। तेषां धारं प्रधानं लघुत्वात् तत्तुनद्विविधं गंगं सा मुदं व। तत्रगंगप्राश्रयुजेमासि प्रायेवर्षति देवः। तमोर्दयोर
पिपरिक्षणं कुर्वति। गाल्योदनपि उमुत्कृष्टं यविदग्धं रजननाजनोपहितं देववर्षति वहिः कुर्वति स यदि मुकुत्रस्थितस्तदा एव
भवति तदा गंगं पततीत्येवमंत्यं। वर्णन्यत्रेसिक्खप्रत्ते देवासा मुद्रमिति विंघात्। तन्नोपादेयं सा मुद्रमप्याश्रयुजेमासि गृहीतगंगा वज्र
वृत्तिगंगं पुनः प्रधानं तदुपादेयं। आश्रयुजेमासि शुविशुक्लविततपटैकदेशं तु नमपवाहर्मतलपरिभ्रष्टं श्रैर्वीशुविभिनीज
नैः गृहीतं सौवर्णं राजते मृन्मये पात्रेऽनुगुं भविद्यात्। तत्सर्वकालमुपयुं जीतं तस्यालाभे नो मंत वा काशगुणवत्कलं। तत्तुन
सप्तविधं। तद्यथा कोपनादेयं सारं संताड्यं प्राश्रवणं मौज्जिरद्वौ प्रमिति। तत्र वर्षत्वांतरिक्षं मौज्जिरद्वौ वासेवेत। महागुणत्वात्
शरदिसर्वप्रसन्नत्वात् विशेषतश्च हेमं ते सारं संताड्यं वत्सं ते कोपं प्राश्रवणं वायी प्रप्येव। प्राद्विधौ ज्यमनमिदृशंसर्व

मन्त्रालय
प्रभारी
प्रा. प्र.
१
प्रा. प्र. न.

मा ५

वसिष्ठ उवाच
आपि विष्णु
सर्वगोपाय

दिव्यपद्मसारसं
 पुरषोत्तमपारेन खेतनतजगि मूर्तिरुत्तम
 श्यादिदिसुखीकेतन्मालकृता वधुः अपि को तस्यो द्वि २

उज्जैता उपलक्षितलो देशः आविश्यः १ मासः अति -

अथ पातलिपुत्रः १

कपूरहीति ४

गन्धुषपुनिरोरोगश्लीपदगलगंडातिप्राव्यांवत्पाः परावत्पाश्चांसाः पाणिमानुप्रभवाः पथ्यावलारोगपकरा इति लघु शीघ्रवहा लघुः

प्राषाणा

स्वास्व

१०३

का. प्र. ३४

कनन

पात्र-नाडु-तप

३४

तंविरोषकृतस्त्रिगुंविपाकेमधुरं वल्यं संतर्पणं गुरुवातापहं पवित्रं वदधिगव्यं रुविप्रदं रघ्याजं कफपित्तलघुवातक्षयापहं दुर्नमिष्ठा
सकासेषु हितमग्रेष्वरीपने विपाकेमधुरं चरुं वातपित्तप्रसारणं वलासवर्धनं स्त्रिगुं तं प्राणिनाकरं युता अत्यमिसमनं चरुं विरोषार
धिमाहिषं विपाके कटुसहारे मल्लं मेघोदिकं रधि वातमशंसि कुष्ठानि रुमी न हं सुराणि चारसे पाके वमधुरं मनमिच्छं दिरोषले कोप
नं कफवातानां दुर्नमिष्ठा विरोधं रधिरीपनीयमवसुष्यं वा उवं रधिवातले रुक्षमुल्लं कषायं वकफमूत्रा पेष्यं कषायानुरसं पाके युता स्त्रिगुं
वलप्रदं स्त्रिगुं विपाकेमधुरं वल्यं संतर्पणं गुरुवसुष्यं मग्नं रोषघ्नं रधिनाम्युणो तरं लघुपाके वलासघ्नं विष्मिं संपात्रि वर्धनं कषायानुरसं
माग रधिवर्धं विवेचनं दधीतु कानि यानीह गव्या रनिष्टय कृपय कृ विज्ञेयं तेषु सर्वेषु गव्यमेव गुणो तरं वातघ्नं कफरुक्षं स्त्रिगुं रं हं
नरुपि त्रुत्तं कृपय कृ कानि लाषं व रधिमत्सु परिहृतं सतान् सीरा तु यज्जाते गुणवदधितत्त्वते वातपित्तहरं रुक्षं वा त्वग्निवलवर्धनं र
अः सरो गुरु रं चो विज्ञेयो मिलनाशनः वस्तेर्विज्ञो येन श्वापिकफपित्तविवर्धनः रधितसारं रुक्षं च ग्राहि विष्मिं वातले रीपनीयं लघुतरं स
कषायं रुविप्रदं शरद्री अवसंतेषु प्रायशो रधिगर्हितं हेमं ते शिचिरे वैव वर्षासु रधिरात्मने रुक्षं महं मस्तु लघुश्चो तो विरोषा वना अम्लं
कषायमधुरं मृदुष्यं कफवातनुत् प्रक्षारणं पीणं न वमितसा शुभं वयत् वलमावहते वापि मक्तिं रं करोति वा ॥ इति रधि वर्गः ॥ ॥ त
रं मधुं मल्लं व कषायानुरसं न सवीर्यं लघु रुक्षं मयी रीपनगर शोका तीसार ग्रहणी पांडुरोगा रीः लीह गुल्मारो वक विषम ज्वर रुक्षाद्यदि प्र
से कृष्ण लमे रश्मे आनिल हरं मधुर विपाके रूक्षं मूत्र रुक्षं प्रशमन मरु रं वा तनु न र्मधुरं स्त्रिगुं अकोपणं पित्तप्रशमनं वा अत्यम्लं वातघ्नं

॥ ५२ ॥ ५

हृ-
नारद

॥ ५२ ॥

राम

वर्या दशा युद्ध युक्त ५
स्वरुमा पत्र

दधी जल
अन्तर ५३

बालवृद्धस्तैस्त्रीणां च तद्व्यायामव्यायकृषितानां वपथ्यतमं गोक्षीरमनभिष्यदीक्षिगुं गुरुसायनं रक्तपित्तहरं नीतिं
 मधुरं रसपाकयोः जीवनीयं तथा वातपित्तघ्नं परमं स्मृतं। गम्यतुल्यगुणं त्वजं विशेषात् शोषिणे हितं। दीपनं लघुसंयुतं हि अजानामल्प
 कायत्वात् कटुतिक्तविशेषेण त्वजं बुधानां त्वया या मात्सर्वव्याधिहरं पयः। रुक्तोष्णं लघुं किं विन श्रौष्टुं स्वादुरसं लघुं शोफगु
 ल्मोदराशोघ्नं कषिऊष्टविषाघ्नं। आविकं मधुरं क्षिगुं गुरुपित्तकफघ्नं हृदयं केवलं वातेषु कासेनाभिलसं नवो महाविष्यं हि म
 धुरं माहिषं वद्विनाशनं कसश्चासपित्रनुत। माफीस्तु मधुरं स्तन्यं कषायानुरसं हि मं तस्या श्रौतयोः पथ्यं जीवनं लघुदीपनं। हस्ति
 यामधुरं वृषं कषायानुरसं गुरुः क्षिगुं स्थैर्यकरं नीतिं वक्ष्यं वलवर्द्धनं पयोभिष्यदिगुर्विमं प्रायशः परिकीर्तितं। तदेवोक्तं लघुत
 रमनभिष्यदि वैद्युतं। वर्जयित्वा श्रियस्तन्यं माममेव हितं द्वितीयं। शोले गुणवत् क्षीरं विपरीतं मत्तो न्यया। तदेवातिष्ठते पक्षं गुरुदं
 हणमुच्यते अभिष्टं गं वमस्तं विवर्णं विरसे वर्णं तवर्ज्यं सर्वं क्षीरं यद्विद्यथितं न वेत्। प्रायः प्राजातिकं क्षीरं गुरुविष्टं निश
 तलं। रात्रौ सोमगुणत्वाद् व्यायामानां वतस्तथास्वाकराभितमानां व्यायामा निलसेवनात् वातानुलोमि श्लेष्मप्रवक्ष्यं वाप
 रात्रिकं पिण्डकास्त्राशिनीनां वगुर्वभिष्यं रितं हरा। न वेष्टया वष्टादोषात् गरीमस्तं तमौषसं॥ ॥ इति क्षीरवर्गः॥ ॥ इति मधु
 रमस्तं मत्तं विनि। तत्कषायानुरसं क्षिगुं संपिनसं विषमजरातीसारारोचकमूत्रक्षयकाशपापहं वर्णं प्राणकरं मंगलं वपित्र
 श्लेष्मानिवर्द्धनं। गुरुवृषमभिष्यं हि मधुरं कफवर्द्धनं कफपित्रकरस्तस्याहमस्तं वक्ष्यं तद्विदा हि स्तुष्टं विण्मत्रमं रजा

निशकरं क्षी
 तं मधुरं गम्य
 दिनं यत्ति
 उरुहर्तृ
 रम्यं पयः
 विशाखा
 वातहरं पयः
 मधुरं रात्रौ
 सौतरी
 गुरुहर्तृ

दुग्धेन
 रसं रक्ष

सुखं

॥ ३२ ॥ सौम्यान्नाहमस्तं

सिद्धि
॥८३॥

कफापहंकषायंवक्त्रविमृशंति क्लममिकरंलघुहंतिकारेणं सपिः कफकुष्ठविषक्षमीन्सीरघृतं पुनः संयाहीरक्तपित्तप्रममूर्च्छाप्रज्ञा
मनेतेत्ररोगहितं वसर्पिणं उन्मुमयुरः सरोपोनिश्चोत्राक्षिक्रमघ्नः तत्तशरणे पूरिष्यते। भवति वात्रपुराणं तिमिरश्वासपीनसज्वरकासनुस
मूर्च्छाकुष्ठविषोमादयहापस्मारनाशनेरकारशरातं वैवत्सरावधिकं घृतं। रक्तो घ्नं कुंजमर्पिस्पात्यरत्नमुमहा घृतं। येयं महा घृतं शतैः
कफघ्नं वनाधिकैः वत्सपवित्रं मयेव विशेषेति मिरापहं सर्वभूतमहितं वैवघृतमेतत्प्रशस्यते॥ इति घृतवर्गः॥ तैलं त्वायेपमुञ्जती तणम
धुरं मधुरविषाकं च हणं पीणने च वापिस्त्वमिदं दण्डुसंरं वि काशिरुपंतव प्रसारं मेघा मर्पिमां सस्यै र्मवर्णवलकरं वत्सुषं वद्धमत्र
लेखनेति कंकषायादुरसं निलवलासक्षप्यकरं लमिघ्नमसितं पित्तजननं योनिर्गोणं लुप्रममं नगर्मात्राय विशेषं न वा तथा चित्रनि
विद्धेति घृतमथितं ततपिधितं मन्मसुदितानि दृश्यविशिष्टं दम्पितामिहतदुर्भयमृगवर्णं दृष्टं प्रभृतिषु न परिशेकाभ्यां गावगाहेषु तिलै
लंप्रशस्यते। तद्दक्षिणपुनपानेषु तस्यै कर्णमिष्टरले अत्र पानविशेषो वापि प्रयोज्यं वातशांतये एरं उतैलं मधुरं तीक्ष्णं शीपनं कटुकं पायत
रसं सूक्ष्मं श्रोतोविशोधनं स्वयं चक्षुषं मधुरविषाकं वयुस्थापनं योनिदोषशुक्रविशोधनमारोग्यमेवाकांतिस्मृतिवलकरं वातकफहरं
मद्योनागदोषहरं वातसाकुसुममूलकजीमूतकैरुक्तकहतवेद्यतार्ककं पिलुकदस्तिकर्णदृष्टीकापीलुकरं जेउदीशिथुसर्पिसु
वर्बलाविडिगजोनिष्पतीतैलानि तीक्ष्णानिलघूनिजलवायुणिकदुनि कटुविषाकानि सराणानिलकंफक्षामिकुष्ठप्रमेहशिरोरोग
हराणिवेति। वातघ्नमधुरं तेषु तौ मं तैलं वलापहं कटुपाकमवत्सुषं शिथोले गुरुपित्रलं लमिघ्नं सार्धपंतैलं कंठकुष्टापहं लघुकफमे

अथ कान्ति २

सिद्धि १

देवराजी ३

३॥

राम

पित्तकरं वेति वाते सैव योपेतं स्वाडपित्तं सशर्करं पित्तं कंकफे वापि व्योषत्तारसमायुतं तत्र नोरः क्षते रघात्रोसकालेन दुर्बलेन मूर्च्छा
 धमदाहेषु न रोगे रक्तपैतिके शीतकालेऽग्निमांसे वकफमद्यामयेषु वा मार्गविरोधे दुष्टे वा योतत्र प्रशस्यते याहिणी वातना रूक्षा दुर्ज
 रातक रूविकात कालपुनरो मंडः रूविका रक्षित कजशरुः किल हाटो निल हा पुंस्त्वनिद्रा वलप्रदः मधुरौ च हलौ चरौ तद्वत्पीपूषमो रोगो
 नवनीते पुनः सघत्सुकुमारलघु समधुरकं कषायमीषदस्ते शीतलं मे अदीपनं हृद्यं मे याहि पित्तानिल हरे चरुं मविदं हि दीपका सर्व
 एण रौर्दिताप हं गुरुं हं हं शोषं विरोधतो वालानां प्रशस्यते क्षीरोत्पुनर्नवनीते मुल्हं हृद्यं हृमा पुंयं प्रति शीतसौ कुमार्य करं वसुधं
 संयाहिरक्तपित्तनेत्ररोगहरं प्रसादनं व संतानिका पुनर्वीत घ्रीतर्पणी वल्पाधिग्या रुव्या मधुरविपा कारक पित्तप्रसादनी युर्विच विकेत
 र कषयद्यादिष्वेष्टो वर्गे भिवर्णितः विकल्पा न वशिष्टं वक्षार वीर्यत्समादिशेत् घृतं सौम्य शीतवीर्यं मृदु मधुरं मत्स्याभिष्यं दिस्नेह न सु
 दावर्त्तमादापस्मारमूलज्वरानाहवातपित्तप्रशमनं मधुरीपनं स्मृतिमतिमेवाकांतिस्वरलावण्यसौ कुमार्यजिस्नेजो वलकरं मायु
 ष्यमे अं वयस्थापनं गुरु वस्तुष्यं श्लेष्मा भिवर्द्धनं याप्याल ह्मी प्रशमनं विषहरं क्षौद्रं वेति विपा के मधुरं शीतं वातपित्तकफाप हं वस्तुष्यम
 ग्रं वलं वागं सर्पिर्गुणोत्तरं आजेष्टु तं दीपनीयं वस्तुष्यं वलवर्द्धनं काशेष्वा सेक्षमेवापि मथं पाके वतस्त्रु मधुरं रक्तपित्तं गुरुपाके कफा
 प हं वातपित्तप्रशमनं सुशीतं माहिषं स्मृतं औष्टं कडुष्टं पाके शोफरुमि विषाप हं दीपनं कफवातघ्नं कुष्टकुल्मी दराप हं पाके लघुस्त्रु
 वीर्यं वकषायं कफनाशनं दीपनं वद्वत्तं वविघादेकशं कष्टं वस्तुष्यमग्निघ्नी एणं तु सर्पिः स्वादमृतोपमं रुद्धिं करोति रेहायः लघुपाके

अध्या ३
 २५

सप्तरीय सा
 नंतर मोम

नेद प्रका
 रे ल्क ली ६

पाके लघु विचिकित्सार्थं न च पित्तप्रकोपली द्यो ३
 कफे निजे योनि दोषे शोफे के च तद्धितं ने द्रुकारः ३

१० विष्णुनाम हतिमहिम्नोत्तम ३

सूक्तमहिम्नोत्तम ३
विष्णुनाम हतिमहिम्नोत्तम ३
विष्णुनाम हतिमहिम्नोत्तम ३

विष्णुनाम हतिमहिम्नोत्तम ३

हिक्काश्वासकासातिमारुद्धित्वाहमिषप्रशमनं क्वादि विरोषोपशमनं वाततुलघुलाकफघ्नं पैष्टित्वाग्नाभुर्गल्लघुयमावाचवा
तपित्तघ्नं रुक्षदीपनलघादिगुणमुक्तं पुराणं नवमेतद्विपरीतं पैष्टिकं ग्रामरं सौंदर्यमाक्षिकं क्षत्रमेव वा आर्द्रोदानं कंदालमित्यष्टौ मधुजा
तयः॥ विरोषात्पैष्टिकं तेषु रुक्षोक्षं सविषान्नयात् वातासृक्पित्तक्षये दिवि राहिमरुक्षन्मधु पैष्टित्वात्स्वाभुयस्त्वात् ग्रामरं गुरुसंज्ञितं॥
सौंदर्यं विरोषतो ज्ञेयं शीतलं लघुलेखनं तस्मात्तु घुतरं रुक्षमाक्षिकं प्रवरस्मृतं आर्द्रादिव सर्वेषु प्रशस्तं तद्विरोषतः स्वादुपाकं गुरुहिमं पिष्टुं
रक्तपित्तजित्॥ अत्र मेहक्षमिघ्नं विषाद्यां गुणोत्तरं आर्द्रं प्रतिवस्तुष्यं कफपित्तहरं स्मृतं कषायं कडुपाकं त्वंतिक्तमवातलं औदाल
कं रुक्मिकं स्वर्णं कुष्ठविषाणं कषायमल्लसुप्तं पित्तलृत्कडुपाकिकं यदि मेहप्रशमनं मधुसं रलोद्भवं देहलं मधुनं वातिश्लेष्महरं सरमे
दः स्यौत्पापहं याहि पुराणं मति लेखनं दोषत्रयहरं पक्वमाममल्लं विरोषकत् तद्युक्तं विविधैर्योगे निरुन्नासामयारवरुनं नानाद्रव्यात्म
कत्वाच्च योगवाहिपरं मधु तनुनानाद्रव्यरसगुणविषयविषाक विरुद्धानां पुष्परसानां मक्षिकासंनवनाश्च अत्रोपचारं उल्लेखितं यते स
र्वविषान्नयतयामधु उस्मात्तु सौख्यं तन्निहंति यथाविषं तत्सौ कुमार्याश्च तथैव रोत्यान्ना नौषधीनां संनवाश्च उल्लेखितं यते विरो
षतश्च तयां तरिहो एजलेन वापि उल्लेखनं मधुसं पुक्तं वमनेष्ववधारयेत् अपाकादन्नं वस्थानात्र विरुद्धे तत्पर्ववत् मद्यमत्परतश्चामरा
मं कष्टं न विधत्ते विरुद्धो पक्वमत्वात् तत्सर्वं हंति यथाविषं॥ इति मधुवर्गः॥ रक्षवो मधुरामधुरविषाकायुरवो शिताग्निघ्ना वत्सा वृष्या मूत्रला
रक्तपित्तप्रशमना रुमिकफकराश्चेति तेवानेकया तद्यथा पौंड्रको जीरुकश्चैव वंशकः श्वेतपोतकः कांतारत्नापसेश्च काष्टेक्ष्मविपत्रकः

१८४॥

विष्णुनाम हतिमहिम्नोत्तम ३
विष्णुनाम हतिमहिम्नोत्तम ३
विष्णुनाम हतिमहिम्नोत्तम ३

राम
अप्रीत

अथवा २३ बीरा ७ अ० ५५ १

पित्त ४

137

३ (१६)

अथवा २

दोतिलहरं लेखनं कडु दीपनां रुमिधर्मिगुदीतैलं मीषत्रिकंत थालघु। कुष्टामय रुमिहरं दृष्टि शुक्रवलापहं विपाके मधुरं तैलं फे
सुं न सर्वदोष हृत्तरुपि तहरं कीती दृष्टं मव रुषं विराहिव। किरात तिलकां तिसु कक विनीत कनालिकेर लो वला सोड जावंती पिपा
त कर्बुरार सूर्यवलीत्र पुसैवी रुव कर्करु के कूष्मांड प्रतीना तैल निमधुराणि मधुरपाका निपित्र प्रशमना निशीत वीर्यणि अभिघ्नं
जिस्मृष्ट मृत्राणि अभिसादना निवेति मधुककार मर्यपलाश तैल निमधुर कषायो रीक कफाग्नि प्रशमना निवृत्त वरकन लप्तक तैले उमे मे
धुर कषायेति कानुर सेवात कफ कुष्ट मे दोमे रुमि प्रशमने उभयतो माग दोष हरे वसरल देवदारु मिंसि पां डीर सार स्रे हः तिलकडु कषाया
ष्टव्रण विशेषना रुमिकफ कुष्टा तिलहरा दृष्टु च कोरा ब्रह्म ती प्रवे तीरपा मास सला तिलिका कं पिल्ल रं विनीचे हाः कडु तिलकषाया
अथो माग दोष हरा रुमिकफ कुष्टा तिलहरा दुष्टव्रण विशेषनां वय वेति का तैलं सर्वदोष प्रशमने मीषत्रिकं कै मधि दीपनं लेख्यं मेयं
मथ्य रसा मने वर केषिका तैलं मधुर सतिशी तेषि तहर मति लप्र कोष एं स्प्रे आ भिवर्धनं वसह कर तैलं मीष तिलं मति सुगंधि वातक
फहरं रु सं मधुरं कषाय र सं व ना निपित्र करं व फलो ज्वति तैला तिया मुक्ता नीह का निव गुण रुमि व विज्ञाप फलाने वं विनिर्दिष्टोत्
पावंतं वरा स्रे हाः समासात्परि कीर्तिताः सर्व तैल गुण ज्ञेया सर्वे वा निल नाशनाः सर्वे म्पि ह तैले म्पः तिल तैलं प्र शस्यते निष्प त्रे सद्रु
णुत्वा ब्र तैल त्व मितरे ष्पि प्राप्ता उपो दकाना व वसाने दो मज्जातः गुरु स मधुरा वात घ्राः प्रांगलै क राफ मधु मधुरं कषाया नुर सं रुत
शीतल मग्नि दीपनं वल्यं स्व र्यं लघु सुकुमारं लेखनं रुघं वा जी करणं धानं रोषणं व रुषं प्रसादनं रुत मग्नि नुसारि पित्र स्रे म्प मे दो मे ह रि

श्रीलक्ष्म
सेतु ५
खं ५
आवा ७

लोथनं

घोडादिर

रुपा रादीनां लघु शीत रुपा रस्तु पि त प्रा स तु द वि काराणां कफ दूता त व ह त तै ल मे दो म ज्जा द्रे य थो त र्छ रु वि पा आ ल त ह रा च्च र्छ तै ल व र्छ